इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखन : चुनौतियाँ और संभावनाएँ

राष्ट्रीय संगोष्ठी

(3-4 नवम्बर 2001)

–: उत्प्रेरण तथा सहयोग :–

राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्
विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय
भारत सरकार, नई दिल्ली

एवम्

उच्च तथा माध्यमिक शिक्षा विभाग
मानव संसाधन विकास मंत्रालय
भारत सरकार, नई दिल्ली

–: सम्पादक :–

डॉ० शिवगोपाल मिश्र
प्रधानमंत्री
विज्ञान परिषद् प्रयाग

–: आयोजक एवं प्रकाशक :–

विज्ञान परिषद प्रयाग

प्रकाशक
विज्ञान परिषद् प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग,
इलाहाबाद–211002

कम्प्यूटर कम्पोजिंग
शादाब खालिद
79/65, सब्ज़ी मण्डी, इलाहाबाद
फोन : 651264

मुखपृष्ठ तथा चित्र सज्जा
चन्द्रा आर्ट
20/17, तालाब नवल राय
नया बैरहना, इलाहाबाद–3
फोन : 602687

मुद्रक
नागरी प्रेस
91/186, अलोपी बाग, इलाहाबाद
फोन : 502935, 500068

इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखन : चुनौतियाँ और संभावनाएँ

यह राष्ट्रीय संगोष्ठी

पिछले कुछ वर्षों में सूचना प्रौद्योगिकी का जिस तीव्रता से विकास हुआ है उसके फलस्वरूप इंटरनेट द्वारा जानकारियाँ सुलभ होती जा रही हैं। इस तकनीकी प्रगति से एक समस्या यह भी सामने आई कि इंटरनेट की मुख्य भाषा अंग्रेजी होने के कारण हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं के लेखन पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। इस कारण हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं में छपने वाली विज्ञान पत्रिकाओं के सामने अस्तित्व का संकट भी उपस्थित होने की संभावना है।

आज इस बात की अत्यधिक आवश्यकता अनुभव की जा रही है कि इंटरनेट के लिए क्षेत्रीय भाषाओं में विज्ञान लेखन करके उन्हें विभिन्न वेबसाइटों पर उपलब्ध कराया जाए। इसके अतिरिक्त विभिन्न भारतीय भाषाओं में प्रकाशित होने वाली विज्ञान पत्रिकाओं को भी चुनौतियों का सामना करने के लिए सक्षम बनाया जाए।

इन्हीं विचारों को मूर्त रूप देने के लिए विज्ञान परिषद् प्रयाग ने उच्च एवं माध्यमिक शिक्षा विभाग मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार तथा राष्ट्रीय एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्, विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय, भारत सरकार के पास 'इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखन : चुनौतियाँ और संभावनाएँ' विषय पर द्विदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित करने के लिए आर्थिक अनुदान हेतु आवेदन भेजा गया।

हमें प्रसन्नता हुई जब दोनों विभागों से क्रमशः 1 लाख रुपये तथा 1 लाख पैंतीस हजार रुपये अनुदान की प्राप्ति हुई।

हमने तमाम विज्ञान लेखकों को इस संगोष्ठी में भाग लेने के लिए आमन्त्रित किया और हमें बताते हुए हर्ष हो रहा है है कि देश भर के लगभग 40 लेखकों ने इसमें भाग लेने की अनुमति भेजी।

अन्ततः 3 तथा 4 नवम्बर 2001 को द्विदिवसीय संगोष्ठी आयोजित की गई। जिसमें 4 सत्रों में 40 निबन्ध पढ़े गए और उन पर विचार विमर्श हुआ।

सम्भवतः यह इस प्रकार की पहली संगोष्ठी है जिसमें एक स्वर से 7 प्रस्ताव पारित करते हुए लेखकों ने लोकप्रिय विज्ञान लेखन के सभी पहलुओं पर अपनी चिन्ता प्रकट की और देश की

जनता को आश्वस्त किया कि विज्ञान लेखक अपने उत्तरदायित्वों के प्रति सजग हैं अतः इक्कीसवीं सदी की चुनौतियों का सामना करने में उन्हें कोई कठिनाई नहीं होगी। इसके लिए एक मंच से सुविचारित कार्यक्रम के अधीन विज्ञान लेखन को दिशा निर्देश देना होगा।

इस संगोष्ठी में पठित निबन्धों के प्रकाशन के प्रति वचनबद्धता के फलस्वरूप हम उन्हें सम्पादित रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं। आशा है इनमें व्यक्त विचार भावी मार्गदर्शन में सहायक होंगे।

शिवगोपाल मिश्र

अध्यक्ष, आयोजन समिति

एवं

प्रधानमंत्री, विज्ञान परिषद् प्रयाग

द्विदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी : एक रिपोर्ट

विज्ञान लेखन के भविष्य पर गंभीर मंथन

देवव्रत द्विवेदी

इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखन का स्वरूप कैसा होगा, लेखकों को किन समस्याओं और चुनौतियों का सामना करना होगा और विज्ञान समाज को किस दिशा में ले जायेगा– इन सभी प्रश्नों का समाधान खोजने के लिये देश के विभिन्न भागों से आये हुये तीन दर्जन प्रतिभागियों ने विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा 3–4 नवम्बर 2001 को आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी, **इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखन : चुनौतियाँ और संभावनाएँ** में अपने विचार व्यक्त किये। इनके अतिरिक्त 5 दर्जन स्थानीय विज्ञान लेखकों ने भी संगोष्ठी में भाग लिया।

विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा इस संगोष्ठी का आयोजन राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्, विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय, नई दिल्ली तथा उच्च एवं माध्यमिक शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, नई दिल्ली के उत्प्रेरण एवं समर्थन से किया गया।

संगोष्ठी का उद्‌घाटन सुप्रसिद्ध भौतिक विज्ञानी, गोरखपुर और इन्दौर विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति डॉ0 देवेन्द्र शर्मा जी के कर कमलों से हुआ। इस अवसर पर डॉ0 शर्मा ने कहा कि, विज्ञान का परिदृश्य तेजी से बदल रहा है, ऐसे में भारतीय भाषाओं में विज्ञान लेखन की महती आवश्यकता है और इसके लिये हमें अपनी वैज्ञानिक शब्दावली को समृद्ध करना भी जरूरी है। किसी भी भाषा के विकास के लिये यह महत्त्वपूर्ण है कि इसमें निरंतर नये शब्दों का समावेश होता रहे।

उद्‌घाटन समारोह के अध्यक्ष तथा विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका के मुख्य सम्पादक डॉ0 चंद्रिका प्रसाद ने कहा कि विज्ञान लोकप्रियकरण की दिशा में हमने काफी प्रगति की है। विज्ञान की शिक्षा का माध्यम अब अंग्रेजी भाषा की जगह हिन्दी हो गई है।

इस अवसर पर राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् के प्रधान वैज्ञानिक अधिकारी डॉ0 मनोज पटेरिया ने कहा कि शोध संस्थाओं में कार्य कर रहे वैज्ञानिकों की भाषा जनसामान्य की भाषा से भिन्न होती है जिसके कारण विज्ञान लेखकों की भूमिका आज अत्यंत महत्वपूर्ण है।

कार्यक्रम का आरम्भ डॉ0 प्रभाकर द्विवेदी 'प्रभामाल' द्वारा प्रस्तुत सरस्वती वन्दना से हुआ। मुख्य अतिथि तथा अध्यक्ष द्वारा सरस्वती की प्रतिमा पर माल्यार्पण एवं दीप प्रज्ज्वलन के पश्चात् मंचासीन अतिथियों डॉ0 देवेन्द्र शर्मा, डॉ0 चन्द्रिका प्रसाद, डॉ0 के.बी. पाण्डेय, डॉ0 वी.डी. गुप्ता, डॉ0 एन.के. सान्याल, डॉ0 एम. डी. तिवारी, डॉ0 मनोज पटेरिया, डॉ0 एच.पी. तिवारी आदि का माल्यार्पण द्वारा स्वागत किया गया। तत्पश्चात् विज्ञान परिषद् प्रयाग के प्रधानमंत्री डॉ0 शिवगोपाल मिश्र ने अतिथियों का स्वागत करते हुये संगोष्ठी के आयोजन के उद्‌देश्य पर प्रकाश डाला।

इस अवसर पर विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा डॉ0 कृष्ण विहारी पाण्डेय, डॉ0 विष्णु दत्त शर्मा, डॉ0 आर.

सी. शर्मा, डॉ0 आर.एन. भार्गव तथा श्री रामेश्वर परिहार को 'विज्ञान पार्षद' की उपाधि से सम्मानित किया गया।

इसके अतिरिक्त डॉ0 डी.डी. ओझा तथा श्री राधाकान्त अंथवाल को 'विज्ञान प्रदीप' की उपाधि देकर सम्मानित किया गया।

कार्यक्रम के अंत में विज्ञान परिषद् प्रयाग के उप सभापति डॉ0 हनुमान प्रसाद तिवारी ने सभी के प्रति धन्यवाद ज्ञापित किया। उद्घाटन समारोह का संचालन संगोष्ठी के संयोजक श्री प्रेमचंद्र श्रीवास्तव ने किया।

संगोष्ठी के विभिन्न सत्रों में वक्ताओं ने जिन विषयों पर अपने विचार व्यक्त किये वे इस प्रकार हैं:--

1. विभिन्न भारतीय भाषाओं में लोकप्रिय विज्ञान लेखन का भविष्य।
2. विभिन्न वैज्ञानिक क्रांतियों का लोकप्रिय विज्ञान लेखन पर प्रभाव।
3. इक्कीसवीं सदी के लिये विज्ञान लेखकों की आवश्यकतायें।
4. विभिन्न भारतीय भाषाओं के विज्ञान साहित्य का अन्य भाषाओं में अनुवाद।
5. विभिन्न विधाओं में विज्ञान लेखन।

संगोष्ठी के उदघाटन के पश्चात् प्रथम सत्र की अध्यक्षता करते हुये इलाहाबाद और गोरखपुर विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति प्रो0 वी.डी. गुप्ता (लखनऊ) ने जैव प्रौद्योगिकी के विस्तार तथा मानव क्लोनिंग के कारण उत्पन्न सामाजिक समस्याओं के प्रति सजग रहने पर बल दिया। इस सत्र में जिन विद्वानों ने विचार व्यक्त किये वे इस प्रकार हैं– डॉ0 विनोद कुमार ललोरिया, डॉ0 दिनेश मणि, श्री दर्शनानन्द, डॉ0 प्रभाकर द्विवेदी, डॉ0 सुरेन्द्र नाथ, डॉ0 राजेश्वर प्रसाद (सभी इलाहाबाद), डॉ0 प्रिय कुमार चौबे, डॉ0 अरविंद मिश्रा (दोनों वाराणसी)। इस सत्र की रिपोर्टिंग डॉ0 हेमचन्द्र जोशी (नई दिल्ली) ने की।

द्वितीय सत्र की अध्यक्षता करते हुये 'विज्ञान प्रसार' नई दिल्ली के प्रधान वैज्ञानिक अधिकारी डॉ0 सुबोध महन्ती ने विज्ञान संचार के विभिन्न आयामों के बारे में बताते हुये अच्छी पुस्तकों की आवश्यकता तथा विज्ञान लेखकों को समग्र दृष्टिकोण अपनाने पर बल दिया।

इस सत्र में डॉ0 राजीव रंजन उपाध्याय (फैजाबाद), रविन्द्र खरे (जबलपुर), डॉ0 विष्णु दत्त शर्मा (गाजियाबाद), डॉ0 हेमचन्द्र जोशी (नई दिल्ली), श्री उमेश शुक्ला तथा देवव्रत द्विवेदी (इलाहाबाद) ने भी विचार प्रकट किये। इस सत्र की रिपोर्टिंग डॉ0 डी.डी. ओझा (जोधपुर) ने की।

दूसरे दिन तृतीय सत्र की अध्यक्षता करते हुये राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् नई दिल्ली के प्रधान वैज्ञानिक अधिकारी डॉ0 मनोज पटेरिया ने कहा कि विज्ञान लोकप्रियकरण के लिये स्थानीय समस्याओं को स्थानीय स्तर पर उठाने की आवश्यकता है। विज्ञान संचार को अंतिम आदमी तक ले जाने के लिये सरल अभिव्यक्ति आज की जरूरत है।

इस सत्र में डॉ0 श्रवण कुमार तिवारी (वाराणसी), डॉ0 सुबोध महन्ती (नई दिल्ली), डॉ0 रामचन्द्र मिश्रा (मुंबई), डा रामहरि सिंह (नई दिल्ली), डॉ0 सुभाष चन्द्र लखेड़ा (नई दिल्ली), डॉ0 के.के. भूटानी, श्री विजय चितौरी, डॉ0 सुप्रभात मुखर्जी (सभी इलाहाबाद), मोहम्मद खलील (नई दिल्ली), श्री शुकदेव प्रसाद, श्री एम. पी. यादव, डॉ0 गोपाल पाण्डेय (सभी इलाहाबाद) ने अपने विचार प्रस्तुत किये। इस सत्र की रिपोर्टिंग श्री दर्शनानन्द ने की।

संगोष्ठी के अंतिम सत्र की अध्यक्षता श्री राधाकान्त अंथवाल (नई दिल्ली) ने तथा रिपोर्टिंग डॉ0 राम हरि सिंह (नई दिल्ली) ने की। इस सत्र में डॉ0 डी.डी. ओझा (जोधपुर), डॉ0 रजनीकांत (नई दिल्ली), डॉ0 आर. सी. शर्मा (जोधपुर), डॉ0 आर.एन. भार्गव (जोधपुर), कुमारी हेमलता पंत (इलाहाबाद), डॉ0 प्रभाशंकर शुक्ल (चित्रकूट), डॉ0 उमाशंकर मिश्र (चित्रकूट), मुहम्मद इशरत खान (इलाहाबाद), डॉ0 पवन सिरोठिया (चित्रकूट), डॉ0 पृथ्वीनाथ पाण्डेय, डॉ0 शीतलाप्रसाद वर्मा, श्री राजेन्द्र प्रसाद, प्रो0 आर.सी. गुप्ता (सभी इलाहाबाद) ने अपने विचार रखे।

समायाभाव के कारण जो प्रतिभागी अपनी बात न रख सके उनमें श्री सुनील कुमार पाण्डेय (संत कबीर नगर), श्री सत्यव्रत द्विवेदी (मिर्जापुर), श्री अनिल तिवारी (देवरिया), श्री शैलेन्द्र मिश्रा (फैजाबाद), श्री प्रमोद मिश्र, श्री बलराम यादव तथा अन्य कई स्थानीय प्रतिभागी शामिल रहे।

संगोष्ठी के समापन समारोह में विज्ञान प्रसार नई दिल्ली के डॉ0 सुबोध महन्ती तथा राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् नई दिल्ली के डॉ0 मनोज पटेरिया ने अपने–अपने संगठनों की गतिविधियों तथा परियोजनाओं के बारे में विस्तार से चर्चा की। श्री सुभाष लखेड़ा (नई दिल्ली) ने संगोष्ठी की संस्तुतियाँ प्रस्तुत कीं जिनका सभी ने अनुमोदन किया।

अध्यक्ष डॉ0 देवेन्द्र शर्मा ने संगोष्ठी के सफल आयोजन हेतु विज्ञान परिषद् को बधाई दी तथा विज्ञान लेखकों का आह्वान किया कि इक्कीसवीं सदी की चुनौतियाँ पिछली सदी से अलग और बढ़कर हैं जिनके लिये लेखकों को सजग रहना होगा। अन्त में विज्ञान परिषद् प्रयाग के प्रधानमंत्री डॉ0 शिवगोपाल मिश्र ने सभी आगन्तुक अतिथियों को प्रति आभार व्यक्त किया। समापन समारोह का भी संचालन संगोष्ठी के संयोजक श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव ने किया।

3 नवम्बर की रात्रि में सभी प्रतिभागियों के मनोरंजनार्थ एक सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन विज्ञान परिषद् सभागार में किया गया जिसमें जिला सूचना विभाग के युवा जादूगर श्री नागेन्द्र प्रताप सिंह ने जादू का रोचक कार्यक्रम प्रस्तुत किया जिसकी सभी ने सराहना की।

इस संगोष्ठी के सफल आयोजन हेतु परिषद् के प्रधानमंत्री डॉ0 शिवगोपाल मिश्र के कुशल मार्ग निर्देशन में परिषद् के जिन पदाधिकारियों एवं कार्यकर्त्ताओं ने अथक परिश्रम किया, वे हैं– संगोष्ठी के संयोजक श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव, सह–संयोजक डॉ0 अशोक कुमार गुप्ता, डॉ0 सुनील कुमार पाण्डेय, सर्वश्री देवव्रत द्विवेदी, उमेश कुमार शुक्ल, प्रमोद कुमार मिश्रा, चन्द्रभान सिंह, एम.पी. यादव, शादाब खालिद, बलराम यादव, नरेन्द्र कुमार सिंह यादव, रजनीश सिंह, राजाराम, पन्नालाल। ये सभी साधुवाद के पात्र हैं।

शोध सहायक
विज्ञान परिषद् प्रयाग

राष्ट्रीय संगोष्ठी का उद्घाटन करते डॉ० देवेन्द्र शर्मा

➤ संगोष्ठी में आए अतिथियों का स्वागत करते हुए विज्ञान परिषद् के प्रधानमंत्री डॉ० शिवगोपाल मिश्र

➢ संगोष्ठी के उद्‌घाटन सत्र को संबोधित करते हुए राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्, नई दिल्ली के प्रधान वैज्ञानिक अधिकारी डॉ० मनोज पटैरिया
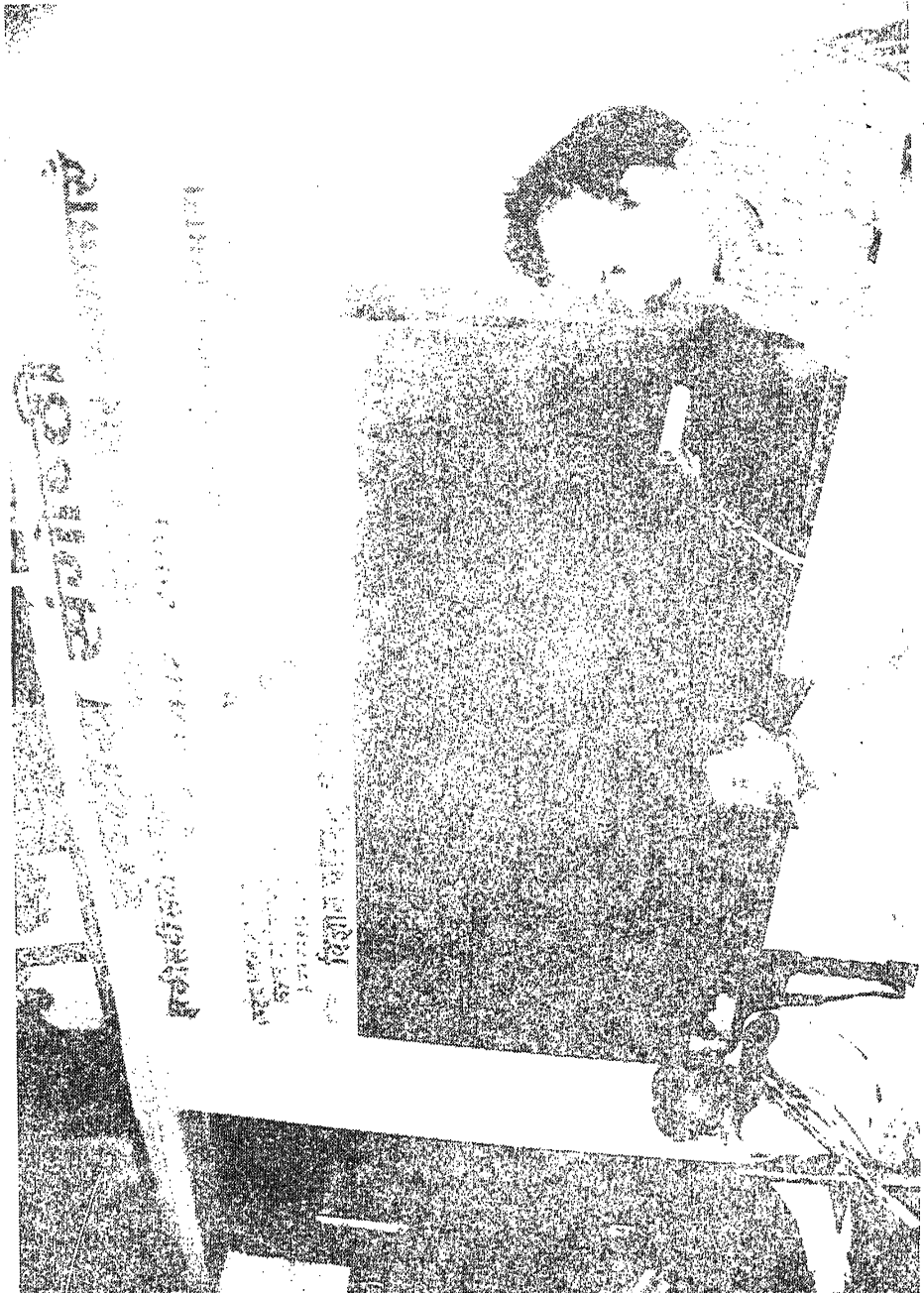
➢ संगोष्ठी के एक सत्र में व्याख्यान देते हुए विज्ञान प्रसार, नई दिल्ली के प्रधान वैज्ञानिक अधिकारी डॉ० सुबोध महन्ती
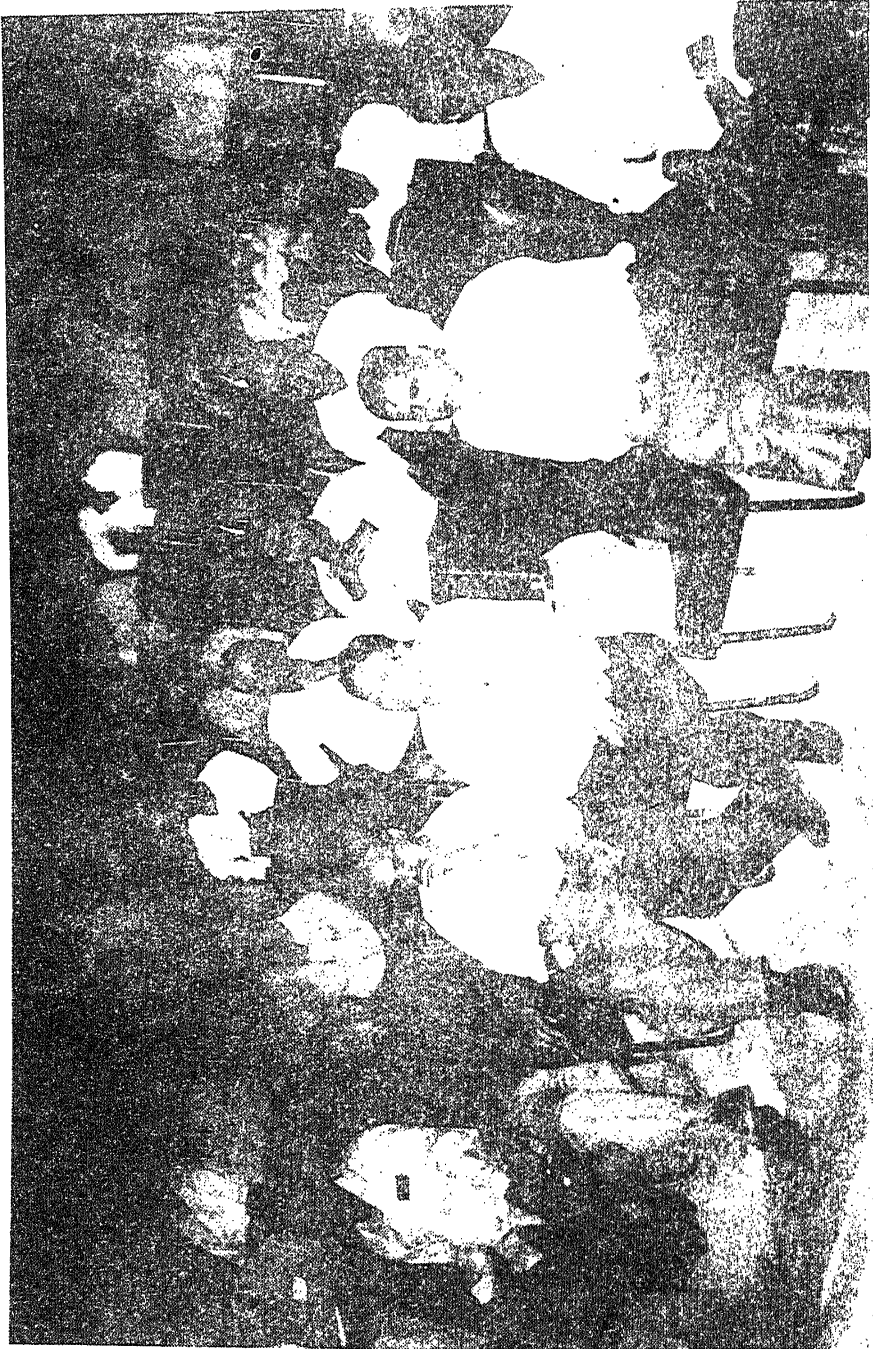
➢ संगोष्ठी में भाग लेने आए प्रतिभागियों का एक समूह

राष्ट्रीय संगोष्ठी

"इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखन : चुनौतियाँ और संभावनाएँ"

कार्यक्रम

3 नवम्बर 2001

पंजीकरण	पूर्वाह्न 9.00 से 10.00
उद्घाटन	पूर्वाह्न 10.00 से 11.30
जलपान	पूर्वाह्न 11.30 से 12.00
प्रथम सत्र	अपराह्न 12.00 से 2.00
भोजन	अपराह्न 2.00 से 3.00
द्वितीय सत्र	अपराह्न 3.00 से 5.30
सांस्कृतिक कार्यक्रम	रात्रि 7.00 से 8.30
भोजन	रात्रि 8.30

4 नवम्बर 2001

तृतीय सत्र	पूर्वाह्न 9.00 से 11.30
चतुर्थ सत्र	पूर्वाह्न 11.30 से 1.30
भोजन	अपराह्न 1.30 से 2.30
पंचम सत्र	अपराह्न 2.30 से 4.30
समापन	सायंकाल 4.30 से 5.00
जलपान	....

आयोजन समिति

प्रधान संरक्षक	डॉ० (श्रीमती) मंजु शर्मा सभापति, विज्ञान परिषद् प्रयाग
संरक्षक	डॉ० हनुमान प्रसाद तिवारी डॉ० एम०डी० तिवारी डॉ० के०बी० पाण्डेय डॉ० के०एन० सान्याल डॉ० जी०के० मेहता
अध्यक्ष	डॉ० शिवगोपाल मिश्र प्रधानमंत्री, विज्ञान परिषद् प्रयाग
संयोजक	श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव
सह संयोजक	डॉ० अशोक कुमार गुप्त
कार्यकारिणी सदस्य	डॉ० पूर्ण चन्द्र गुप्त डॉ० चन्द्रिका प्रसाद डॉ० एच०सी० खरे डॉ० जे०एस० चौहान डॉ० एम०एम० राय डॉ० ईश्वर चन्द्र शुक्ल डॉ० प्रभाकर द्विवेदी डॉ० जी०एल० तिवारी डॉ० (श्रीमती) कृष्णा मिश्रा श्री दर्शनानन्द डॉ० राजकुमार दुबे डॉ० दिनेश मणि डॉ० के०एन० उत्तम श्री विजय चितौरी श्री डी०एम० श्रीवास्तव श्री विभूति मिश्र डॉ० गयाचरण त्रिपाठी श्री हरिमोहन मालवीय

स्वागत समिति

डॉ० सुनील कुमार पाण्डेय
श्री देवव्रत द्विवेदी
डॉ० अजय कुमार वर्मा
डॉ० गोपाल पाण्डेय
श्री चन्द्रभान सिंह
श्री उमेश कुमार शुक्ल
श्री प्रमोद कुमार मिश्र
श्री एम०पी० यादव
श्री शादाब खालिद
श्री बलराम यादव
श्री नरेन्द्र प्रताप सिंह यादव
सर्वश्री राजाराम, पन्नालाल, मनोज

प्रतिभागियों की सूची

वाह्य प्रतिभागी

1.	डॉ० देवेन्द्र शर्मा	लखनऊ
2.	डॉ० सुबोध महन्ती	नई दिल्ली
3.	डॉ० श्रवण कुमार तिवारी	वाराणसी
4.	डॉ० मनोज पटेरिया	नई दिल्ली
5.	डॉ० डी०डी० ओझा	जोधपुर
6.	श्री राधा कांत अंथवाल	नई दिल्ली
7.	डॉ० रामचन्द्र मिश्र	मुम्बई
8.	डॉ० अरविन्द मिश्र	वाराणसी
9.	डॉ० राजीव रंजन उपाध्याय	फैजाबाद
10.	डॉ० रमेश चन्द्र तिवारी	वाराणसी
11.	श्री सुभाष लखेड़ा	नई दिल्ली
12.	डॉ० सुनील कुमार पाण्डेय	बस्ती
13.	डॉ० हेमचन्द्र जोशी	नई दिल्ली
14.	डॉ० वी०डी० गुप्ता	लखनऊ
15.	डॉ० पवन सिरोठिया	चित्रकूट
16.	डॉ० उमाशंकर मिश्र	चित्रकूट
17.	डॉ० रामेश्वर परिहार	जोधपुर
18.	श्री आर०सी० शर्मा	जोधपुर
19.	श्री आर०एन० भार्गव	जोधपुर
20.	डॉ० विष्णु दत्त शर्मा	गाजियाबाद
21.	डॉ० रजनीकांत	नई दिल्ली
22.	श्री रवीन्द्र खरे	जबलपुर
23.	डॉ० प्रभाशंकर शुक्ला	चित्रकूट
24.	डॉ० राम हरि सिंह	दिल्ली
25.	डॉ० प्रिय कुमार चौबे	वाराणसी
26.	श्री शैलेन्द्र मिश्र	फैजाबाद
27.	श्री सत्यव्रत द्विवेदी	मीरजापुर
28.	श्री विजय प्रकाश गुप्ता	लखनऊ
29.	डॉ० पद्माकर पाण्डेय	लखनऊ
30.	श्री अनिल कुमार तिवारी	देवरिया
31.	कु० शशि प्रभा दुबे	देवरिया
32.	श्री खलील अहमद	नई दिल्ली

स्थानीय प्रतिभागी

1. डॉ० हनुमान प्रसाद तिवारी
2. डॉ० शिवगोपाल मिश्र
3. डॉ० एम०डी० तिवारी
4. डॉ० एच०सी० खरे
5. डॉ० के०के० भूटानी
6. डॉ० चन्द्रिका प्रसाद
7. डॉ० पूर्णचन्द्र गुप्त
8. श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव
9. डॉ० प्रभाकर द्विवेदी
10. डॉ० माधुरी मोहन राय
11. डॉ० ईश्वर चन्द्र शुक्ल
12. डॉ० जगदीश सिंह चौहान
13. श्री हरिमोहन मालवीय
14. डॉ० अशोक कुमार गुप्ता
15. डॉ० कैलाश नारायण उत्तम
16. श्री विजय चितौरी
17. डॉ० दिनेश मणि
18. डॉ० सुप्रभात मुकर्जी
19. श्री देवव्रत द्विवेदी
20. श्री शुकदेव प्रसाद
21. श्री वी०के० बिंदल
22. डॉ० एस०पी० मिश्रा
23. डॉ० सुरेन्द्र नाथ श्रीवास्तव
24. डॉ० राजेश्वर प्रसाद
25. डॉ० विनोद कुमार ललोरिया
26. डॉ० कृष्ण बिहारी पाण्डेय
27. डॉ० एन०के० सान्याल
28. डॉ० आर०सी० गुप्ता
29. डॉ० श्रीमती कृष्णा मिश्रा
30. श्री दर्शनानन्द
31. डॉ० गोपाल पाण्डेय
32. डॉ० जगदीश प्रसाद
33. डॉ० एम०पी० यादव
34. श्री प्रमोद कुमार मिश्र
35. श्री उमेश कुमार शुक्ल
36. डॉ० अजय कुमार
37. डॉ० अरुण चतुर्वेदी
38. डॉ० भुवनेश्वर सिंह गहलौत
39. कु० हेमलता पंत
40. कु० विनीता शुक्ला
41. श्री ज्योति भाई
42. श्री चन्द्रभान सिंह
43. श्री शादाब खालिद
44. डॉ० ए०क्यू० खान
45. डॉ० एस०एस० सिंह
46. डॉ० पी० डब्ल्यू० रामटेके
47. डॉ० वीरु प्रकाश
48. डॉ० बी०के० द्विवेदी
49. कु० रुचि लोगानी
50. श्री राजेश पाण्डेय
51. डॉ० पृथ्वीनाथ पाण्डेय
52. डॉ० जी०एल० तिवारी
53. श्री आर०सी० श्रीवास्तव
54. डॉ० शीतला प्रसाद वर्मा
55. श्री एच०एम० शुक्ला
56. डॉ० अनिल मिश्र
57. डॉ० बी०पी० द्विवेदी

अनुक्रम

विशेष कार्य अधिकारी
OFFICER ON SPECIAL DUTY

राष्ट्रपति सचिवालय,
राष्ट्रपति भवन,
नई दिल्ली - 110004.
President's Secretariat,
Rashtrapati Bhavan,
New Delhi - 110004.

सं. 8-एम.एच./2001

28 सितम्बर, 2001

प्रिय डॉ. मिश्र जी,

भारत के राष्ट्रपति श्री के.आर. नारायणन् जी को यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि विज्ञान परिषद् प्रयाग, इलाहाबाद 3 तथा 4 नवम्बर, 2001 को इलाहाबाद में "इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखन : चुनौतियाँ और संभावनाएँ" विषय पर एक राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन कर रही है तथा इस अवसर पर एक स्मारिका भी प्रकाशित कर रही है ।

राष्ट्रपति जी इस आयोजन की सफलता के लिए अपनी शुभकामनाएं प्रेषित करते हैं ।

आपका,

(प्रेम प्रकाश कौशिक)

डॉ. शिवगोपाल मिश्र
प्रधानमंत्री
विज्ञान परिषद् प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग,
इलाहाबाद - 211002,
उत्तर प्रदेश ।

सचिव
भारत सरकार
विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय
बायोटेक्नोलॉजी विभाग
ब्लाक–2, 7 वां तल, सी०जी०ओ० कम्पलेक्स
लोदी रोड, नई दिल्ली–110003
SECRETARY
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF SCIENCE & TECHNOLOGY
DEPARTMENT OF BIOTECHNOLOGY
Block-2 (7th Floor) CGO Complex
Lodi Road, New Delhi-110003

अ.शा.प.सं०एस.बी.टी./7480/2000 दिनांक 18.9.2001

माननीय मिश्रजी,

मैं राष्ट्रीय संगोष्ठी "इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखन : चुनौतियाँ और संभावनाएँ" के लिए अपनी शुभकामनाएँ भेजती हूँ। आशा है कि इस संगोष्ठी के आयोजन से विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का संदेश जनसाधारण तक पहुंच सकेगा और नई युवा पीढ़ी को विज्ञान की तरफ आकर्षित करेगा। विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा संगोष्ठी का आयोजन सराहनीय है। मैं इस पत्र द्वारा संगोष्ठी की अपूर्व सफलता के लिए अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ भेजती हूँ!

सादर

भवदीया,
मंजु शर्मा
(मंजु शर्मा)

श्री शिवगोपाल मिश्र
प्रधानमंत्री
विज्ञान परिषद् प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग
इलाहाबाद - 211002

NATIONAL BRAIN RESEARCH CENTRE
SCO 5, 6 & 7, Sector 15, Part II, Gurgaon - 122 001. Haryana

प्रो0 पी.एन. टण्डन
अध्यक्ष, एन.बी.आर.सी. सोसायटी

सं. दिनांक 14 सितम्बर, 2001

प्रिय श्री मिश्र जी,

आपके दिनांक 6 सितम्बर, 2001 के पत्र के लिए धन्यवाद । मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि विज्ञान परिषद, प्रयाग "इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखन: चुनौतियां और संभावनाएं" पर संगोष्ठी का आयोजन करने जा रहा है । विज्ञान के क्षेत्र में इतनी तेजी से प्रगति हो रही है कि इसके बारे में अद्यतन जानकारी रख पाना कठिन होता जा रहा है । सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुए व्यापक विकास के बावजूद इन सुविधाओं तक पहुंचने वालों और न पहुंचने वालों के बीच की खाई निरन्तर बढ़ती जा रही है । ऐसी परिस्थिति में अभी भी लिखित शब्दों का, विशेष रूप से लोगों को, उनकी ही भाषा में वैज्ञानिक प्रगति के बारे में जानकारी देने की दिशा में बड़ा महत्व है । मैं इस संगोष्ठी के लिए हार्दिक शुभ कामनाएं देता हूं और यह आशा करता हूं कि यह संगोष्ठी इन विषयों पर विचार-विमर्श करने और भावी कार्ययोजना तैयार करने में सक्षम होगी ।

सादर,

आपका
पी.एन. टण्डन
(पी.एन. टण्डन)

डॉ0 शिवगोपाल मिश्र
प्रधानमंत्री
विज्ञान परिषद प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग,
इलाहाबाद-211002

प्रो0 कृष्ण बिहारी पाण्डेय
अध्यक्ष

✆ (कार्या०) 600902
600512

10, कस्तूरबा गाँधी मार्ग,
इलाहाबाद
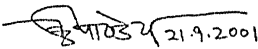
दिनांकः 21 सितम्बर 2001

सन्देश

विज्ञान परिषद प्रयाग द्वारा आगामी 3 तथा 4 नवम्बर 2001 को इलाहाबाद में **"इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखनः चुनौतियां और संभावनाएँ"** विषय पर राष्ट्रीय सागोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है, यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई।

विज्ञान परिषद प्रयाग विगत नौ दशकों से हिन्दी में विज्ञान लेखन की मशाल जलाये है। भारतीय भाषाओं में आधुनिक विज्ञान लेखन का प्रारम्भ बहुत देर से हुआ और लम्बे अरसे तक यह क्षेत्र शासकीय सहायता एवं प्रोत्साहन से वंचित रहा। विषम एवं विपरीत परिस्थितियों में भी विज्ञान परिषद प्रयाग ने हिन्दी में विज्ञान लेखन की गौरवशाली परम्परा को गति प्रदान किया। सौभाग्य से अब देश में अनेक संगठन एवं संस्थान भारतीय भाषाओं में विज्ञान लेखन का दायित्व सफलता के साथ निभा रहे हैं, और विज्ञान परिषद इन सब को नेतृत्व प्रदान कर रहा है। आगामी नवम्बर माह में आपके द्वारा आयोजित की जा रही राष्ट्रीय संगोष्ठी देश के वैज्ञानिकों एवं विज्ञान लेखकों का मार्ग प्रशस्त करेगी, ऐसी आशा है।

संगोष्ठी के सफल आयोजन के लिए मेरी अनन्त शुभकामनाएं।

आपका

कृ० पाण्डेय 21.9.2001

(प्रो0 कृष्ण बिहारी पाण्डेय)

प्रो० जी० के० मेहता
कुलपति

Prof. G. K. Mehta
VICE-CHANCELLOR

इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद-२११००२ उ.प्र. (भारत)
UNIVERSITY OF ALLAHABAD
ALLAHABAD 211002 U.P. (INDIA)

शुभकामना - संदेश

मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय नई दिल्ली तथा माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा विभाग एवं मानव संसाधन विकास मंत्रालय की प्रेरणा से विज्ञान परिषद प्रयाग ने *"इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखनः चुनौतियाँ और संभावनाएँ"* विषय पर संगोष्ठी का आयोजन किया है। यह अत्यन्त प्रासंगिक ही नहीं, आज के युग की आवश्यकता है। मेरा विश्वास है कि इस संगोष्ठी में विचारों के आदान-प्रदान द्वारा निश्चय ही विज्ञान-लेखन को नए आयाम तथा नवीन दिशा प्राप्त करने में सहायता मिलेगी। मैं इसकी सफलता के लिए हार्दिक शुभ-कामना देता हूँ।

(जी. के. मेहता)

व्यक्तिगत पत्राचार के लिए - कुलपति आवास, मोती लाल नेहरू रीजनल इन्जीनियरिंग कालेज कैम्पस, इलाहाबाद २११००४
Address for Personal Correspondence : Vice-Chancellor's Residence, M.N.R. Engineering College Campus, Allahabad-211004
✆ आफिस/Office : 0532-461089, 461157 निवास/Res. 0532-545020, 545021
फैक्स/Fax 0532-545021 E-mail : gkm@allduniv.edu

इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखन : चुनौतियाँ और संभावनाएँ

डॉ० शिवगोपाल मिश्र

ज्ञात हो कि उन्नीसवीं सदी के मध्य से लेकर बीसवीं सदी के प्रारम्भ होने तक अधिकांश भारतीय भाषाओं में, जिनमें हिन्दी, मराठी, बंगला, तमिल तथा तेलुगू मुख्य हैं, विज्ञान लेखन की शुरुआत हो चुकी थी। कुछ विज्ञान पत्रिकाएँ निकल रही थीं और कुछ लोकप्रिय पुस्तकें भी छप चुकी थीं। उस समय पारिभाषिक शब्दों का टोटा था, अतः शब्दावली निर्माण की आवश्यकता अनुभव की जा रही थी।

बीसवीं सदी की सबसे महान घटना थी 1947 में मिली स्वतंत्रता। अंग्रेजी को 'ज्ञान का वातायन' मानने वाले हमारे नेताओं को भी लगा कि प्रान्तीय भाषाओं के विकास के साथ ही ज्ञान-विज्ञान के लिए सशक्त भाषा होनी चाहिए। सबों ने हिन्दी के पक्ष में सहमति जताई तो शब्दावली आयोग का गठन हुआ और भाषाविज्ञानियों के सहयोग से सर्वस्वीकृत शब्दावली के लिए संस्कृत को आधार मानकर मानक शब्दावली गढ़ी जाने लगी। इस तरह विगत 50 वर्षों के निरन्तर प्रयास से कई लाख अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी पर्याय बन चुके हैं।

शब्दावली निर्माण के ही समकक्ष अंग्रेजी पुस्तकों का अनुवाद कार्य शुरू हुआ। मौलिक लेखन के भी प्रयास किए गए। इसके लिए विश्वविद्यालयों के विशेषज्ञों तथा अध्यापकों की सहायता ली गई। इस तरह दो दशकों में प्रायः 1000 पुस्तकें हिन्दी में तैयार हो गईं जिनका उपयोग विश्वविद्यालय में स्नातक तथा स्नातकोत्तर कक्षाओं के अध्यापन के लिए किया जाना था। दुर्भाग्यवश पाठ्यसामग्री होते हुए भी विश्वविद्यालयों में पठन-पाठन में हिन्दी का प्रवेश नहीं हो पाया। इंजीनियरी तथा चिकित्सा के क्षेत्र अछूते ही रह गए।

किन्तु ये तो सरकारी प्रयास थे। इन प्रयासों के अलावा भी एक बहुत बड़ा क्षेत्र था जिसमें कई हजार विज्ञान लेखक कार्य कर रहे थे। यह था विज्ञान के लोकप्रियकरण का क्षेत्र। अनेक विज्ञान पत्रिकाएँ प्रकाश में आईं और इन लेखकों ने सामयिक वैज्ञानिक साहित्य के सृजन की महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन्होंने काफ़ी त्वरा से लेख लिखे और पुस्तकें छापीं। यदि आज हिन्दी या अन्य प्रान्तीय भाषाओं में विज्ञान की लहर दिख रही है तो वह ऐसे ही लेखकों के कारण है। इससे देश में वैज्ञानिक वातावरण बना है एवं वैज्ञानिक प्रवृत्ति विकसित हुई है।

यह उल्लेखनीय है कि इन विज्ञान लेखकों में से कुछ विज्ञान में उच्च शिक्षाप्राप्त थे और उन्होंने हिन्दी में या अन्य भाषाओं में दक्षता प्राप्त की थी, साथ ही उनमें राष्ट्रीयता की भावना थी, अतः उन्होंने सुचिन्तित नीति के तहत प्रामाणिक साहित्य की रचना की। हमें ऐसे ही लेखकों पर गर्व है। किन्तु अधिकांश लेखक अपनी अभिरुचि के कारण ही विज्ञान लेखन करते रहे हैं। विगत दो दशकों के समाचारपत्रों में ऐसे लेखकों को पारिश्रमिक भी मिलता रहा है। फलस्वरूप पत्र-पत्रिकाओं में जितना भी विज्ञान छपा है उसमें विषयों का पिष्टपेषण मिलेगा और थोड़ा ही विज्ञान लेखन स्तरीय

हो पाया है। फिर भी विगत 50 वर्षों में विज्ञान के फलस्वरूप जो क्रान्तियाँ आईं उनमें ये लेखक भागीदार बने। आम जनता के बीच उनका प्रचार-प्रसार इन्हीं की लेखनी का प्रसाद है- चाहे वह ऊर्जा हो, चाहे प्रदूषण हो, चाहे जैव विविधता। इस साहित्य सर्जना के आधार पर हम इतना तो कह सकते हैं कि भारतीय भाषाओं में विज्ञान लेखन का अभाव नहीं रहा, भले ही वह पूर्णतया सन्तोषप्रद न रहा हो।

इक्कीसवीं सदी के आगमन की प्रतीक्षा एक दशक पूर्व से की जा रही थी। खगोलिकी, अन्तरिक्ष विज्ञान, जैव प्रौद्योगिकी और सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में इस तेजी के खोजें हो रही थीं कि विज्ञान के सामान्य लेखक के लिए खोजों को समझ पाना, तत्सम्बन्धी सूचना जुटा पाना और फिर उसे लोकप्रिय शैली में प्रस्तुत कर पाना दूभर लगने लगा।

तब तक विज्ञान लेखकों ने यह भी अनुभव किया कि चिरकाल से प्रयुक्त वर्णनात्मक शैली से विज्ञान लेखन को रोचक नहीं बनाया जा सकता। फलतः विज्ञान गल्प, विज्ञान कविता तथा विज्ञान नाटक जैसी शैलियों की ओर ध्यान आकृष्ट हुआ। विज्ञान गल्प के क्षेत्र में बंगला और मराठी भाषाओं में उच्च कोटि का साहित्य रचा जा रहा था। हिन्दी में उसका अनुकरण हुआ। अभी हिन्दी का विज्ञान गल्प अपनी शैशवावस्था में है। कुछ उत्साही नवयुवक विज्ञान लेखक इसे संवारने में लगे हैं। नाटक विधा में एकाध प्रयोग हुए हैं। साक्षात्कार, यात्रा विवरण जैसी विधाएँ अभी भी अछूती हैं।

विज्ञान पत्रकारिता में नए आयाम खुले हैं। विज्ञान पत्रकारिता का प्रशिक्षण भी शुरू हो चुका है। विज्ञान परिषद् ने जैव प्रौद्योगिकी जैसे महत्वपूर्ण विषय पर एक विशद पारिभाषिक कोश तैयार करने का बीड़ा उठाया है।

शोध के क्षेत्र में हिन्दी का प्रवेश स्वागत योग्य है। विज्ञान परिषद् ने 1958 में शोध पत्रिका की शुरुआत की थी। अब कई शोध पत्रिकाएँ हिन्दी में निकल रही हैं। अन्य प्रान्तीय भाषाओं में भी ऐसे प्रयास होने चाहिए। राष्ट्रीय संगोष्ठियों में हिन्दी में शोधपत्रों का पढ़ा जाना और फिर उनका छपना एक महत्वपर्णू उपलब्धि है। जैव प्रौद्योगिकी, विष विज्ञान तथा कृषि विज्ञान की ऐसी संगोष्ठियों का हिन्दी में सम्पन्न होना उल्लेखनीय है।

हमारे समक्ष अब सबसे बड़ी चुनौती राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं तथा अन्य वैज्ञानिक संस्थाओं में आसीन विशेषज्ञों को भारतीय भाषाओं में अपने शोध परिणाम प्रकाशित करने के लिए प्रेरित करना है। जब तक वे ऐसा नहीं करते, भारतीय भाषाओं में उच्चस्तरीय विज्ञान का अवतरण मुश्किल है। हमारे लोकप्रिय विज्ञान लेखक इस चुनौती का सामना नहीं कर सकेंगे।

आवश्यकता है एक सर्वभाषा मंच स्थापित किए जाने की, जो विभिन्न भाषाओं के लेखकों के विचारों का आदान-प्रदान कर सके। विज्ञान परिषद् विगत 88 वर्षों से हिन्दी के लिए ऐसे मंच का कार्य करता रहा है।

इक्कीसवीं सदी सचमुच चुनौतीपूर्ण होगी। भारत की विभिन्न भाषाओं के विज्ञान लेखकों का कर्तव्य बनता है कि इस चुनौती का सामना करने के लिए अधिक सजग हों, अपने को अधिक सक्षम बनावें और सूचना प्रौद्योगिकी की नई देन, इन्टरनेट का उपयोग करने से चूकें नहीं। विज्ञान लेखन में अपार संभावनाएँ हैं। अब तो नई कम्प्यूटरी भाषा का विकास हो रहा है, उसमें दक्षता प्राप्त करके लेखन के क्षेत्र में जुटना होगा। ❑

प्रधानमंत्री
विज्ञान परिषद् प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद-211002

इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखन : चुनौतियाँ और संभावनाएँ

एक विहंगावलोकन

डॉ० अरविन्द मिश्र

यहाँ हम सभी एक उद्देश्य को लेकर इकट्ठे हुए हैं। यह उद्देश्य है विज्ञान को आम लोगों तक सहज-सरल ढंग से पहुँचाना। यह समचुच अत्यन्त आश्चर्यजनक रूप से दुःखद है कि हमारा इक्कीसवीं सदी का समाज आज कूपमण्डूक बना हुआ है। बल्कि यह कहना ज्यादा उपयुक्त होगा कि भारत में 'अन्धविश्वास' के पुनर्जागरण का युग आरम्भ हो गया है, जहाँ गणेश जी दूध पीते नज़र आते हैं और हमारे पाठ्यक्रमों में फलित ज्योतिष पढ़ाए जाने की पेशकश हो रही है। यह वही देश है जहाँ कभी "यद् सारभूतं तद् उपासनीयम्" हमारा मूलमंत्र था और "असतो मा सद्गमय" हमारा संकल्प था। आज टी०वी० जैसे दृश्य माध्यमों से भूतप्रेतों का आतंक भी बढ़ रहा है, जबकि हमारा समाज इनसे लगभग मुक्ति पा चुका था। आज भले ही सुदूर ग्रामीण अंचलों की किन्हीं दलित बस्तियों में भूतप्रेत का अस्तित्व कायम हो, वैज्ञानिक शिक्षा के प्रचार ने ऐसी अज्ञानतामूलक भ्रान्तियों का लगभग सफाया कर दिया है। किन्तु मानव का अन्धविश्वास फिर से कई तरह के खौफनाक मुखौटों को धारण कर रहा है। ऐसे परिवेश में विज्ञान लेखन जो आम जन तक प्रभावी ढंग से अपनी पहुँच बना पाए बहुत प्रासंगिक हो उठा है। यह है- लोकप्रिय विज्ञान लेखन। या हम यूँ भी कह सकते हैं कि विज्ञान से सम्बन्धित वह लेखन जो 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' हो।

विज्ञान लेखन : सरस या नीरस

अनेक पाठ्यक्रमों में विज्ञान नीरस, बोझिल विषय के रूप में जाना पहचाना जाता रहा है। आम आदमी को इससे क्या लेना-देना। लेकिन यह तर्क उचित नहीं है क्योंकि व्यापक अर्थों में विज्ञान का यदि किसी से ज्यादा लेना-देना है तो वह आम आदमी का है। रही बात विज्ञान के नीरस होने की तो वह 'मिथ' भी अब टूट चुका है। समूचे विश्व को सहज सरल शब्दों में व्यक्त करने की होड़ सी लगी हुई है और यह कोई नई बात भी नहीं है। इस शताब्दी के शुरुआती दशकों में आइन्स्टीन, सी०वी० रामन, जे०सी० बोस जैसे विद्वानों ने लोकप्रिय व्याख्यानों की जो प्रथा शुरू की थी वह कार्ल सागन, आइज़क आसीमोव, जे०बी०एस० हाल्डेन, ए०सी० क्लार्क, रशेल कार्सन, फ्रेड हायल, स्वामी सत्य प्रकाश जैसी महान हस्तियों से संवाहित होती हुई आज भी जीवित है। यद्यपि बहुत से शास्त्रीय परम्परा और शुद्धतावादी वैज्ञानिकों की राय में लोकप्रिय विज्ञान दोयम दर्जे का 'विज्ञान लेखन' है और यह मनुष्य की मूल अन्वेषणात्मक प्रतिभा के विकास में बाधक है किन्तु यह विचारधारा प्रायः

वैज्ञानिकों की लोकप्रिय विज्ञान लेखन में रुचि न होने या उनके अपने 'व्यक्तिगत ज्ञान' को ज्यादातर लोगों तक ले जाने की अनिच्छा या असमर्थता की उपज है। आइंस्टीन और सी०वी० रामन की यह विलक्षणता थी कि वे मौलिक चिन्तन और अनुसंधान की श्रेष्ठता बनाए रखते हुए भी उतनी ही सहजता से अर्जित नए ज्ञान को सामान्य लोगों के बीच बाँटने को उत्सुक रहते थे।

लोकप्रिय विज्ञान लेखन के लिए यह बेहद जरूरी है कि लेखक में आम लोगों के बीच अर्जित ज्ञान को बाँटने की अदम्य लालसा हो, कुछ इस तरह की– "इस नए ज्ञान को मैं शीघ्रातिशीघ्र बाँट लूँ।" ऐसा होने तक उसकी व्यग्रता बनी रहती है। यही भाव यदि वैज्ञानिकों में भी संचारित या संस्कारित हो जाए तो बात बन जाए। इस लिहाज से हमारे श्रेष्ठ वैज्ञानिकों को (चाहे वे जिस क्षेत्र में कार्यरत हों) लोकप्रिय विज्ञान की ओर आकृष्ट किए जाने की आवश्यकता है क्योंकि जो कुछ सीधे 'श्रीमुख' से उच्चारित या 'लेखनीबद्ध' होगा श्रेष्ठतम होगा। अब जैसे ब्रह्माण्ड पर सम्प्रति स्टीफेन हाकिंग से भला बेहतर कौन लिख सकता है ? या फिर सापेक्षवाद पर आइंस्टीन के ललित व्याख्यानों, निबन्धों की बराबरी का सृजन कौन कर सकेगा ?

विज्ञान या साहित्य

लोकप्रिय विज्ञान साहित्य विज्ञान है अथवा साहित्य ? इस प्रश्न को लेकर प्रायः लोगों में भ्रम की स्थिति बनी रहती है। इस प्रश्न के जवाब में हिन्दी साहित्य के पुरोधा स्व० पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का एक निबन्ध 'केतु दर्शन' के कुछ अंश यहाँ उद्धृत करना प्रासंगिक लगता है-

"................. प्राचीन आचार्यों ने 'पुच्छल तारा' को केतु (पताका) और धूमकेतु (धुएं की पताका) और शिखी (चोटीवाला) कहा है। कुछ थोड़े से धूमकेतुओं की गतिविधि का पता लग सकता है। एक हैली धूमकेतु है, जो सन् 1910 में दिखा था। हैली नाम के ज्योतिषी ने सबसे पहले हिसाब लगा कर देखा कि यह 76 वर्ष में लौटता है, और इसका मार्ग दीर्घवृत्ताकार है। तब से यह कई बार देखा गया और इसका नाम ही हैली धूमकेतु पड़ गया है। 20 मई 1910 को तो यह पृथ्वी के बहुत नज़दीक आ गया। सूर्य के सामने आने पर यह और भी तेजस्वी बना। इसकी पूँछ अर्थात् शिखा उदयगिरि से अस्तगिरि तक पहुँचती थी। 1910 में पृथ्वी बच गई थी और उम्मीद की जानी चाहिए कि 1986 में भी बच ही जाएगी।" अब आप ही बताइए कि यह विज्ञान की श्रेणी में आएगा या फिर साहित्य के अधीन वर्गीकृत होगा ? यह निर्विवाद है कि विज्ञान हो अथवा साहित्य, यह उत्कृष्ट निबन्ध लेखन का उदाहरण अवश्य है। उत्कृष्ट लेखन तो एक सतत् प्रवाह है, उमड़ती, उछलती, इठलाती, बलखाती अबाध गति से बहती हुई वेगवती नदी की तरह। डॉ० सम्पूर्णानन्द, आचार्य चतुरसेन या फिर राहुल सांकृत्यायन की वैज्ञानिक रचनाओं को पढ़ते हुए विज्ञान या साहित्य की विभाजन रेखा लुप्त सी होने लगती है। हाँ, पश्चिमी जगत में विज्ञान कथा को साहित्य का दर्जा मिला हुआ है। मेरी अल्प समझ में लोकप्रिय विज्ञान का पलड़ा साहित्य की ओर झुका है।

सूचना का अधिकार

आम आदमी तक विज्ञान की पहुँच आवश्यक क्यों है ? यह प्रश्न हमारी नीति और व्यवस्था से भी जुड़ा हुआ है। ऐसे राष्ट्र जहाँ लोकतंत्र की जड़ें मजबूत हैं (जैसे भारत) यह तार्किक रूप से तय है कि जनमानस को सूचना प्राप्ति का अधिकार है। यह इसलिए भी है कि वह टैक्सपेयर है।

शोध संस्थानों की बन्द चहारदीवारियों में जनता की गाढ़ी कमाई से चन्द वैज्ञानिक क्या गुल खिला रहे हैं, यह जानने, देखने का जनता को पूरा अधिकार है। और जहाँ सभी शोध कार्यों के जनहित में किए जाने का आश्वस्ति भरा उद्घोष हो, वहाँ जनता अपने हित या अनहित की बात स्वयं ही निर्धारित करे तो उचित ही है। जनता कहे हाँ तो हाँ, जनता कहे ना तो ना। किस शोध को हरी झण्डी दिखानी है और किसकी बत्ती गुल करनी है, यह जनता ही तय करे तो आपत्ति क्यों ? लेकिन इन मामलों में जनता को शिक्षित भी करना होगा, जिससे उनमें सही और गलत की उचित समझ हो सके।

विज्ञान संचार

अब प्रश्न है कि आम जन तक विज्ञान को ले जाने का माध्यम क्या हो ? जन संचार माध्यमों में कई ऐसे प्रभावशाली साधन रहे हैं जो सदियों से आम जन से सीधा और सटीक संवाद बनाए हुए हैं। इनमें मेले, झाकियाँ, चौकियाँ या लाग और लीलाएँ प्रमुख हैं, जिन्हें देखने भारी जन समूह उमड़ पड़ता है और मनोरंजन के साथ ही अपने ज्ञान में भी वृद्धि करता है। ऐसे आयोजन 'उत्सव प्रिया मानवाः' के लिए सहज ही आकर्षण का केन्द्र बन जाते हैं और प्रकारान्तर से सूचना संचार के उद्देश्य की ही पूर्ति करते हैं। आज के विज्ञान संचारकों और विज्ञान लोकप्रियकरण से जुड़े नीति निर्धारकों को इन आयोजनों की महत्ता को स्वीकार करते हुए इनके जरिए भी नवीन वैज्ञानिक अन्वेषणों की जानकारी या वैज्ञानिक नज़रिए के प्रसार के प्रयास करने होंगे। विश्व के महानतम मेले, कुम्भ से ही हम शुरुआत कर सकते हैं, जो विज्ञान संचार का भी धर्म क्षेत्र बन सकता है। यहीं से हम देश ही नहीं अपितु विदेश तक के लक्षित क्षेत्रों/लोगों तक पाश्चात्य या देशज वैज्ञानिक उपलब्धियों की जानकारी सहज ही संचारित कर सकते हैं। यहीं लोकप्रियकरण के विविध वैज्ञानिक कार्यक्रम चलाए जा सकते हैं। ज्ञान-विज्ञान की झलकियाँ दिखाकर चमत्कृत कर सकते हैं। 'शून्य' और प्लास्टिक सर्जरी के आविष्कारक इस देश के पास आज भी जड़ी बूटियों से लेकर बेशकीमती जैव सम्पदा तक दिखाने लायक बहुत कुछ है। इस तरह महाकुंभ से ही हम भारी विदेशी मुद्रा अर्जित कर सकते हैं, जिसकी आज किसी भी विकासशील देश को भारी जरूरत है। कुम्भ-महाकुम्भ के अलावा भी समूचे भारत में कहीं न कहीं प्रायः हर महीने या पखवारे में मेलों का आयोजन होता रहता है- इन मेलों को हम विज्ञान प्रसार के मंच के रूप में इस्तेमाल कर सकते हैं। इसी तरह झांकियों, चौकियों के सहारे मूलभूत विज्ञान अथवा नए वैज्ञानिक विषयों को हम आम लोगों के समक्ष प्रस्तुत कर सकते हैं। इलाहाबाद की प्रसिद्ध चौकियों-झाँकियों के व्यवस्थापकों से सम्पर्क कर वैज्ञानिक जानकारियों की नवीनता लिए चौकियों, झाँकियों की परम्परा शुरू की जा सकती है जहाँ प्रदूषण, पेयजल समस्या, प्राकृतिक आपदाओं आदि धरती से जुड़ी समस्याओं और ग्रहों, नवग्रहों तथा सौर-मण्डलों से जुड़े विषयों की कल्पनाशील मनोहारी प्रस्तुति सम्भव है। आम लोगों की उत्सुकता के शमन और उनकी मनोरंजन की भावनात्मक संतृप्ति के साथ भी यहाँ उनका विचारोत्तेजक विषयों से साक्षात्कार होगा। यह उनमें वैज्ञानिक मनोवृत्ति का भी बीजारोपण करेगा। हमें इन पारम्परिक सांस्कृतिक आयोजनों की संवाद क्षमता को पहचानना होगा और इन्हीं के अनुरूप लोकप्रिय विज्ञान के विविध स्वरूपों पर भी चिन्तन-मनन करना होगा। धर्म भारतीय जनता का प्राणतत्व है, इसका सहारा लेकर हम अपने उद्देश्य में सफल हो सकते हैं। इस दिशा में उत्तर प्रदेश के वन विभाग ने

अभी हाल में ही संचालित 'आपरेशन ग्रीन' अभियान के अन्तर्गत आकर्षक प्रचार साहित्य के जरिए पंचवटी, नवग्रह वाटिका आदि शीर्षकों से वृक्षारोपण की प्रभावशाली अवधारणाएँ प्रस्तुत की हैं। विज्ञान लोकप्रियकरण के ऐसे उदाहरण अनुकरणीय हैं।

इस तरह अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रम-आयोजन हमारी दैनन्दिन जीवनचर्या में ही नहीं संस्कारों में भी रच-बस से गए हैं। पारम्परिक लोक संचार माध्यमों में नाटक, कठपुतली आदि आयोजनों का सहारा लेकर भी वैज्ञानिक विषयों का सहजता से प्रचार-प्रसार किया जा रहा है।

रेडियो बनाम टी०वी०

आज भी बहुसंख्यक जनता गाँवों के उन दूर-दराज क्षेत्रों में ही जीवन-यापन कर रही है जहाँ संचार के कई आधुनिक साधन अभी तक नहीं पहुँचे हैं और न ही अगले एक डेढ़ दशक तक ऐसा होने की उम्मीद है। हाँ, अब तक की संचार क्रान्तियों में रेडियो (ट्रांजिस्टर) की लोकमानस तक पहुँच प्रशंसनीय है, जिसका सहारा विज्ञान के लोकप्रियकरण के लिए निरन्तर और अनिवार्यरूप से लिया जाना चाहिए। प्रत्येक शनिवार को रात्रि 7.45 बजे विविध भारतीय सेवा के अन्तर्गत 15 मिनट के लिए जिज्ञासा कार्यक्रम पूर्णतः ज्ञान-विज्ञान की नई जानकारियों पर ही आधारित है और काफी लोकप्रिय हो रहा है। अन्य रेडियो कार्यक्रमों में ऐसे कार्यक्रमों की कवरेज बढ़ानी होगी। कृषि पर आधारित अनेक रेडियो कार्यक्रमों ने पिछले दशकों में एक अच्छा खासा श्रोतावर्ग तैयार कर लिया है। परन्तु इन कार्यक्रमों को प्रस्तुति, आकर्षण और विविधता की दृष्टि से निरन्तर निखारते रहने की आवश्यकता है। रेडियो को टी०वी० से आतंकित होने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि अभी भी टी०वी० एक विशाल जनमानस की नजरों से ओझल है।

भारत में 'दूरदर्शन' अपने लक्ष्य से भटकता प्रतीत होता है। इस अत्यन्त प्रभावशाली माध्यम का बहुविध सदुपयोग होने के बजाय इसका प्रायः दुरुपयोग ही हो रहा है। भारत में टी०वी० अब मात्र विज्ञापन संस्कृति और तद्जनित उपभोक्तावाद को दिन दूरी रात चौगुनी गति से विस्तार देने का सशक्त माध्यम बन गया है। यह पूँजीपति व्यवस्था का एक नया शगल है। यह महान वैज्ञानिक उपलब्धि अब लोगों के निहित स्वार्थों की भेंट चढ़ती नजर आ रही है और समाज में अपसंस्कृति, अन्धविश्वास को बढ़ावा दे रही है। टी०वी ने एक नये 'भूतप्रेत' युग का आह्वान भी कर दिया है। तमाम चैनलों के कार्यक्रम भूतप्रेतों की चर्चा से भरे पड़े हैं। टी०वी० के इस अत्यन्त आपत्तिजनक दुरुपयोग को रोकने के लिए वैज्ञानिकों या विज्ञान लेखकों की ओर से पहल होनी चाहिए- एक जन आन्दोलन की शुरुआत करके इस सन्दर्भ में सरकार को स्पष्ट 'मनोरंजन नीति' की घोषणा करनी होगी जिसमें मात्र माल बेचने के लिए टी०वी० के दुरुपयोग को रोकने पर अंकुश हो। टी०वी० जैसे सशक्त माध्यम के जरिए विज्ञान के लोकप्रियकरण अभियान को नए आयाम दिए जा सकते हैं।

विज्ञान नीति

भारत विश्व के उन चन्द देशों का प्रतिनिधित्व करता है, जहाँ एक स्पष्ट विज्ञान नीति अस्तित्व में है। भारत के पहले प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने 'विज्ञान नीति' के अनुरूप ही इस देश में 'वैज्ञानिक मनोवृत्ति' (साइंटिफिक टेम्पर) के प्रचार प्रसार पर बल दिया था। किन्तु आज राष्ट्रीय क्षितिज पर ऐसा कोई भी राष्ट्रनायक नहीं दिखता जो विज्ञानमना नेहरू जी की नीति की

भरपाई कर सके। पं० नेहरू के ऊपर भारत के पश्चिमीकरण के आरोप लगाए जाते हैं, किन्तु यह निर्विवाद सत्य है कि उन्होंने ही वैज्ञानिक भारत की नींव रखी। किन्तु ऐसे युगद्रष्टा विचारक की परम्परा अवरुद्ध सी हो गई है।

संस्थागत प्रयास

इन सारे मुद्दों पर खुली बहस होने की जरूरत है। इन्हें अब और अनदेखा किया जाना राष्ट्रहित में नहीं है। लेकिन इस दिशा में पहल कौन करे ? इन मुद्दों के समाधान का मंच कहाँ हो ? निःसन्देह ख्यातिलब्ध 'विज्ञान परिषद प्रयाग' सरीखे संस्थान या फिर 'विकास' (वालेण्टरी इंस्टीट्यूट फार कम्युनिटी एप्लाइड साइंस, नैनी, इलाहाबाद) जो विगत लगभग एक दशक से उत्तर प्रदेश में विज्ञान लोकप्रियकरण की मुहिम में सन्नद्ध है। सभी प्रदेशों में ऐसे संस्थानों को चिन्हित कर उन्हें राजकीय संरक्षण एवं प्रोत्साहन मिलना चाहिए जिससे वे राष्ट्रहित में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की दशा और दिशा से जुड़े पहलुओं पर राज्य या केन्द्र सरकारों का ध्यानाकर्षण और मार्गदर्शन कर सकें।

अब जैसे भारतीय ज्योतिर्विज्ञान (ज्योतिष) को विश्वविद्यालयों में जस का तस पढ़ाया जाना चाहिए या फिर समयानुकूल संशोधनों को समाहित कर एक नए पाठ्यक्रम को स्वीकार करना चाहिए अथवा इस प्राच्य विद्या को एकदम नकार दिया जाना चाहिए– इस अत्यन्त बहुचर्चित विवादास्पद विषय पर विज्ञान परिषद् प्रयाग एक विद्वत गोष्ठी आयोजित कर कोई अन्तिम निर्णय ले सकती है और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को तदनुसार सिफारिशें कर सकती है। अब तक जो हुआ सो हुआ- किन्तु इस नई सदी में भारतीय ज्योतिष (विज्ञान) या फिर आधुनिक खगोल विज्ञान (एस्ट्रोनामी) को एक दूसरे के समानान्तर चलते रहना उचित नहीं है। "यद सारभूतं तदुपासनीयनम" के अनुसार भारतीय पारम्परिक ज्योतिष में विज्ञान की दृष्टि से जो ग्राह्य हो उसे स्वीकारने में हिचक नहीं होनी चाहिए। साथ ही, आज के वैज्ञानिकों को अतिवादी या अतिरंजित विचारों, कल्पनाओं को त्यागने में भी संकोच नहीं होना चाहिए। यहाँ अतिवादी ज्योतिषियों या वैज्ञानिकों, दोनों के लिए कोई जगह नहीं है। यह समचुच विडम्बना है कि आज के तमाम पोंगापन्थी ज्योतिषियों को ग्रहों नक्षत्रों की सामान्य जानकारी भी नहीं है। 'आकाश दर्शन' से अब उनका कोई वास्ता नहीं रहा। 'पत्रा ही तिथि पाइये' ही उनकी दैनन्दिनी बन गई है, जबकि हमारा खगोल विज्ञान हमारे पूर्वजों द्वारा आकाश के निरन्तर निरीक्षण पर्यवेक्षण से विकसित हुआ विज्ञान रहा है। किन्तु दुर्भाग्यवश आकाशीय निरीक्षण की वह प्रथा शताब्दियों से अवरुद्ध हो गई और हम बस पोथी, पत्रा और पंचांग की गणनाओं से चन्द्र और सूर्यग्रहण की भविष्यवाणी तक ही सीमित रह गए। कालान्तर में एक अवांछनीय प्रशाखा के रूप में विकसित फलित ज्योतिष विज्ञान की कसौटी पर सत्यापित नहीं है। हाँ, हमारे कई स्वनामधन्य वैज्ञानिकों को भी भारतीय ज्योतिष की मूल संकल्पनाओं का लेशमात्र ज्ञान नहीं है। ये राहु केतु को खोजने की चुनौती देते हैं जबकि हमारी ज्योतिषी गणनाओं में इन्हें मात्र 'छाया ग्रह' ही माना गया है यानि इनका कोई भौतिक अस्तित्व नहीं है- पर गणनाओं को शुद्ध रखने के लिए इनका मान रखना अपरिहार्य रहा है। क्या ही अच्छा होता कि कालान्तर में खोजे गए यूरेनस और नेपच्यून का हिन्दी नामकरण हमारे आधुनिक खगोल वैज्ञानिकों ने राहु केतु ही रख दिया होता। हाँ तब हमें अपने मिथकों-पुराण कथाओं की पुनर्रचना करनी होगी और बुद्धिजीवियों को यह चुनौती स्वीकार करनी होगी।

सूचना प्रौद्योगिकी या सूचना प्रदूषण

आज सूचना प्रौद्योगिकी का बोलबाला है। वैसे यह भी विचार पश्चिम से ही आयातित है, परन्तु इसमें हमारे नीति निर्धारकों और व्यवसायप्रेमियों को काफी लाभ नजर आ रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी के विस्तार को कम्प्यूटर व्यवसाय के विकास से जोड़कर देखा जा रहा है। आज सूचना संचय को शक्ति संचय के रूप में देखा जा रहा है यानी सूचनासम्पन्न ही आज शक्तिशाली है। किन्तु सूचना क्रान्ति के इस युग में हमें सार्थक और निरर्थक सूचना/ज्ञान के विभेद को बनाए रखना होगा। 'सार सार को गहि रहे थोथा देइ उड़ाय' की नीति सदैव प्रासंगिक है। अन्यथा वर्तमान सूचना क्रान्ति कल्याणकारी न बनकर सूचना प्रदूषण का रूप ले लेगी– प्रदूषणों की पहले से ही लम्बी फेहरिस्त में एक नया नाम।

हाँ, मेडिकल ट्रान्सक्रिप्शन और बायोइन्फार्मेटिक्स के क्षेत्र में रोजगार के काफी अवसर हैं। इन विषयों से लोकप्रिय लेखों के माध्यम से लोगों को परिचित कराने की भी आवश्यकता है।

हिन्दी और विज्ञान लेखन

हिन्दी विज्ञान की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बने, यही हमारा अभीष्ट है। किन्तु इसके लिए हिन्दी विज्ञान लेखकों को पूरी निष्ठा और ईमानदारी के साथ समर्पित प्रयास करना होगा, बहुत कुछ सीखना होगा और पाठकों तक पहुँचाना होगा। यह एक सतत प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया अविछिन्न रूप से चलती रहे, यह समाज और व्यवस्था से जुड़े लोगों का भी उत्तरदायित्व है।

लोकप्रिय लेखकों के लिए पारिभाषिक शब्दावली की अनिवार्यता नहीं होनी चाहिए। यहाँ जन सामान्य की समझ के अनुरूप विषय की जानकारी का सम्प्रेषण अपेक्षित है। यहाँ भाषा और शैली का सहज सरल होना जरूरी है अन्यथा तकनीकी शब्दावलियों से बोझिल भाषा आम आदमी से संवाद स्थापित नहीं कर सकेगी। हाँ, पाठ्यक्रमों के लिए मानक पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग आवश्यक है ताकि विभिन्न स्तरों पर कथ्य-तथ्य और अभिव्यक्ति की एकरूपता बनी रहे। लेकिन पारिभाषिक शब्दों के गठन का कार्य बहुत जोखिम भरा है। इस कार्य में केवल उन्हीं का योगदान लिया जाना चाहिए, जिनकी विद्वता, विशेषज्ञता असंदिग्ध हो। अधकचरे ज्ञान के लोग यहाँ ज्ञान के बजाय अज्ञान की मुहिम चला देंगे– अर्थ का अनर्थ करेंगे।

अनूदित साहित्य

प्रख्यात साहित्यकार भीष्म साहनी ने एक रूसी वैज्ञानिक उपन्यास 'द एम्फीबियन' का अनुवाद किया था। जरा सोचिए, 'द एम्फीबियन' यानी उपन्यास के शीर्षक का उन्होंने हिन्दी में क्या अनुवाद किया होगा ? इस अवश्य पठनीय पुस्तक का हिन्दी में अनूदित नाम था 'जलथलिया'। यह जलथलिया ही उपन्यास का केन्द्रीय चरित्र है। 'एम्फीबियन' शब्द का तो सीधा सा अनुवाद है– उभयचर या फिर 'उभयचारी' पर इस शब्द में वह साहित्यिकता या लालित्य कहाँ जो जलथलिया में है। भावानुवाद का यह एक उत्कृष्ण उदाहरण है। लोकप्रिय साहित्य या विज्ञान साहित्य में शब्दों के अनुवाद में सावधानी अपेक्षित है, तभी उसकी ग्राह्यता या पठनीयता में वृद्धि हो सकती है।

लोकप्रिय विज्ञान लेखन में अच्छे अनुवाद की समस्या अभी भी विकराल बनी हुई है। जो अनुवाद हमारे सामने हैं, वे अधिक आश्वस्त नहीं करते। एक गलत धारणा की परिपाटी यह भी है

कि लोकप्रिय साहित्य के अनुवाद का काम भी पारिभाषिक शब्दावलियों की पोथी खोलकर किया जाता है। नतीजा होता है, कूड़ा-कचरा साहित्य में एक और अभिवृद्धि जिसको कोई पूछने वाला नहीं होता। यहाँ पुनः ध्यानाकर्षण आवश्यक है कि पाठ्यपुस्तकों के लिए तो पारिभाषिक शब्दावली आवश्यक है, पर लोप्रिय विज्ञान साहित्य के लिए ऐसी कोई अनिवार्यता नहीं होनी चाहिए।

इस लेख में विज्ञान से जुड़ी चुनौतियों और विविध पहलुओं का एक विहंगावलोकन भर हो सका है। यहाँ वर्णित सभी समस्याओं, चुनौतियों और पृथक-पृथक विचार-मन्थन और तदनुरूप कार्यनीति के निरूपण की आवश्यकता है। इस पुनीत कर्म में हम जितना शीघ्र जुटेंगे, नई सदी को हम उतना ही बेहतर बना पाने में समर्थ होंगे। ❑

सचिव, भारतीय विज्ञान कथा लेखक समिति
ए2/21, संजय अपार्टमेन्ट, काटनमिल कम्पाउण्ड
चौकाघाट, वाराणसी-221002 (उत्तर प्रदेश)

विज्ञान लोकप्रियकरण का महत्व

सुबोध महंती

विज्ञान लोकप्रियकरण की आवश्यकता, अब कोई बहस का मुद्दा नहीं रहा। इसका कारण यह है कि आज विज्ञान मनुष्य की जिन्दगी के हर पहलू का हिस्सा बन गया है और इस बात से आज शायद ही कोई व्यक्ति असहमत होगा कि विज्ञान का ज्ञान न केवल आवश्यक है बल्कि अनिवार्य भी है। आम आदमी को न्यूनतम कितने विज्ञान के ज्ञान की आवश्यकता है और इसका प्रसार किस तरह करना चाहिए, इसमें अभी तक कोई सहमति नहीं है। इस विषय में मतभेद हो सकता है।

यह सर्वविदित है कि आधुनिक विज्ञान के स्वरूप का गठन लगभग 300 वर्ष पहले हुआ। बीसवीं सदी में विज्ञान अपने उत्कर्ष पर पहुँचा। इसने मनुष्य की सोच और जीवन शैली को हमेशा के लिए बदल डाला। जहाँ एक ओर विज्ञान ने मनुष्य की जीवन शैली को अधिक आसान और सुखदायी बनाया व भौतिक जगत को समझने में सहायता की, वहीं दूसरी ओर अनेक शस्त्र एवं अस्त्रों का निर्माण करने में सहायता की जिससे पूरे विश्व के ध्वंस हो जाने की संभावना बढ़ गई। विज्ञान का प्रभाव पर्यावरण पर भी पड़ा। जीव जन्तुओं की अनेक प्रजातियाँ विलुप्त हो गईं और कई विलुप्त होने के कगार पर पहुँच गईं।

आज हम सभी जानते हैं कि विज्ञान का प्रयोग लाभकारी और अलाभकारी दोनों कार्यों के लिए किया जा सकता है। इसके लिए विज्ञान जिम्मेदार नहीं है बल्कि जो लोग स्वार्थ के लिए विज्ञान का प्रयोग करते हैं वे ही इसके लिए जिम्मेदार हैं। इक्कीसवीं सदी के विज्ञान संचारकों के पास सबसे बड़ी जिम्मेदारी यही होगी कि वे विज्ञान के स्वरूप को उचित ढंग से आदमी के सामने प्रस्तुत करे। आज सूचनाओं का इतना भण्डार बढ़ गया है कि विज्ञान संचारकों के सामने यह समस्या उभर कर आई है कि कितनी सूचनाओं को प्रस्तुत किया जाए। इसके अतिरिक्त विज्ञान की कई शाखायें इतनी जटिल हो गई हैं कि उनको आम व्यक्ति की भाषा में प्रस्तुत करना काफी मुश्किल है। विज्ञान लोकप्रियकरण का उद्देश्य न केवल विज्ञान की नई-नई उपलब्धियों और खोजों को आम जनता तक पहुँचाना है बल्कि इसका उद्देश्य समाज में आम जनता के बीच वैज्ञानिक चेतना विकसित करना है ताकि विभिन्न समस्याओं पर विश्लेषणात्मक ढंग से विचार किया जा सके।

भारत के सन्दर्भ में विज्ञान का प्रचार-प्रसार विशेष महत्व रखता है। अभी भी लाखों भारतीय दरिद्रता की सीमा के भीतर जीवनयापन कर रहे हैं और इसका कारण है— निरक्षरता और वैज्ञानिक मानसिकता का अभाव। आज का समाज विभिन्न गुटों में बँट गया है। इस संदर्भ में वैज्ञानिक चेतना एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है जिससे उनके बीच की दूरी को कम किया जा सके। भारत को एक विकसित देश में बदलने के लिए समाज के सभी वर्गों की भागीदारी आवश्यक है। यह तभी संभव

है अब मनुष्य जीवन को प्रभावित करने वाले सभी पहलुओं को समझे। भारत में विज्ञान लोकप्रियकरण की एक अच्छी परम्परा रही है लेकिन अभी भी इस दिशा में सही कदम उठाने की जरूरत है। मीडिया में भी विज्ञान को उतना महत्व नहीं दिया जा रहा है जितना उससे अपेक्षित है। विज्ञान के नाम पर जो भी लिखा जा रहा है वह पूरी तरह लाभकारी सिद्ध नहीं हो रहा है। बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में हमारे देश में कई महान वैज्ञानिक न केवल विज्ञान लोकप्रियकरण को महत्व देते थे बल्कि इस कार्य में उनका योगदान महत्वपूर्ण भी था। आज यह परम्परा कम होती जा रही है। कुछ गिने–चुने वैज्ञानिक इस क्षेत्र में अपना योगदान दे रहे हैं। ज्यादातर वैज्ञानिक विज्ञान लोकप्रियकरण के महत्व को न समझकर अपना महत्वपूर्ण योगदान नहीं देते हैं। इसका प्रभाव हमारे समाज में दिखाई दे रहा है। आज हमारी नई पीढ़ी विज्ञान के प्रति आकर्षित नहीं हो रही है। अधिकतर लोग जो विज्ञान लेखन से जुड़े हैं उनमें विज्ञान के प्रति जानकारी का अभाव है। यहाँ इस बात पर बल देना आवश्यक है कि विज्ञान को लिखने के लिए विज्ञान के औपचारिक छात्र होने की आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता है विज्ञान के बारे में जानने की और भाषा और शब्दों का उचित ज्ञान। वास्तव में, विदेशों में कई प्रसिद्ध विज्ञान लेखक जिन्होंने विज्ञान लोकप्रियकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, विज्ञान के औपचारिक छात्र नहीं रहे। अन्य क्षेत्रों की तरह एक विज्ञान लेखक बनने के लिए आवश्यकता है अनुशासन, संकल्प और दृढ़ परिश्रम की। भारतीय भाषाओं में विज्ञान लेखन अभी भी परिपक्वता की स्थिति में नहीं है। इसका मूल कारण यह है कि विज्ञान लेखक अंग्रेजी भाषा से अनुवाद करके लिखने में संलग्न हैं। इसमें कई अपवाद भी होंगे मगर उनकी संख्या नगण्य है।

जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है कि मीडिया में विज्ञान को महत्व नहीं दिया जाता, इसके फलस्वरूप विज्ञान के बारे में लिखकर अपनी जीविका अर्जित करना कठिन कार्य है। और यही कारण है कि विज्ञान पत्रकारिता का पठन–पाठन भी काफी सीमित है। विज्ञान लोकप्रियकरण की पत्रिकाओं की संख्या बढ़ने की बजाय घटती जा रही है। जो एक या दो प्रकाशित होती भी हैं उनकी पहुँच काफी सीमित है।

विज्ञान लेखन के लिए आवश्यक है कि वह सरल भाषा में लिखा गया हो और पाठक के लिए भी लाभकारी हो। दुर्भाग्यवश विज्ञान लेखक यह मान लेते हैं कि जो विषय वह लिख रहे हैं उसको परखने की समझ आम जनता में है, जबकि यह वास्तव में सही नहीं होता है। इसके लिए किसी विषय पर लिखने के लिए उसकी पृष्ठभूमि भी देना आवश्यक होता है। इसके अतिरिक्त उन्हीं शब्दों का इस्तेमाल किया जाए जिसकी समझ आम व्यक्ति में हो। लेख की शुरुआत ऐसी होनी चाहिए, जो पाठकों को आकर्षित करने की क्षमता रखती हो।

आज विज्ञान के बारे में जो प्रकाशित होता है उसमें कुछ विषयों का बोलबाला है– जैसे अन्तरिक्ष विज्ञान, स्वास्थ्य, जीव विज्ञान आदि। इन विषयों के बारे में जानने की रुचि तो जनता में है मगर उन विषयों पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए जो आम आदमी के जीवन से जुड़े हुए हैं।

समाज में फैली विभिन्न कुरीतियों को दूर करने की भी जरूरत है। महान वैज्ञानिक, चाहे वे भारतीय हों या विदेशी, उनकी जीवनियों के बारे में प्रचार-प्रसार की बहुत आवश्यकता है। ऐसी जीवनियाँ नई पीढ़ी में प्रेरणा जागृत कर सकती हैं। आज समाज में आदर्श व्यक्तियों की बहुत कमी है। अनेक व्यक्ति यह नहीं जानते कि न जाने कितने वैज्ञानिकों ने अपनी सुख-सुविधाओं का त्याग करके स्वयं को विज्ञान के प्रति आत्मसमर्पण कर दिया। इन वैज्ञानिकों की जीवन कथाएँ संघर्षमयी, [illegible] वे केवल वैज्ञानिक बनने की ही प्रेरणा नहीं

देतीं बल्कि जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में संघर्ष करने और सफल होने का भी संदेश देती हैं।

आम जनता विज्ञान के बारे में जानने के लिए इच्छुक तो रहती है, किन्तु उसके पास संबंधित पठन सामग्री का काफी अभाव होता है और जो सामग्री उनके पास पहुँचती है वह रोचक और प्रामाणिक नहीं होती। कई भारतीय भाषाओं में विज्ञान लेखन को बढ़ावा देने की आज आवश्यकता है। तकनीकी शब्दों के अभाव की समस्या भी एक जटिल समस्या है। इस कारण जब किसी विषय की व्याख्या इन भाषाओं में की जाती है तो उसको समझना बहुत मुश्किल हो जाता है। विज्ञान लेखन की भाषा और साहित्यिक भाषा अलग नहीं है। सार्थक विज्ञान लेखक वही है जो विज्ञान की जटिल समस्याओं को एक कहानी के रूप में रोचक ढंग से प्रस्तुत करे। इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखक अपना कर्तव्य तभी निभा सकेगा जब सरकार, विज्ञान लेखक, वैज्ञानिक सभी एक होकर प्रयास करते रहें।

विज्ञान लेखकों को इस बात का ध्यान रखना पड़ेगा कि विज्ञान लोकप्रियकरण का मुख्य उद्देश्य विज्ञान की न केवल छुटपुट घटनाओं के बारे में जानकारी देना है, बल्कि विषय के प्रति उत्सुकता बढ़ाने के अतिरिक्त आम जनमानस में वैज्ञानिक सोच बढ़ाना भी है। हमें इस बात को भी महसूस करना चाहिए कि केवल विज्ञान की ही सहायता से समाज आगे बढ़ सकता है। यह विज्ञान समाज के बाहर की कोई वस्तु नहीं है बल्कि मनुष्य की सोच की एक उपज है और प्रकृति ने मनुष्य को सही और गलत की समझ प्रदान की है। विज्ञान मनुष्य को प्रश्न करने के लिए प्रेरित करता है। वह कोई देखी सुनी बात नहीं मानता। विज्ञान व्यक्ति विशेष तक भी सीमित नहीं है। वह अपनी गलती स्वीकार करने में भी नहीं झिझकता। वास्तव में विज्ञान की कई धारणाएँ जिन्हें वैज्ञानिकों ने सत्य माना, बाद में वे गलत सिद्ध हुईं।

स्कूलों में जिस ढंग से विज्ञान विषय को पढ़ाया जाता है उससे छात्रों में विषय के प्रति रुचि जागृत नहीं होती है। यही वह सबसे बड़ा कारण है जिससे छात्रों की रुचि विज्ञान के प्रति कम होती जा रही है। विज्ञान के विषयों को इस तरह प्रस्तुत किया जाता है कि कोई तथ्य संयोजित नहीं होता है। हम यह भूल जाते हैं कि तथ्यों को एकत्र कर देना मात्र ही विज्ञान नहीं हो सकता। यह ठीक उसी तरह है जैसे ईंटों के ढेर से मकान नहीं बनता है। यह विषय तभी रुचिकर बनाया जा सकेगा जब यह बताया जाए कि यह तथ्य कैसे खोजा गया है और उस खोज की प्रक्रिया कितनी रोचक एवं रोमांचक थी। आज हमारे कितने ही आविष्कारों की कहानियाँ इसका सुन्दर उदाहरण हैं। मगर स्कूलों में पढ़ाई का इतना दबाव है कि वहाँ पाठ्यक्रम से हटकर कुछ सोचने और बताने के लिए शिक्षक एवं छात्र दोनों के पास समय नहीं है। इस तथ्य को अपने वातावरण से कैसे जोड़े ?

इस सन्दर्भ में विज्ञान लोकप्रियकरण विशेष भूमिका निभा सकता है। अनेक वैज्ञानिकों ने यह स्वीकारा है कि विज्ञान के प्रति उनका लगाव लोकप्रिय विज्ञान पुस्तकों को पढ़कर ही हुआ। आज लोकप्रिय विज्ञान पुस्तकों का अभाव है– विशेषकर भारतीय भाषाओं में। विदेशी लेखकों की पुस्तकें उपलब्ध तो हैं किन्तु ये बहुत से छात्रों की पहुँच के बाहर हैं। अगर उन्हें ये मिल भी जाएँ तो इनको समझना मुश्किल है। अभी तक विभिन्न भाषाओं में छपी लोकप्रिय विज्ञान पुस्तकों की समीक्षा करने की भी जरूरत है।

विज्ञान लोकप्रियकरण के लिए उपलब्ध साधनों की कमी नहीं है बल्कि आज के तकनीकी युग में अनेक साधन जैसे इन्टरनेट, मल्टीमीडिया आदि उपलब्ध हैं जो कभी कल्पना से परे थे। विज्ञान संचारकों को इन विभिन्न साधनों का, विज्ञान लोकप्रियकरण के लिए अपनी क्षमता के अनुसार

भरपूर उपयोग करना चाहिए। हमको आज यह भी ध्यान रखना है कि आज भारतीय समाज की स्थिति यह है कि उसे किसी एक विशेष साधन पर निर्भर रहने की जरूरत नहीं है। जैसे कि टेलीविजन एक प्रभावशाली माध्यम है लेकिन अनेक लोग इस माध्यम से वंचित हैं किन्तु वहाँ रेडियो की भूमिका बढ़ जाती है। इसी प्रकार आज छोटे–छोटे शहरों में भी छोटे और मझोले अखबार प्रकाशित हो रहे हैं। इनका उपयोग भी विज्ञान लेखन के लिए किया जा सकता है। इस दिशा में लोक माध्यम– जैसे लोकनाट्य, कठपुतली कला, नृत्य नाटक आदि भी बहुत सहायक हो सकते हैं।

विज्ञान लोकप्रियकरण की इस चर्चा का सीधा अर्थ वैज्ञानिक साक्षरता और विज्ञान की न्यूनतम जानकारी है। यह आज शिक्षित–अशिक्षित, सभी तरह के लोगों के लिए अनिवार्यता बनती जा रही है क्योंकि विज्ञान आज के हमारे ग्रामीण एवं शहरी तथा महानगरीय जीवन के छोटे से छोटे काम से जुड़ गया है, यहाँ तक कि हम जिस साबुन, तेल या रसोई में स्टोव, किरोसिन आदि का इस्तेमाल करते हैं, उनका संबंध भी विज्ञान से है। तब विज्ञान लोकप्रियकरण संबंधी प्रयासों का महत्व बहुत अधिक बढ़ जाता है और इसी के साथ विज्ञान संचारकों से भी अपेक्षाएँ बढ़ जाती हैं कि वे अपने लेखन को समाज के छोटे वर्ग तक पहुँचाने में प्रयत्नरत हों।

विज्ञान के पास सभी चीजों का इलाज है, इस तरह का प्रचार-प्रसार करना गलत है। आज भी विज्ञान सभी प्रश्नों का उत्तर देने में सक्षम नहीं है। अनेक वैज्ञानिक धारणाएँ वास्तविक नहीं लगतीं– यह कहने का अर्थ यही है कि विज्ञान की अपनी सीमाएँ हैं। इक्कीसवीं सदी में समाज जब और आगे बढ़ेगा तब यह विज्ञान को अपनाएगा। और इसमें विज्ञान लोकप्रियकरण की भूमिका महत्वपूर्ण होगी लेकिन इसके लिए संचारकों का सामाजिक परिप्रेक्ष्य, लोकरुचि, भाषा का चयन एवं संचार माध्यमों के संभावित उपयोगों के लिए अपने को सक्षम और योग्य बनाना होगा– तभी हम विज्ञान लोकप्रियकरण की चुनौतियों का सामना कर सकेंगे और उसके वास्तविक महत्व को स्थापित कर सकेंगे। ❑

प्रधान वैज्ञानिक अधिकारी
विज्ञान प्रसार
सी-24, कुतुब इंस्टीट्यूशनल एरिया
नई दिल्ली-16

हिन्दी में विज्ञान लेखन– समस्याएँ और समाधान

डॉ० प्रिय कुमार चौबे

वैज्ञानिक चेतना के उन्मेष में ज्ञान को विशिष्टता प्राप्त होती है तब वह ज्ञान विज्ञान अर्थात् विशिष्ट ज्ञान का पद प्राप्त करता है। वैज्ञानिकों में एक प्रकार की अन्तर्दृष्टि अपेक्षित है। इसका आयाम बहुत बड़ा है। व्यापक दृष्टि से सूक्ष्म और गुह्य दर्शन हो पाता है। आज के वैज्ञानिक इसको भली प्रकार समझ रहे हैं।

मातृभाषा या अपनी भाषा सबको मधुर और सुबोध होती है। इसके उन्नयन में लेखक का योगदान सराहनीय है। इसके व्यवहार में यह देखा गया है कि किसी भाषा को समझना, बोलना तथा लिखना अलग अलग गुण हैं। इसमें लेखन कार्य कुछ अधिक कठिन है। विशेषकर वैज्ञानिक विषयों में परन्तु असम्भव नहीं। यदि हमारे वैज्ञानिक उसी लगन एवं निष्ठा से जैसे वे अनुसन्धान कार्य करने में लगे हैं, हिन्दी में वैज्ञानिक विषयों में लेखन कार्य को अपनाएँ तो यह समस्या अपने आप हल हो सकती है। आज भी हमारे वैज्ञानिक हिन्दी लेखन के प्रति जागरूक नहीं हैं। इसका कारण उनका हिन्दी के प्रति पर्याप्त प्रेम का अभाव है जिससे आज भी भारतवर्ष का वैज्ञानिक भाषा के मामले में मानसिक रूप से परतन्त्र है। यह एक शाश्वत सत्य है कि राष्ट्र प्रेम और निजभाषा प्रेम किसी पर जोर जबर्दस्ती से थोपा नहीं जा सकता। हमारे लिए यह दुख की बात है कि विज्ञान लेखन में आजादी के 54 वर्ष बाद भी हमारे वैज्ञानिकों का दृष्टिकोण वही है जो स्वतंत्रता के पूर्व था।

लोगों में वैज्ञानिक विषयों पर लेखन की प्रवृत्ति जागृत करने के लिए युद्ध स्तर पर अभियान चलाने की आवश्यकता है। इस पर अनेक पहलुओं पर विचार करने पर सफलता की सम्भावना है। व्यवहार में यह देखा गया कि किसी एक परिवेश को छोड़कर दूसरे परिवेश में प्रवेश करने के लिए दृढ़संकल्प एवं आत्मबल की आवश्यकता है। इसका सबसे ज्वलन्त उदाहरण है कि 1921 में एकमात्र महात्मा गांधी के आह्वान पर कट्टरपन्थियों तक ने विदेशी वस्त्रों को तिलांजलि देकर देशी वस्त्र अपनाए थे। वही प्रवृत्ति हिन्दी में विज्ञान लेखन के प्रति भी अपनानी होगी, तभी कल्याण होगा। सबसे बड़ी चुनौती अंग्रेजी की तुलना में हिन्दी की पुस्तकों को सर्वग्राह्य बनाना है। इसमें अनेक छोटी छोटी बातों पर बल देने की आवश्यकता है।

विज्ञान लेखन में अक्सर सम्मेलनों में अध्यक्षों एवं राजनेताओं को यह कहते सुना जाता है कि हिन्दी में पारिभाषिक शब्द बहुत क्लिष्ट हैं। ऐसी बात नहीं है। इसमें मेरे विचार में शब्दों की क्लिष्टता उनके प्रचलन के अभाव में प्रतीत होती है। एक बार हिन्दी शब्द के ढर्रे पर आ जाने पर यह अवरोध अपने आप समाप्त हो जाएगा ऐसा मेरा विश्वास है। जो शब्द अधिक क्लिष्ट प्रतीत होते हैं उनका चयन कर भारत सरकार की पारिभाषिक शब्दकोश समिति पर अपने सुझाव के साथ भेज दिया जाए तो मुझे विश्वास है कि उसका कुछ न कुछ हल अवश्य निकाल लेंगे। इसमें अधिक

परेशान होने की आवश्यकता नहीं है। ऐसे सुझावों का भारत सरकार का शब्दावली आयोग हमेशा स्वागत करता है और तदनुसार इसमें आवश्यक परिवर्तन कर देता है। इसी के लिए आयोग भारतवर्ष में विविध कार्यशालाओं का आयोजन कर विद्वानों के सुझावों पर विचार-विमर्श करता है जैसा कुछ वर्ष पूर्व जयपुर में कार्यशाला के आयोजन में मैं सम्मिलित हुआ था।

इन पारिभाषिक शब्दों से सम्बन्धित मौलिक कठिनाई के बावजूद मेरा विज्ञान लेखको से विनम्र निवेदन है कि क्लिष्ट परिभाषिक शब्दों के आगे उसका सामान्य भाषा में स्पष्टीकरण करते हुए कोष्ठक में प्रचलित अंग्रेजी शब्दों को अवश्य इंगित कर दें ताकि पाठक की शब्दार्थ सम्बन्धी सारी कठिनाई तत्काल दूर हो जाए।

इसके अतिरिक्त विज्ञान लेखकों से मेरा यह भी निवेदन है कि विषय की व्याख्या करते समय सरल एवं बोधगम्य शब्दों का प्रयोग करने में कदापि न चूकें ताकि पुस्तक पढ़ते समय उनको ऐसा प्रतीत हो कि वे कोई रोचक पुस्तक पढ़ रहे हैं। इसके साथ साथ लेखक को हमेशा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि किसी भी परिस्थिति में पुस्तक के स्तर एवं गरिमा में आँच न आवे।

जहाँ तक विज्ञान पुस्तकों को पाठकों द्वारा अपनाने का प्रश्न है मेरा दृष्टिकोण यह है कि उक्त ग्रन्थों से सम्बन्धित पाठकों की प्रतिक्रिया तथा इनके सुझावों का हमेशा ध्यान रखते हुए पुस्तक के अगले संस्करण में तदनुसार आवश्यक संशोधन, परिवर्तन एवं परिवर्धन करते रहें। यदि इन छोटी छोटी बातों को अपनाया गया तो मुझे विश्वास है कि सभी क्षेत्रों में विज्ञान लेखन को सम्बल प्राप्त होता रहेगा।

इसी सन्दर्भ में मैं इस बात पर भी बल देना चाहूँगा कि दिन दूनी रात चौगुनी विज्ञान प्रगति को ध्यान में रखते हुए विज्ञान पुस्तकें सीमित संख्या में प्रकाशित हों जिससे एक साल में उसकी सभी प्रतियाँ बिक जाया करें। यदि यह सम्भव न हो तो यह चेष्टा करते रहना चाहिए कि पुस्तक सम्बन्धी नवीनतम अनुसन्धान एवं सूचना से सम्बन्धित कुछ पन्ने पुस्तक के अन्त में अवश्य जोड़ दिए जाएँ।

कुछ व्यावहारिक बातें

अब विज्ञान लेखन में कुछ व्यावहारिक सिद्धान्तों पर चर्चा करना आवश्यक है ताकि लेखन समस्या का समुचित हल निकलता रहे।

विज्ञान लेखन में सबसे बड़ा दोष हमारे प्रशासन का है। जिस प्रकार इस देश की आबादी और बेरोजगारी बढ़ रही है हर वर्ग यह सोचने लग गया है कि आधुनिक शिक्षा का आमूल चूल परिवर्तन कर उसको 'रोजगारपरक' बनाया जाए। इसी प्रकार विज्ञान लेखन को भी नौकरी एवं नियुक्तिपरक बनाया जाए। इसमें प्रशासन एवं समाज के सभी बुद्धिजीवियों से निम्नलिखित विनम्र निवेदन है :-

1. विज्ञान लेखन को लेखक की वांछित योग्यता का अंग माना जाए।

2. जिस प्रकार किसी शैक्षणिक पद पर अनुसन्धान एवं उसी विषय में पीएच०डी० को वरीयता दी जाती है उसी प्रकार तत्सम्बन्धी विज्ञान पर लिखी पुस्तक को भी योग्यता का प्रमाण मानकर पीएच०डी० के विकल्प के रूप में मान्यता दी जाए। अर्थात् जो उक्त विषय में पीएच०डी० न हों उनकी पुस्तक को समकक्ष मानकर उपयुक्त पद पर चयन किया जाए।

3. अभी अभी मुझे ज्ञात हुआ है कि मानव संसाधन मन्त्रालय के समक्ष यह समस्या विचारणीय

है कि हिन्दी में विज्ञान विषयक प्रवक्ता को प्रति लेक्चर अतिरिक्त मानदेय पारितोषिक रूप में दिया जाए। इसी प्रकार हिन्दी में उत्तर देने वाले विद्यार्थी को भी अतिरिक्त अंक (ग्रेस मार्क) देने की व्यवस्था की जाए।

4. जिस प्रकार विश्वविद्यालयों में मेरिट प्रमोशन की योजना है उसमें विज्ञान पर लिखी पुस्तक को ध्यान में रखकर अध्यापक के शिक्षण काल में कुछ वर्ष की कमी की जाए।

5. अच्छी पीएच०डी० थीसिस को हिन्दी में प्रकाशन की योजना शासन एवं प्रशासन के स्तर पर चलाई जाए।

6. जिन वैज्ञानिक पुस्तकों का प्रकाशन हो चुका है उनका पाठ्यक्रम में समावेश कर उन पर अमल करने की यथासम्भव चेष्टा की जाए ताकि धीरे धीरे वे अंग्रेजी पुस्तकों का स्थान ले सकें।

यह तो रहा विज्ञान लेखन सम्बन्धी समस्याओं का समाधान। अब इसका दूसरा पक्ष ग्रन्थ प्रकाशन का है। यह लेखन से भी विकराल समस्या है।

विज्ञान लेखन के पश्चात् लेखक उक्त ग्रन्थ के प्रकाशन के निमित्त दर दर की धूल फाँकता है और प्रकाशक उनको फूटी आँख से भी नहीं देखता। यहाँ पर सरस्वती और लक्ष्मी की आपसी होड़ स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। यही कारण है कि एक ग्रन्थ के प्रकाशन के पश्चात् प्रकाशक का एक नया मकान बन जाता है परन्तु लेखक का अपना घर तक गिरवी रख जाता है।

निजी प्रकाशक यदि किसी ग्रन्थ के प्रकाशन के लिए तैयार हो भी जाता है तो वह उक्त ग्रन्थ को कौड़ियों के मोल खरीदने की चेष्टा करता है, चाहे उक्त पुस्तक की व्यवहार में उपादेयता कितनी भी अधिक क्यों न हो। ऐसे प्रकाशक उक्त पुस्तक को प्रकाशित करने में वर्षों लगा देते हैं। ऐसी पुस्तक जब बाजार में आती है तो Out-dated होकर लाइब्रेरी की शोभा बढ़ाती है। इस प्रकार से लाचार प्रतिभावान लेखक दूसरी पुस्तक के लिखने का नाम तक नहीं लेता। इससे लेखक की प्रतिभा का पलायन होता है।

जहाँ तक भारत सरकार द्वारा संचालित हिन्दी संस्थानों का प्रश्न है उनकी आर्थिक हालत निजी प्रकाशकों से भी बदतर है तथा उनका एकमात्र प्रयोजन मात्र वार्षिक पुरस्कार बाँटना है और समाज से वाहवाही लूटना है।

इस गम्भीर समस्या का यदि समाधान न निकला तो विज्ञान लेखन का कार्य कभी पूर्ण नहीं होगा। इसमें आपकी विज्ञान परिषद् ऐसी संस्था का योगदान प्रमुख है। इसके अन्तर्गत इस प्रकार की संस्था द्वारा अच्छी प्रामाणिक विश्वविद्यालय स्तर की पुस्तकों का प्रकाशन प्रमुख है। यदि इस सम्मेलन में विज्ञान लेखन की इन समस्याओं पर विचार किया गया तो इसको आज की सबसे बड़ी उपलब्धि माना जाएगा। ❑

मोती झील
पो० महमूरगंज, वाराणसी

सबसे बड़ी चुनौती – वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास

डॉ० सुप्रभात मुखर्जी

यदि हम इस बात पर विचार करें कि समाज में विज्ञान लेखन की क्या आवश्यकता है तो दो कारण प्रमुख रूप से हमारे सामने उभरते हैं। पहला जन साधारण को वैज्ञानिक तथ्यों, खोजों तथा विज्ञान द्वारा प्रदत्त उपयोगी संसाधनों की जानकारी देना और दूसरा जनसाधारण में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास।

यदि हम उपलब्ध वैज्ञानिक साहित्य और सामाजिक परिवेश पर दृष्टिपात करें तो हम पाएँगे कि लगभग सारा बल वैज्ञानिक तथ्यों, खोजों तथा विज्ञान के द्वारा प्रदत्त भौतिक संसाधनों पर ही है। विज्ञान के पाठ्यक्रमों को देखिए, विज्ञान के शिक्षकों को देखिए, वैज्ञानिकों की जीवन शैली देखिए, उनकी सोच और प्रवृत्तियों पर गौर कीजिए– बात साफ हो जाएगी। आज लोगों को वैज्ञानिक तथ्यों, खोजों का ज्ञान पहले से बहुत अधिक है। लोग विज्ञान द्वारा प्रदत्त संसाधनों का उपयोग भी भरपूर कर रहे हैं परन्तु जनसाधारण के कितने प्रतिशत के चिन्तन को विज्ञान प्रभावित कर पाया है ? क्या जनसाधारण विज्ञान के दर्शन को आत्मसात कर सका है ? उत्तर के लिए आइए कुछ ज्वलन्त समस्याओं पर दृष्टि डालें। विगत दशकों में क्या साम्प्रदायिकता घटी है ? क्या जातिवाद, पंथवाद पर अंकुश लगा है ? क्या व्यक्ति पहले से ज्यादा न्यायप्रिय हुआ है ? क्या व्यक्ति अधिक स्वास्थ्यकारी जीवन शैली अपना सका है ? क्या हवा, पानी, मृदा और ध्वनि प्रदूषण में कोई कमी दिख रही है ? क्या आपसी प्रेम, सौहार्द, विश्वास बढ़ा है ? सभी प्रश्नों के उत्तर स्वतः स्पष्ट हैं। आज के वैज्ञानिक युग में भी हम जीवन और समाज में अधिकांशतः अव्यवस्था का ही बोलबाला पाते हैं। हमारे अधिकांश कार्यकलाप कुसंस्कारों और मताग्रहों से परिचालित होते हैं। उनकी जड़ में तार्किक विवेचन और सूक्ष्म निरीक्षण का दृढ़ आधार नहीं होता। विज्ञान से जुड़े लोग भी अपने व्यवहारिक जीवन में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का परिचय नहीं देते। इसका कारण है वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास का अभाव और विज्ञान द्वारा प्राप्त भौतिकता की वृद्धि।

विज्ञान की शिक्षा और अब तक हुए विज्ञान लेखन से वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास में अपेक्षित सफलता अभी नहीं प्राप्त हो सकती है। हमारी सोच पहले से अधिक वैज्ञानिक हुई नहीं प्रतीत होती। आज लोगों का अहं (Ego) बढ़ता जा रहा है। अहं कम होने से ही वैज्ञानिकता आती है, नहीं तो बड़ा से बड़ा वैज्ञानिक अवैज्ञानिक आचरण कर सकता है। किसी धर्म ग्रन्थ को कंठस्थ करने और उसके अनुरूप सदाचरण करने में जो अन्तर है वही अन्तर विज्ञान से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त करने और उसके अनुरूप दृष्टिकोण अपनाकर कार्य करने में है। यहाँ पर यह स्पष्ट करना

आवश्यक है कि कुछ अंधविश्वास और रुढ़ियाँ अवश्य दूर हुई हैं परन्तु सामाजिक परिवेश पहले से अधिक वैज्ञानिक हो गया ऐसा नहीं है। क्योंकि यदि सोच में परिवर्तन होता तो हमारे समाज की जो वर्तमान समस्याएँ हैं उनमें कमी आती। उदाहरण के लिए पालीथीन के प्रदूषण को ही लें। अधिकतर लोगों को दूरगामी दुष्परिणाम भले ही ज्ञात न हों पर यह तो पता है कि यह जानवरों की आँतों में फँस जाता है, नालियों को अवरुद्ध कर देता है। परन्तु क्या कुछ हो पा रहा है ? गाँवों को छोड़िए, शहरों में जहाँ प्रबुद्ध वर्ग रहता है पालीथीन के थैलों के निपटान की क्या कोई व्यवस्था बन पाई है ? कानून तो बन गया है, रैलियाँ और संगोष्ठियाँ भी खूब हुईं पर व्यवस्था में क्या कोई परिवर्तन हो सका ? जानकारी तो है पर निष्क्रियता नहीं हटी क्योंकि दृष्टिकोण नहीं बदला– वैज्ञानिक नहीं हुआ। सभी को इंतजार है– "बिल्ली को घंटी बाँधे कौन ?" यही स्थिति कमोबेश अन्य समस्याओं के लिए भी सच है। जब दृष्टिकोण बदलेगा तभी कुछ सम्भव है। तभी निहित स्वार्थों के चंगुल से निकला जा सकता है।

अब प्रश्न उठता है कि हम वैज्ञानिक दृष्टिकोण क्यों नहीं अपना पाए ? इसका प्रमुख कारण है कि विज्ञान को जनसाधारण के बीच में चमत्कार के रूप में प्रस्तुत किया गया। ऐसा आभास दिया गया कि वह कुछ विशिष्ट लोगों के लिए है। आम आदमी के जीवन से उसका कुछ लेना देना नहीं है। वैज्ञानिक कार्यशैली की झाँकी जनसाधारण के सामने नहीं प्रस्तुत की गई। विद्यार्थियों को विज्ञान की जानकारी तो दी गई परन्तु वैज्ञानिक पद्धति का ज्ञान वे आत्मसात नहीं कर सके। वैज्ञानिक अभिरुचि के अभिलक्षणों को जनसाधारण ही नहीं वरन् वैज्ञानिक भी आत्मसात करके उन्हें अपने जीवन का मूलभूत अंग नहीं बना सके। यह स्पष्ट नहीं हो सका कि विज्ञान का क्षेत्र हमेशा निष्पक्ष और सार्वजनिक रहा है। व्यक्तिवाद, अन्धविश्वास की तनिक भी संभावना इसमें नहीं होती। लोगों ने विज्ञान का मतलब स्कूल कॉलेजों में पढ़ाए जाने वाले कतिपय विषयों का ज्ञान ही समझा। विज्ञान लेखन यह स्पष्ट नहीं कर पाया कि विज्ञान का क्षेत्र उन विषयों से बहुत आगे है जो साधारणतः विश्वविद्यालयों में पढ़ाया जाता है। कोई भी सुव्यवस्थित ज्ञान ही विज्ञान है और विज्ञान के युग का वास्तविक पर्याय सुव्यवस्था ही है।

विज्ञान को कुछ इस प्रकार भी प्रस्तुत किया गया है कि वह धर्म का विरोधी है जबकि कोई भी सच्चा धर्म विज्ञान का विरोधी नहीं है। साथ ही यह भी सच है कि स्वयं वैज्ञानिकों द्वारा भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न करने के लिए गम्भीर प्रयास नहीं किए गए। लगता है कि यह मान लिया गया कि विज्ञान की प्रगति के साथ वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास स्वतः ही हो जाएगा। पर ऐसा हो नहीं पाया और हमने विज्ञान को एक व्यवसाय के रूप में अपनाया। हर व्यवसाय का परम लक्ष्य होता है पैसा कमाना। हमने विज्ञान को पैसों के लिए अपनाया– जीवन दर्शन के रूप में नहीं। पैसों के लिए अपनाया विज्ञान हमें भीतर तक छू नहीं पाया।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास में भाषा भी बहुत अधिक बाधक रही है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के प्रसार की भाषा आज भी मुख्य रूप से अंग्रेजी है। विदेशी भाषा होने के कारण हमारी संस्कृति और विज्ञान में तारतम्य नहीं स्थापित हो सका और वैज्ञानिक दृष्टिकोण जनमानस में रच बस नहीं पाया।

अतः इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखन की सबसे बड़ी चुनौती इस प्रकार का विज्ञान लेखन होगा जो जनसाधारण को यहाँ तक प्रभावित कर सके कि उनकी सोच, जीवन शैली में परिवर्तन हो और केवल जानकारी के स्तर तक सीमित न रहे, कुछ परिवर्तन करने हेतु भी बाध्य कर सके। वैज्ञानिकों और विज्ञान लेखकों को एक ऐसी नई पीढ़ी तैयार करने के लिए प्रयास करना होगा जिसमें भारतीय संस्कृति के अनुरूप आध्यात्मिक श्रद्धा और वैज्ञानिक दृष्टिकोण साथ–साथ हो। यह नई पीढ़ी ही आज की संकुचित मनोवृत्ति का नाश करके समाज को सही दिशा देने में सक्षम होगी। ❑

विभागाध्यक्ष
वनस्पति विज्ञान
राजकीय महाविद्यालय,
नैनी, इलाहाबाद

हिन्दी में लोकप्रिय विज्ञान लेखन : भविष्य एवं समस्याएँ

डॉ० दिनेश मणि

निःसंदेह, भारत की सभी भाषाएँ समृद्ध हैं और वैज्ञानिक विचारों के आदान-प्रदान में सक्षम हैं परन्तु विज्ञान व तकनीकी के क्षेत्र में हिन्दी की अहम भूमिका है। राजभाषा हिन्दी को जो भारतीयों के एक बड़े वर्ग द्वारा बोली व समझी जाती है, इन भारतीय भाषाओं में सामंजस्य स्थापित करने के लिए एक कड़ी का काम करना है। यद्यपि हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य के सृजन व इसके उपयोग की दिशा में काफी कार्य हो चुका है, फिर भी हमें अभी बहुत दूर जाना है। जापान व चीन जैसे कई देशों में उनकी वैज्ञानिक प्रगति में वहाँ की मूल भाषा ने अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

हमारे देश में जहाँ आम लोगों में 'वैज्ञानिक साक्षरता' बहुत कम है या गलत रूप में है और जहाँ अंधविश्वास व जड़ता है या वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव है, लोकप्रिय विज्ञान लेखकों का बहुत बड़ा महत्व है। विज्ञान समय के साथ जिस तेजी से प्रगति करता है उससे बहुत सा प्राचीन साहित्य पुराना पड़ता जाता है अतः वह वर्तमान में उपयोगी नहीं रह जाता इसलिए लोकप्रिय विज्ञान के सतत् लेखन की आवश्यकता बनी रहती है। हमारे समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग विज्ञान एवं तकनीकी विषयों को समझने के लिए हिन्दी में प्रकाशित विज्ञान रचनाओं पर आश्रित है। अतः ऐसी दशा में हिन्दी के लोकप्रिय विज्ञान लेखकों के लिए अपने इस दायित्व को समझना और भी आवश्यक है। यदि हम अपने समाज को विज्ञान रचनाओं के नाम पर विदेशी भाषाओं में मात्र मनोरंजनार्थ लिखी गई रचनाओं के मनचाहे अनुवाद को पढ़ाते रहेंगे तो समाज कभी भी समय की जरूरत के अनुरूप नहीं ढल सकेगा।

यह सर्वविदित तथ्य है कि हिन्दी साहित्य के आरंभिक विकास में 'कवि वचन सुधा', 'हिन्दी प्रदीप', 'सरस्वती', 'माधुरी', 'सुधा', 'विशाल भारत', 'वीणा', 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका', 'सम्मेलन पत्रिका' तथा 'हिन्दुस्तानी' जैसी पत्रिकाओं का प्रचुर योगदान रहा है। यदि इन पत्रिकाओं के शुरू शुरू में बीस-पच्चीस अंकों को उठाकर देखा जाए तो पता चलेगा कि इनके हर अंक के साहित्य के साथ साथ विज्ञान लोकप्रियकरण की दिशा में पर्याप्त लेखन होता रहा जिसमें हिन्दी के विशुद्ध साहित्यकार भी जोश-खरोश के साथ अपना अपना सहयोग दे रहे थे। हिन्दी के स्वनामधन्य कथाकार गुलेरी जी 'सरस्वती' में विशुद्ध वैज्ञानिक विषयों पर लगातार निबन्ध लिख रहे थे। यहाँ कि कि सरस्वती के संपादक पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी स्वयं, आचार्य चतुरसेन शास्त्री, महापंडित राहुल सांकृत्यायन प्रभृत विद्वान भी हिन्दी में वैज्ञानिक विषयों पर लिखते हुए हिन्दी के भंडार को समृद्ध कर रहे थे। इन लोगों के अन्तःकरण में अवश्य ही हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत वैज्ञानिक साहित्य को

समेटने की एवं उसे प्रतिष्ठित करने की उत्कट अभिलाषा थी।

पर इसे विडम्बना ही कहा जाएगा कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ऐसी प्रवृत्ति नहीं दिखाई पड़ती। यही कारण है कि हिन्दी में विज्ञान लेखन अलग थलग पड़ गया है और शुद्ध साहित्य से एक तरह बहिष्कृत भी। अन्य भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक साहित्य को जिस तरह साहित्य की परिधि में रखकर विज्ञान लेखकों का आदर सम्मान किया जाता है, दुर्भाग्यवश वह हिन्दी में नहीं दिखाई दे रहा है। कारण स्पष्ट है कि हिन्दी वाले अपने प्रारंभिक इतिहास को नहीं देखते जब विज्ञान के तमाम लेखकों को 'मंगला प्रसाद' जैसे प्रतिष्ठित पुरस्कार से सम्मानित किया जाता रहा और हिन्दी साहित्य सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशनों की विज्ञान परिषदों के सभाध्यक्षों के रूप में विज्ञान के वरिष्ठ लेखकों को सम्बोधित करने का अवसर दिया जाता रहा। स्वतंत्रता के पूर्व विज्ञान और विशुद्ध साहित्य के लेखकों में कोई भेदभाव नहीं था। हम उसी एकरसता एवं भाईचारे की बात कर रहे हैं और हिन्दी वालों पर उसी के विस्मरण का आरोप लगाते हुए यह कहना चाहते हैं कि हिन्दी साहित्य के इतिहास में हिन्दी वाङ्मय की परिपूर्णता के लिए वैज्ञानिक साहित्य को भी शामिल किया जाए। इसके बिना हिन्दी साहित्य एक अमूल्य निधि से वंचित रह जाएगा। तभी हिन्दी वाले गर्वपूर्वक यह कह सकेंगे कि उनका साहित्य सर्वांगीण है और विश्व साहित्य में उसका प्रतिनिधित्व है।

लोकप्रिय विज्ञान लेखन स्वयं में विशेष प्रकृति का कार्य है जिसके सम्बन्ध में निम्न निर्देशों का पालन किया जाना चाहिए :-

1. लोकप्रिय विज्ञान लेखन सरल, सहज और आम लोगों की समझ में आने लायक तथा जहाँ तक हो सके, मनोरंजक भी हो। इसमें यथासम्भव क्लिष्ट शब्दावली का प्रयोग न हो, बल्कि तकनीकी शब्द का अर्थ सरल भाषा में दिया जाए। हो सकता है कि इस प्रकार के लेखन की भाषा संक्षिप्त न होकर वर्णनात्मक हो।

2. लोकप्रिय विज्ञान लेखन सर्वदा देश की संस्कृति, सामाजिक व्यवस्था और प्रचलित स्थितियों से जुड़ा हो ताकि आम लोग इसे पढ़ने व समझने के लिए आकर्षित हों।

3. लोकप्रिय विज्ञान लेखन द्वारा बासी ज्ञान को परोसना ऐसे लेखन के महत्व को कम करता है। नए आविष्कारों, प्रयोगों व विकास कार्यों पर लोकप्रिय विज्ञान लेखन जरूरी है ताकि आम लोगों की 'वैज्ञानिक साक्षरता' अद्यतन हो सके।

4. विज्ञान के तथ्यों को इस प्रकार प्रस्तुत करें ताकि निराधार मान्यताएँ ध्वस्त हों, अंधविश्वास दूर हों और लोगों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण पैदा हो।

लोकप्रिय विज्ञान लेखन का मूल उद्देश्य लोगों की रुचि को परिष्कृत करके उनमें सत्य को जानने एवं समझने की दृष्टि का विस्तार करना एवं उनमें प्रकृति को समझने की शक्ति विकसित करके उन्हें अंधविश्वासों से मुक्त करना है। ऐसा विज्ञान जो जन-सामान्य के ज्ञान वर्द्धन हेतु रोचक ढंग से लिखा, कहा या प्रदर्शित किया जाए जिससे कि सैद्धान्तिक पक्षों में उलझे बिना वैज्ञानिक तथ्यों की जानकारी हो सके, वह लोकप्रिय विज्ञान लेखन कहलाता है। सच्चा लोकप्रिय विज्ञान लेखक वही है जो 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' सोचे और लिखे। इसी से वह साहित्य में अमर रह सकेगा। लेखक का दायित्व गुरुतर होता है। उसकी दृष्टि जितनी दूरगामी होगी उतना ही अधिक समाज का कल्याण होगा। उसका कार्य कठिन इसलिए है कि उसे जनरुचि एवं विज्ञान की प्रगति में तालमेल बैठाकर लेखन करना होता है।

विज्ञान लेखन का अर्थ जनता को डराना नहीं अपितु उसमें विश्वास उत्पन्न करना है, उसे

आश्वस्त करना है। उसे ठगना नहीं, उसे लाभ पहुँचाना है। कभी भी चौंकाने वाले समाचारों को वरीयता न दें। जो सत्य है उसे ही अधिष्ठापित करें। ध्यानाकर्षण से अधिक आवश्यक है स्थायी विचार-वल्लरी का पल्लवन। जो भी लिखा जाए, महान उद्देश्य की पूर्तिस्वरूप हो। अनुकरण या पिष्टपेषण से बचें। लेखन का उद्देश्य समाचार या ज्ञान प्रदान करना ही नहीं होता। भाषा अथवा शैली सुधार या परिष्कार की दिशा में वह उपयोगी कदम होता है। जितना ही अधिक लिखा जाएगा, उतना ही निखार आएगा। कभी भी अच्छा लेखक एक रात में या एक ही पृष्ठ लिखकर नहीं बनता। अनवरत अभ्यास की आवश्यकता सभी को पड़ती है।

विज्ञान तथ्यों पर अवलम्बित है अतः विज्ञान की भाषा का एकमात्र उद्देश्य सूचना देना है जबकि ललित साहित्य में भाषा का उपयोग भावनाओं को उभाड़ने के लिए किया जाता है। लेकिन तथ्य तथा ललित कल्पना या कल्पना विलास में सर्वथा विलगाव नहीं है। ऐसा नहीं है कि विज्ञानी तथ्यों की तलाश करते हुए कल्पना विलास के क्षेत्र में प्रवेश न करता हो। हाँ, एक सीमित मात्रा में प्रवेश करता है। विज्ञान में नई संकल्पनाओं के विकास के साथ ही वैज्ञानिक भाषा का विकास होता है क्योंकि भाषा को नए शब्द देने पड़ते हैं और पुराने शब्दों को बदलना पड़ता है। इस तरह से सामान्य भाषा वैज्ञानिक भाषा बनती जाती है। इस क्रम में ऐसा भी समय आ सकता है कि जब विज्ञान की भाषा अत्यंत जटिल या क्लिष्ट बन जाए और संकल्पनाओं में परिवर्तन के साथ उसे त्यागना पड़ जावे। उदाहरणार्थ 18वीं शती में सुप्रसिद्ध रसायनज्ञ लेवोजिए के समय रसायन की भाषा का जो स्वरूप था वह बाद में आमूल रूप से परिवर्तित हो गया।

भाषा की जटिलता सफल सम्प्रेषण का सबसे बड़ा शत्रु है। आज न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त आम आदमी भी आसानी से समझ लेता है, क्योंकि उन्होंने एक सेब के गिरने की प्रक्रिया के माध्यम से अपने सिद्धांत को प्रस्तुत किया। इसी तरह बोल्ट्जमैन सरीखे वैज्ञानिक बिलियर्ड की गेंदों के टकराव द्वारा गैसों के अणुओं का व्यवहार हमें समझा सके। सम्प्रेषण स्वयं में एक कला भी है और विज्ञान भी। यदि वैज्ञानिक सामग्री का कलात्मक प्रस्तुतीकरण नहीं होता तो लेखन अरुचिकर और अपठनीय होता जाता है। पर दूसरी ओर कलात्मकता चाहे जितनी भी डाल दी जाए, लेखन यदि तथ्यात्मक निश्चयात्मकता से अभावग्रस्त है तो लेखन कभी सरल, सुपाच्य और रुचिकर नहीं हो सकता। ❑

शीलाधर मृदा शोध संस्थान
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

21वीं सदी का विज्ञान साहित्य किसके लिए ?

डॉ० हेमचन्द्र जोशी

मैं यदि अपने अनुभवों से कुछ संकेत व्यक्त करूँ तो पढ़ने वाले साहित्य का भविष्य हमारे देश में उत्साहवर्धक प्रतीत नहीं होता। मैं चाहता तो हूँ कि मेरा अनुभव केवल मेरा हो तथा यह देश के अनुभव का प्रतिनिधित्व नहीं करता हो परंतु मेरे विचार से ऐसा सत्य नहीं है। आज तेजी से भागती दुनिया में साहित्य के लिए किसे फुरसत है। मैं, जो कि अपने विद्यार्थी जीवन में ही प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, शरत चंद्र, टालस्टाय, थामस हार्डी, चार्ल्स डिंकन्स तथा एच.जी. वेल्स इत्यादि की सभी रचनाएँ पढ़ गया था आज के समकालीन लेखकों के नाम भी नहीं जानता। मैं नहीं समझता कि आज के विद्यार्थी भी नए लेखकों व नए साहित्य से उतने अवगत हैं जितना कि मेरी पीढ़ी के लोग समकालीन साहित्य की पकड़ रखते थे। हमारे देश के बारे में तो यथास्थिति मुझे यही लगती है। हो सकता है अन्य देशों में यह स्थिति कुछ भिन्न हो। यह तो रही उस साहित्य की बात जिसे हम ज्ञानवर्धन के साथ मनोरंजन की दृष्टि से पढ़ते थे। विज्ञान साहित्य की स्थिति तो और भी दयनीय है। अधिकतर लेखक भी अपने लेख को दुबारा नहीं पढ़ते।

यदि आप मेरी इन अटपटी बातों से सहमत हैं तो हमें 21वीं सदी के विज्ञान साहित्य को संवारने व सजाने के लिए नीति बनाने से पहले किताबी साहित्य की दुर्दशा के कारणों को जाँचने व परखने के प्रयास करने होंगे। कुछ लोग मुझ से असहमत भी होंगे तथा कहेंगे कि फिर इतनी किताबें क्यों छप रही हैं। बाजार में नित नई पत्रिका आ जाती है, नए नए अखबार निकलते हैं। जहाँ तक अखबारों व पत्रिकाओं की बात करें केवल वे ही अखबार व पत्रिकाएँ सफलतापूर्वक चल रहे हैं जो कि या तो विज्ञापनों से लदी हैं या जिन्हें चलाने के लिए व्यापार जगत के महारथियों के लाभ निहित है या फिर जो कि राजकीय, धार्मिक व सामाजिक अनुष्ठानों के अनुदान पर निर्भर हैं। इससे परे, विशेषतः हिन्दी की ऐसी कोई पत्रिका बाजार में नहीं है जो लाभ कमा रही हो। हिन्दी विज्ञान पत्रिकाओं की दशा तो और भी दयनीय है। इनकी तुलना यदि हानि में चल रही सरकारी इकाइयों से की जाए तो त्रुटि न होगी।

पुस्तकों का तो कहना ही क्या, पुस्तकालय अब संग्रहालयों में बदलते जा रहे हैं। पाठ्यक्रम की पुस्तकें तो कभी कभार छात्र उठा भी ले जाते हैं। उपन्यास कहानी वर्ग में तो किताबें धूल एकत्रित कर रही होती हैं। एक बार कोई हिम्मत वाला साहित्यप्रेमी वहाँ चला भी गया तो दूसरी बार किताबों पर पड़ी धूल उसके दुस्साहस को चुनौती देती है। साहित्य के अधिकतर विद्यार्थी भी कुंजियों में साहित्य की विवेचना ढूँढते हैं। साहित्यकार की मूल रचना को पढ़ने का समय उनके पास भी नहीं है।

किताबी साहित्य के संदर्भ में इतना निराशावादी लगते हुए भी मैं निराश नहीं हूँ तथा चाहूँगा

कि आप भी निराश न हों। क्योंकि यद्यपि किताबी साहित्य दुर्दशा में है मगर साहित्य का समाज में वही स्थान है जो कि पहले था। लोग साहित्य ही नहीं अच्छा साहित्य चाहते हैं, पर किताब में नहीं। उन्हें साहित्य पर्दे पर चाहिए। किताब खोलकर उसे पढ़ना समझना आज के बदलते वैज्ञानिक परिवेश में बोझ सा लगने लगा है। मैंने गाँधी जी पर लिखे साहित्य को पढ़ने में कम से कम 100 घंटे तो लगाए ही होंगे परन्तु असली गाँधी को लार्ड एटनब्रो की केवल तीन घंटे की फिल्म देखकर ही पहचान पाया। मेरा आशय यह है कि आज साहित्य को भी लोग फास्ट फूड की तरह ग्रहण करना चाहते हैं। टी०वी० या कम्प्यूटर का स्विच दबाया और खो गए दुनिया की फ़िज़ा में। इसी बीच मोबाइल में भी बात हो गई। फैक्स मैसेज भी पढ़ लिया गया। आइ०एस०डी० तथा एस०टी०डी० संपर्क भी हो गए। एकसाथ कितने काम ! अब आप ही बताइये इस परिदृश्य में क्या करेगी बेचारी किताब। जो किताब के चक्कर में पड़ा वह तो किताब में ही खो जाएगा। दुनिया इतनी देर में कहाँ से कहाँ पहुँच जाएगी। विद्यार्थियों की तो बात ही क्या। उनके बस्तों की तुलना गधे के बोझ से की जाती है। अन्य साहित्य के लिए न उनके पास समय है, न ही जिज्ञासा।

इस समां में लोगों को किताबों की ओर खींचना कितना दुष्कर कार्य है यह समझाने के प्रयास मैं कर रहा था। इसका अर्थ यह नहीं है कि आप सब यह नहीं समझते। मैं केवल अपना पक्ष स्पष्ट कर रहा हूँ। इक्कीसवीं सदी में यह कार्य और भी दुष्कर हो जाएगा। लोग तो अब 'एन्थ्रेक्स' के भय से चिट्ठी पढ़ने से भी कतराने लगे हैं। लेकिन जो भी हो, साहित्य का महत्व कम नहीं हो सकता बल्कि बढ़ेगा ही। इसलिए किसी न किसी को किसी भी प्रकार साहित्य तो लिखना पड़ेगा। आशय यह है कि साहित्य तो लिखा ही जाएगा– चाहे कलम से लिखा जाए या सीधे कम्प्यूटर पर टिक टिक कर सेव कर दिया जाए। अब यह लाखों पाठकों के लिए नहीं बल्कि करोड़ों दर्शकों के लिए लिखा जाएगा। लेकिन आपको साहित्य को दर्शकों तक ले जाने के लिए एक और माध्यम चाहिए। अर्थात् रोजगार का एक और अवसर। अतः यदि हम आप अच्छा साहित्य लिखते हैं तो आपको जानने वालों की संख्या तो बढ़ेगी ही, साथ में आप समाज-कल्याण में भी भूमिका निभाएंगे। इसके लिए साहित्यकार को पठनीयता की सीमाओं को लांघ कर दर्शनीयता के मानदण्डों का ध्यान करना होगा। फिल्म निर्माता दर्शकों के मनोरंजन व ज्ञानवर्धन, व्यक्तिगत लाभ व विज्ञापन की राशि के बीच सामंजस्य कर आपकी रचना को चुनेगा। संदेश सामाजिक हो, दार्शनिक हो या वैज्ञानिक पर उसे लोगों के मनोरंजन, ज्ञावर्धन अथवा जीविकावर्धन से संबद्ध होना आवश्यक है। केवल उपदेशक लेख दर्शक दीर्घा में खरे नहीं उतरेंगे। कुशल फिल्मकार इन्हीं मानदण्डों पर आपकी रचना को तोलेंगे और आगे बढ़ रही इस सदी में उनका पैनापन निखरता ही जाएगा।

विज्ञान साहित्य को भी यदि अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचाना है तो उसकी सार्थकता इसी में निहित होगी कि लेख अधिक से अधिक लोगों के मनोरंजन, लाभ या जीविकावर्धन से जुड़ा हो। मनोरंजन के लिए लेख विज्ञान कथा के रूप में हो, लाभ के लिए लेख लोगों को रोजमर्रा की परेशानियों से निजात दिलाने वाला हो तथा जीविकावर्धन के लिए लेख ऐसी प्रौद्योगिकी से संबद्ध हो जिसे अपनाकर लोग व्यवसाय कर सकें। मैं इन तीन मानदण्डों पर ही लेखों को सीमित करने की बात नहीं करता लेकिन मूल बात यह है कि अंततोगत्वा दर्शक आपकी कहानी, सामग्री या रचना के प्रति आकृष्ट होने चाहिए।

मैं इस प्रसंग में अपना एक अनुभव यहाँ प्रस्तुत करना चाहूँगा। 'आविष्कार' पत्रिका में

प्रकाशित मेरे एक लेख 'फ्लोराइड प्रदूषण एवम् जन स्वास्थ्य' का संदर्भ देकर 'आज की बात' के स्टूडियो से मेरे पास फोन आया कि क्या मैं फ्लोराइड के बारे में टी०वी० पर कुछ बता पाऊँगा। मैंने अपनी सहमति दे दी। उसी शाम समयानुसार उनकी गाड़ी मेरे कार्यालय तक आ गई और कुछ ही समय में स्टूडियो पहुँच गया। निर्देशक की बातों से मुझे समझ में आया कि उन्होंने मुझे इसलिए बुलाया था कि लेख में लिखा गया था कि दिल्ली में कई स्थानों पर भूमिगत जल में 10 पीपीएम से अधिक फ्लोराइड है इसलिए उसका सेवन नहीं करना चाहिए। संदेश में दर्शकों के लिए यह एक लाभकारी सूचना थी। जो लेख मैंने एक महीने की खोजबीन तथा वर्षों के अनुभव के बाद लिखा था वह दस मिनट में फिल्म में परिवर्तित हो गया तथा दूसरे ही दिन लाखों दर्शकों तक पहुँच गया। अतः वैज्ञानिक प्रगति आपके साहित्य को वस्तुतः अधिक लोगों तक पहुँचाने में सक्षम है यद्यपि उसे पढ़ने वालों की संख्या भले ही कम हुई हो।

पर्यावरण के प्रति सामाजिक जागरूकता तथा इसके संरक्षण के लाभों ने लोगों को पर्यावरण पर साहित्य की ओर आकृष्ट किया है। यही कारण रहा है कि पर्यावरण व स्वास्थ्य विषय पर पिछले दो दशकों में अधिक से अधिक लिखा गया तथा उतनी ही फिल्में भी बनीं क्योंकि यह विषय समाज के हितों से सीधा जुड़ा है। ये ऐसे विषय हैं जो केवल 21वीं सदी ही नहीं, सदा ही समाज के लाभ से जुड़े रहेंगे। डिस्कवरी व नेशनल जियोग्राफिक चैनल विश्व स्तर पर पर्यावरण संरक्षण की प्रासंगिकता को परिलक्षित करते हैं।

लोकहित या जनहित के अतिरिक्त क्षेत्रीय व राष्ट्रीय हित भी लेखों की परिसीमा में आते हैं। राष्ट्रीय हित के संदर्भ में बासमती पेटेंट के मामले में देश में यथोचित साहित्य की कमी आड़े आयी जिसके लिए वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद् के महानिदेशक डॉ० माशेलकर को स्वीकारना पड़ा कि "बासमती मामले में एक बात स्पष्ट हो गई है कि इस विषय पर स्थानीय भाषाओं में बहुत अच्छी जानकारी उपलब्ध कराना आवश्यक हो गया है।" यदि यह जानकारी सरकारी रिपोर्टों के अलावा वैज्ञानिक पत्रिकाओं तक पहुँची होती तो शायद स्टार या जी टीवी में भी इसका व्यापक प्रसारण हो गया होता और इस मामले में भारत के राष्ट्रीय हितों की बेहतर पैरवी हो सकती थी। महानिदेशक का यह संकेत विज्ञान लेखकों के लिए एक चुनौती है क्योंकि विश्व व्यापार संगठन का पदार्पण हो चुका है। अब विश्व अर्थव्यवस्था में देशों की भागीदारी देशों की अर्थव्यवस्था का निर्धारण करेगी। भौतिक साजो-सामान के साथ साथ जैविक संसाधनों तथा संशोधन प्रविधियों तथा पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों के बौद्धिक अधिकारों व पेटेंटों का महत्व विश्व स्तर पर फैल चुका है। ऐसे परिवेश में विज्ञान साहित्य केवल मनोरंजन व व्यक्तिगत लाभ के लिए ही नहीं, राष्ट्र हित व उसकी सार्वभौमिकता के संरक्षण के लिए भी उत्तरदायी होगा। इसके लिए अब विज्ञान साहित्य को देश के पारम्परिक ज्ञान हल्दी, मेथी, अजवाइन, नीम इत्यादि वानस्पतिक सामग्री के महत्व को विश्व स्तर पर उजागर करना होगा जो कि केवल सूचनाओं को साहित्य में पिरोकर ही किया जा सकता है। जनजातीय स्तर पर चिकित्सा महत्व की वनस्पतियों का भण्डार तो उपलब्ध है परंतु इस पर रोचक व ज्ञानवर्धक साहित्य की नितान्त कमी है। इस सूचना को लोगों तक पहुँचाना उनके लिए तो लाभकारी होगा ही, इससे राष्ट्र के हितों की भी रक्षा हो सकेगी।

हमारा देश शाकाहारी खाद्य प्रवृत्ति में सबसे आगे है। आज वैज्ञानिक मंच में हम से कहीं आगे होने के बावजूद पश्चिम के अतिविकसित देश हमारी इस खाद्य प्रवृत्ति की ओर आकृष्ट हो रहे हैं

क्योंकि यह पद्धति स्वयं में पर्यावरण-संरक्षण का संदेश संजोए है जोकि पूर्णतया वैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित है। इसी प्रकार हमारी वास्तुकला, आयुर्वेद आदि ऐसी कई विधाएँ हैं जिनका आधार पूर्णतया वैज्ञानिक है। भारतीय संदर्भ में इक्कीसवीं सदी के विज्ञान साहित्य के परिप्रेक्ष्य में इन विषयों के वैज्ञानिक स्वरूप की विस्तृत विवेचना भी आज के युग की मांग है ताकि यह सूचना तथा आपके द्वारा सृजित साहित्य विश्व स्तर पर पहुँचकर स्वहित, जनहित तथा राष्ट्रीय हितों की भी रक्षा कर सके। ❑

प्राध्यापक
पर्यावरण विज्ञान संस्थान
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली-12

विज्ञान लेखन क्यों और कैसे

डॉ० रजनीकान्त

भारत एक कृषिप्रधान देश है। इसकी अधिकांश आबादी ग्रामीण दूरवर्ती क्षेत्रों में निवास करती है जहाँ विभिन्न भाषाएँ, आचार-विचार के तरीके तथा विविध रीति-रिवाज हैं। ऐसे समाज में अनेकों अंधविश्वास, मिथक तथा भ्रांतियाँ आज भी मौजूद हैं। हालांकि आजादी के बाद हमने काफी प्रगति की है परन्तु इसके आपेक्षिक लाभ जनसामान्य तक अभी भी पर्याप्त रूप से नहीं पहुँच पा रहे हैं। देश-विदेश में हो रहे नए-नए प्रयोगों, अनुसंधानों, नवीन तकनीकों एवं रोजमर्रा के जीवन में इनके उपयोग से सम्बद्ध सूचना जनसामान्य को पहुँचाना प्रत्येक वैज्ञानिक का कर्तव्य है, और यह तभी सम्भव हो सकता है, जब यह सूचना उस व्यक्ति, उस समाज को उन्हीं की भाषा में पहुँचाई जाए। तभी सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः की कल्पना साकार हो सकती है। तभी समाज में फैले अंधविश्वास एवं अज्ञानता को दूर किया जा सकता है। और यह कार्य संभव हो सकता है केवल साफ, सरल एवं ज्ञानवर्धक विज्ञान लेखन के द्वारा ही।

अब प्रश्न यह उठता है कि यह विज्ञान लेखन कौन करे ? वैज्ञानिक जिसके पास विषय की समझ है या फिर साहित्यकार जिसके पास शब्दों का भण्डार है। अगर देखा जाए तो यह पुनीत कार्य वह वैज्ञानिक ही बेहतर ढंग से कर सकता है जो इस कार्य से सीधा सम्बद्ध है यद्यपि इसके लिए वह अपने शब्दकोष तथा भाषा-शैली में सुधार के लिए निरन्तर प्रयासरत रहे। अब दूसरा महत्वपूर्ण पहलू है कि अच्छा विज्ञान लेखन कैसे किया जाए ? इसके लिए निम्न बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है :-

1. विज्ञान और साहित्य के संगम से ही जन-सुलभ साहित्य का सृजन हो सकता है।
2. भाषा में प्रवीणता और वैज्ञानिक विषयों में पारंगतता दोनों का मेल होना आवश्यक है।
3. मातृभाषा ही उत्तम एवं सफल माध्यम हो सकती है।
4. लोक प्रचलित भाषा और मुहावरों की सुगंध हो तभी जनसामान्य दिलचस्पी ले सकता है।

अन्य महत्वपूर्ण मुद्दे जिन पर ध्यान देना आवश्यक है वे हैं

खाका क्या हो

किसी भी अच्छे लेखन के लिए उसके खाके को दिमाग में रखना आवश्यक होता है ताकि एक निर्धारित सीमा के अन्दर ही महत्वपूर्ण पहलुओं का समावेश किया जा सके तथा कम महत्व के विषयों से दूर रहा जाए। लेख के शुरू में सारांश (Abstract) का होना आवश्यक है ताकि कम समय में भी महत्वपूर्ण तथ्यों की जानकारी प्राप्त हो सके तथा आवश्यकता महसूस होने पर विस्तृत अध्ययन किया जा सके। प्रस्तावना, विधियाँ, परिणाम तथा चर्चा का समावेश यथास्थान होना चाहिए। बीच-

बीच में आवश्यकतानुसार चित्रों, तालिकाओं, फोटोग्राफों अथवा ग्राफिक्स का भी प्रयोग किया जा सकता है।

विज्ञान लेखन के महत्वपूर्ण पहलू

कोई भी लेखन शुरू करने के लिए यह आवश्यक है कि निम्न बातों का ज्ञान हो :-

1. किसके लिए लिखा जाना है (Know the Reader)
2. लिखने का उद्देश्य क्या है (Know the Purpose)
3. किस विषय पर लिखना है (Know the Subject)

भाषा शैली

विज्ञान लेखन के लिए यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि लेख की भाषा शैली कैसी हो: अगर हम प्राचीन महत्वपूर्ण आयुर्वेद के ग्रंथों चरक संहिता एवं सुश्रुत संहिता को देखें तो पाएँगे कि वे संस्कृत भाषा में ही लिखे गए थे, क्योंकि उस समय संस्कृत भाषा ही बोली, पढ़ी और समझी जाती थी। इसलिए विज्ञान लेखन के क्षेत्र में भाषा शैली का अत्यन्त महत्व है। इनमें क्षेत्रीय भाषाओं का भी समावेश होना चाहिए। अगर गुजरात या महाराष्ट्र के लोगों को कुछ समझाना हो, तो गुजराती अथवा मराठी भाषा का ही प्रयोग उत्तम है।

कब और क्या लिखा जाए

एक अहम सवाल यह भी उठता है कि कब और किस समय क्या लिखा जाए। हर लेख का अपना सामयिक महत्व होता है इसलिए विज्ञान लेखन करते वक्त यह ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है कि किस विषय पर लिखा जाए।

अगर इन सब बातों को ध्यान में रखकर हम विज्ञान लेखन करेंगे तभी जन सामान्य को बेहतर सूचना प्राप्त हो सकेगी तथा वे अपने दैनिक जीवन में प्रयोग में लाकर समाज तथा सरकार दोनों को विभिन्न रोगों से मुक्ति दिलाने में सहायक होंगे। यह अत्यन्त स्पष्ट है कि बिना सामुदायिक भागीदारी के कोई भी कार्य संभव नहीं और चाहे वह फिर रोग मुक्ति या अन्य कोई मामला ही क्यों न हो। सरल एवं सरस प्रवाहयुक्त विज्ञान लेखन के द्वारा ही घर-घर में ज्ञान के दीपक प्रज्वलित किए जा सकते हैं तथा यह कार्य करना हमारा पुनीत धर्म है। तभी सफल एवं स्वस्थ राष्ट्र का निर्माण संभव है।

भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद्,
नई दिल्ली-110029

उर्दू ज़बान में विज्ञान पत्रकारिता

मुहम्मद ख़लील

उर्दू ज़बान पुराने ज़माने में दरबार की ज़बान नज़र आती है लेकिन बाद में मदन मोहन मालवीय के मित्र और महान शिक्षाशास्त्री सर सैयद अहमद खाँ ने विज्ञान की अहमियत को समझा और उस समय के रवायती दौर में जब भ्रम और रूढ़िवादी विचारों से समाज गर्मागर्म हो रहा था ऐसे समय में 'साइन्टिफिक सोसाइटी' की स्थापना की और इसके अन्तर्गत कुछ पुस्तकें विज्ञान पर प्रकाशित हुईं। कुछ अच्छी विज्ञान की पुस्तकों के रूपान्तर भी हुए और इसके साथ ही विज्ञान पर कुछ लेख भी लिखे गए और सर सैयद के द्वारा प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'तहज़ीबुल एख़लाख़' में छपे। इस तरह सर सैयद अहमद खाँ ने उर्दू लेखकों को एक नई राह दिखाई और विज्ञान के लेखों पर लोगों का ध्यान आकर्षित किया। उस समय सारे भारत में विज्ञान की शिक्षा कम थी, विशेषकर उर्दू भाषा जानने वालों में विज्ञान में रुचि बहुत कम थी। सर सैयद ने यूरोप से वैज्ञानिक बुलाए, विज्ञान के Instruments मंगाए, Photography का काम इस सोसाइटी ने सबसे पहले आरंभ किया। वैसे हैदराबाद में विज्ञान का पहला इंस्टीट्यूट 'मदरसा फ़ख़रिया' को कहा जा सकता है। इसकी स्थापना 1834 में हुई। यहाँ से विज्ञान पर लगभग 40 पुस्तकें प्रकाशित हुईं। दिल्ली कालेज में 1825 में इसकी वरनाकुलर सोसाइटी ने 1828 से उर्दू भाषा के माध्यम से विज्ञान की शिक्षा शुरू की और ज़रूरत को देखते हुए विज्ञान पर बहुत सारी पुस्तकें तैयार की गईं। मास्टर रामचन्द्र ने गणित में कई नए तरीके खोजे जिसकी चर्चा यूरोप में भी हुई।

रुड़की के थामसन इंजीनियरिंग कालेज के कार्यों की चर्चा करना यहाँ आवश्यक है जहाँ उर्दू भाषा के माध्यम से इंजीनियरिंग की शिक्षा सबसे पहले शुरू हुई और इस विषय पर पुस्तकें लिखी गईं।

उसमानिया यूनिवर्सिटी हैदराबाद और उसके दारुल तरजुमा अर्थात् रूपान्तर करने वाली संस्था के कार्यों की चर्चा भी ज़रूरी है। यहाँ भी कार्य सर सैयद अहमद की तरह किया गया। यह पहला विश्वविद्यालय है जहाँ ऊँची कक्षाओं के लिए उर्दू में पुस्तकें उपलब्ध कराई गईं। साइन्स और टेक्नोलॉजी की लगभग 71 पुस्तकें प्रकाशित हुईं।

साइन्स को डिक्शनरी में इल्म कहा गया है– वह इल्म जो तजुर्बे और तलाश से किया जाए। साइन्स और तकनीकी शिक्षा का चोली दामन का साथ है। इस तरह प्राकृतिक (Natural) साइन्स तकनीकी साइन्स की बुनियाद है। तकनीकी साइन्स में इंजीनियरिंग, मेडिकल, ऐग्रीकल्चर आदि शामिल हैं। साइन्स नए नए आविष्कार करती है जबकि तकनीकी शिक्षा नई नई तरकीबें निकालती है। इस तरह हम यह कह सकते हैं साइन्स और तकनीकी शिक्षा के संगम से ही हर तरह की प्रगति हो सकती है।

अगर हम वैज्ञानिक विचारधारा पैदा करना चाहते हैं तो हमें बुद्धि का प्रयोग करना होगा। हमारे चारों ओर जो घटनाएँ घट रही हैं उनको ध्यान से देख कर सोचना होगा, प्रयोग करना होगा और साधारण से विशेष और विशेष से साधारण तक आना होगा ताकि हम उसे गहराई के साथ समझ सकें। फिर उन सब उपलब्धियों को जमा करके निरपेक्ष मत प्रस्तुत करना होगा। बस यही एक वैज्ञानिक का काम है जिसमें विभिन्न भाषाएँ सहायक होती हैं।

16वीं सदी में विज्ञान की सबसे पहली किताब थी शहाबउद्दीन कुरैशी बेदरी 'भूगमल' के नाम से लिखी। इसका एक भाग सेक्स पर और दूसरा स्वास्थ्य पर है। एक दूसरी तकनीकी पुस्तक जिसे उर्दू भाषा की सबसे पुरानी किताब बताया गया 'बहरे हिकमत' है जो 1798 में प्रकाशित हुई। यह लीथू में प्रकाशित हुई है और पादरी पारकिंस साहब की अंग्रेजी किताब का रूपान्तर है। इस पुस्तक में भाप यानी Steam का वर्णन किया गया है। यहाँ नापने के पैमाने को भी बताया गया है।

फोर्ट विलियम कालेज और प्रेस की स्थापना से उर्दू भाषा में लिखने, रूपान्तर होने और किताबों के छपने में बड़ी मदद मिली। कुछ पुस्तकों के नाम इस प्रकार प्रकाशित मिलते हैं:-

1. इल्मे हैइयत	Astrology, Lucknow 1832
2. निज़ामे आसमानी	System of Sky, Calcutta 1826
3. पंदनाम काश्तकारी : लेखक मोतीलाल	Agra 1852
4. रेशम का कीड़ा : लेखक मोतीलाल	Agra 1853
5. हवा का बयान	Banaras 1854

हैदराबाद में दूसरी कोशिश नवाब फख़रुद्दीन ने की। जो किताबें उस समय छपी हैं वह सबकी सब विज्ञान और तकनीक पर हैं। उनमें 16 किताबो में एक दो यह हैं :-

1. उसूल इल्मे हिसाब	1836
2. इल्मे आब	1838
3. इल्मे हवा	1838
4. इल्मे मनाजिर	1839

उर्दू में विज्ञान की किताबों की तैयारी में दिल्ली कालेज, Delhi Vernacular Translational Society ने बड़ी सेवाएँ की हैं। एक सूचना से यह पता चलता है कि ऐसी 170 किताबें तैयार करा ली गई थीं।

दिल्ली कालेज के एक ओसताद (अध्यापक) और उस वक्त के मशहूर ज़माना टीचरों में शुमार होते थे और आज भी याद किए जाते हैं। मेरा इशारा मास्टर रामचन्द्र की तरफ है। उन्होंने दिल्ली ट्रान्सलेशनल सोसाइटी के अलजबरे और गणित पर किताबें लिखीं जिन्हें बाद में कालेज के कोर्स में ले लिया गया। तराशाहे मखरूती और इल्मे हिंदिसा उनकी मशहूर किताबें समझी जाती हैं। वह दुनिया के चोटी के रेयाज़ीदानों (Mathematicians) में गिने जाते थे।

स्वतंत्रता के बाद तकनीकी पुस्तकें उर्दू में बड़ी संख्या में लिखी गईं जिन्हें गाइड सीरीज़ का नाम दिया गया। जैसे रेडियो गाइड, इलेक्ट्रानिक गाइड, बेकरी गाइड जिनकी संख्या 450 तक बताई गई है। यह पुस्तकें हर मैदान की हैं। उर्दू तकनीकी किताबों का काम बड़े पैमाने पर Urdu Language Promotion Board में अब भी हो रहा है। इस समय तक यहाँ 600 से अधिक पुस्तकें छप चुकी हैं जिनमें 300 पुस्तकें विज्ञान पर हैं। यह किताबें सिलेबस को सामने रख कर लिखी जा रही हैं। Popular Science की किताबें भी लिखी जा चुकी हैं लेकिन रूपान्तर आपकी ज़रूरत को पूरा

नहीं करते इसलिए लेखक स्वयं पुस्तक लिखने लगे हैं।

बावाए उर्दू डॉ० अब्दुल हक ने हैदराबाद से 1938 से 1947 तक अनजुमन तरकीये उर्दू (हिन्द) दिल्ली से उर्दू में साइन्स का काम शुरू किया और पहली उर्दू विज्ञान पत्रिका 'साइन्स' निकाली और यह एक बड़ी कामयाब कोशिश थी। बाद में यह पत्रिका बंद हो गई। स्वतंत्रता के बाद CSIR ने 1975 में उर्दू की त्रैमासिक पत्रिका 'साइन्स की दुनिया' प्रकाशित की। अब यह पत्रिका देश भर में पढ़ी जाती है और इसमें लिखने वाले देश के जाने माने वैज्ञानिक होते हैं। यह जानकर आपको प्रसन्नता होगी कि इस पत्रिका का प्रकाशन NISCOM कर रहा है। यह देश की उर्दू की अकेली सबसे पुरानी विज्ञान पत्रिका है जो अपने प्रकाशित होने की इस वर्ष रजत जयंती मना रही है। पिछले पचीस वर्षों में इस पत्रिका ने विज्ञान पर विशेषांक भी निकाले जिनकी चर्चा पूरे दशे में रही है। उनमें कुछ यह हैं :- ऐन्टार्कटिक नम्बर, नेहरू और साइन्स नम्बर, डॉ० सी०वी० रामन नम्बर, पर्यावरण नम्बर, डॉ० शान्तिस्वरूप भटनागर नम्बर।

सम्पादक
साइन्स की दुनिया (उर्दू)
निसकाम
नई दिल्ली

हिन्दी में विज्ञान लेखन की विविध विधाएँ

डॉ० श्रवण कुमार तिवारी

आम आदमी यही जानता है कि विज्ञान एक कठिन एवं अरुचिकर विषय है। अधिकांश लोग तो विज्ञान में प्रयुक्त गणित के चलते इसे एक दुरूह और रूखा विषय समझते हैं। साहित्य एवं मानविकी के विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत लोग भी प्रायः ऐसा ही समझते हैं। हमारे देश में शिक्षण संस्थाओं तथा भारत सरकार या हिन्दी भाषी प्रान्तों की सरकारों की राष्ट्रभाषा नीति भी बहुत कुछ इसी विचार पर आधारित रही है कि हिन्दी को शिक्षा, प्रमुखतः वैज्ञानिक एवं तकनीकी शिक्षा, का माध्यम बनाने का प्रयास किया जाए। यही कारण है कि हिन्दी विज्ञान लेखन शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में पाठ्य-पुस्तकें, सहायक पुसतकें, शब्दकोश, परिभाषा कोश एवं अंग्रेजी की मानक विज्ञान पुस्तकों के लेखन तक सीमित रहा है और गत 50 वर्षों के दौरान इन प्रयासों ने विज्ञान लेखन की एक विध ा की एक प्रमुख शाखा की ही ओर विशेष ध्यान दिया जाता रहा है, जिसे हम **गद्य लेखन** की **'निबंध शैली'** कह सकते हैं। विज्ञान की विभिन्न विषयों की मौलिक एवं अनूदित पुस्तकें इसी शैली का प्रतिनिधित्व करती हैं। पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित लगभग समस्त हिन्दी विज्ञान साहित्य इसी विधा में लिखे गए हैं। इसका उपयोग पाठ्य-पुस्तकों, लेखों, निबंधों, शोध-प्रबंधों आदि में बहुतायत से होता है। संस्कृत साहित्य को छोड़ कर अन्य सभी भाषाओं के साहित्य का लगभग संपूर्ण भाग गद्य शैली में ही है। संस्कृत ग्रंथों में उच्चकोटि के विषयों में भी **पद्य का, काव्य शैली** का उपयोग हुआ है।

किसी भी ज्ञान विज्ञान को लोकप्रिय बनाने में लेखन शैली एवं लेखन विधा का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। संभवतः इसीलिए लेखन की अनेक अन्य विधाओं का विकास हुआ है, जैसे कथा, कहानी और पद्य। संस्कृत साहित्य में कथा और काव्य शैली का उपयोग वैदिक काल से ही अस्तित्व में आ चुका था। सामवेद तो 'गेय' काव्य का प्राचीनतम नमूना है। रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्य पद्य में ही लिखे गए हैं। आगे चलकर अन्य भारतीय तथा विदेशी भाषाओं में भी 'कथा' शैली का विकास हुआ है। विज्ञान को लोकप्रिय बनाने की दिशा में भी अनेक विज्ञान लेखकों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अनेक लेखकों ने पाठ्यपरक साहित्य न लिखकर विभिन्न रोचक एवं सामयिक वैज्ञानिक विषयों पर लोकगम्य लेख, निबंध, वार्ता एवं कहानियाँ लिखी हैं। गत कुछ वर्षों के दौरान 'विज्ञान कथा' लेखन को विशेष प्रोत्साहन मिला है। पत्रकारिता के क्षेत्र में भी विज्ञान लेखन को प्रोत्साहन मिलने लगा है। विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा भी विज्ञान लेखन की 'कथा' एवं अन्य विधाओं पर विशेष ध्यान दिया गया है। अतः लोकप्रियता के विचार से, विज्ञान लेखन की विविध विधाओं की व्यापक चर्चा तथा विज्ञान लेखन के लिए इन विधाओं के उपयोग की प्रासंगिकता का विवेचन निश्चय ही एक रोचक विषय है।

प्रमुख शैलियाँ

किसी भाषा के समस्त साहित्य को, चाहे वह कला से सम्बद्ध हो या विज्ञान से, **तीन प्रमुख शैलियों** में वर्गीकृत किया जा सकता है– गद्य शैली, पद्य शैली और मिश्रित शैली या 'चम्पू'। इन तीनों शैलियों को तीन विधाएँ भी कह सकते हैं; वैसे लेखन स्वरूप के आधार पर प्रत्येक शैली में भी कई विधाएँ होती हैं।

सबसे पहले हम 'गद्य' शैली पर विचार कर सकते हैं। यह लेखन का सरल एवं यथार्थ रूप है। भाषा का स्वरूप गद्य से ही प्रगट होता है। व्याकरण तथा शुद्ध वाक्य रचना इसी विधा में प्रतिष्ठित होती है। किसी वस्तु, विचार, दृश्य, सिद्धान्त, आदेश, वक्तव्य, विवेचन वर्णन या घटना की सरल, स्पष्ट, व्यापक, यथार्थ या कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए गद्य का ही प्रयोग होता है। पाठ्य-पुस्तकों, संदर्भ-ग्रंथों, शोध-प्रबंधों एवं पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित समस्त विज्ञान साहित्य गद्य रूप में ही होता है।

'गद्य' किसी भी भाषा एवं साहित्य की सर्वाधिक व्यापक विधा है जिसके अन्तर्गत अनेक विधाएँ शामिल हैं जैसेः निबंध, कथा, कहानी, उपन्यास, संस्मरण, समीक्षा, यात्रा वर्णन, पत्राचार, व्यंग-विनोद, हास्य, रहस्य-रोमांच, बाल साहित्य, चित्रकथा, जीवन, आत्मकथा, इतिहास, खोज कथा, पत्रकारिता, प्रश्नोत्तरी, नाटक, प्रयोग वर्णन, प्रशिक्षणात्मक विवरण और जिज्ञासु लेखन आदि। वास्तव में विज्ञान लेखन में गद्य साहित्य ही सर्वाधिक प्रचलित विधा है। विज्ञान परिषद की मासिक पत्रिका 'विज्ञान' में प्रायः सभी विधाओं का विज्ञान साहित्य प्रकाशित होता रहा है। इस क्रम में 'विज्ञान प्रगति' और 'आविष्कार' के नाम भी उल्लेखनीय हैं। उच्च स्तर के गद्य की दृष्टि में 'विज्ञान गरिमा सिंधु' भी एक अच्छी विज्ञान पत्रिका है। विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा समीक्षा, विज्ञान कथा और पत्रकारिता के क्षेत्रों में प्रशंसनीय प्रयास किया गया है। यहाँ पत्रकारिता के लिए कई कार्यशालाओं का आयोजन किया जा चुका है। जनता में वैज्ञानिक जागृति, जिज्ञासा और रुचि उत्पन्न करने में 'पत्रकारिता' की भूमिका अत्यंत प्रभावी है क्योंकि समाचारपत्रों के माध्यम से आम लोगों में वैज्ञानिक अभिरुचि जागृत करना आसान है।

गद्य शैली की सर्वाधिक रोचक विधा **कथा साहित्य** है। छोटी कथाओं को **कहानी** और लम्बी कथाओं को प्रायः **उपन्यास** कहा जाता है। वैसे उपन्यास की और भी विशेषताएँ होती हैं। पर यहाँ हम कथा, कहानी एवं उपन्यास का अन्तर स्पष्ट करना अनावश्यक समझते हैं क्योंकि हिन्दी में विज्ञान लेखन अभी कुछ ही वर्षों पूर्व प्रचलन में आया है। हिन्दी उपन्यास लेखन के क्षेत्र में स्वाधीनता से पूर्व काल में भी ऐसे उपन्यास लिखे गए थे जिनकी तिलिस्मी कल्पनाओं को विज्ञान से जोड़ा जा सकता है। इस प्रकार के उपन्यासों में बाबू देवकी नन्दन खत्री तथा उनके पुत्र दुर्गा प्रसाद खत्री के नाम स्मरणीय हैं। वर्तमान संगोष्ठी में विज्ञान कथा के इतिहास पर आपको विषय विशेषज्ञों के विचार सुनने को मिलेंगे ही अतः मैं इस पर चर्चा नहीं करूँगा।

विज्ञान कथाओं में विज्ञान के किसी सिद्धान्त या उसकी किसी खोज के रोचक एवं आश्चर्यजनक वास्तविक या काल्पनिक उपयोग को आधार बनाकर कथा लिखी जाती है। जैसे- वायुयानों के आविष्कार के बाद अंतरिक्षयानों की कल्पना और इनके द्वारा अंतरिक्ष से अन्य ग्रहों, नक्षत्रों की यात्रा संबंधी कथाएँ। हिन्दी में इसका शुभारम्भ डॉ० सम्पूर्णानन्द द्वारा हुआ माना जा सकता है। आजकल गुरुत्वाकर्षण, आपेक्षिकता तथा लेसर एवं कम्प्यूटर का युग है और 'रोबोट' अस्तित्व में आ गए हैं जो सर्वथा मनुष्य जैसा व्यवहार प्रदर्शित करते हैं। इन्हें भी आधार मानकर

विज्ञान कथाएँ लिखी जा सकती हैं। कहा जाता है कि जिस प्रकार हमारी पृथ्वी के जीव 'कार्बन' प्रधान रचना वाले हैं उसी प्रकार अनुकूल परिस्थितियों में किसी ग्रह के प्राणी 'सिलिकान' प्रधान हो सकते हैं। और ऐसा हो तो संभवतः वे जीव 'पारदर्शक' शरीर वाले होंगे। इस कल्पना के आधार पर भी कथाएँ रची जा सकती हैं।

विज्ञान परिषद् द्वारा 'विज्ञान कथा' लेखन को विशेष रूप से प्रोत्साहित करने के लिए उल्लेखनीय प्रयास किए गए हैं। 'विज्ञान' का प्रथम 'विज्ञान कथा' विशेषांक नवम्बर 1984 में प्रकाशित हुआ था और इसके लिए अलग से संगोष्ठियाँ भी आयोजित की गई थीं। विज्ञान कथाओं की उपयोगिता की ओर ध्यान आकृष्ट करने के लिए एक विशेषांक की कुछ चर्चा प्रासंगिक होगी। अंग्रेजी में 'विज्ञान गल्प' या 'साइन्स फिक्शन' का आरंभ उन्नीसवीं सदी के अंत में ही हुआ था, जब एच०जी० वेल्स ने इसकी शुरुआत की थी। बाद में अन्य अनेक लेखकों ने अंग्रेजी, फ्रेंच और रूसी भाषाओं में विज्ञान गल्प लिखा। इनमें जूल्स वर्न, आइज़क एसीमोव, जी, विडाल और विक्टर कोमोरोब के नाम उल्लेखनीय हैं। इन लेखकों की कई कृतियों का हिन्दी अनुवाद डॉ० नवलबिहारी मिश्र, श्री गुणाकर मुले, रमेश दत्त शर्मा और हरिकृष्ण देवसरे द्वारा किया गया था। वेल्स की कथाओं में जो कल्पनाएँ की गई थीं, उनमें से अधिकांश आगे चलकर सत्य भी सिद्ध हुईं। जैसा कि हम पहले ही कह चुके हैं कि हिन्दी में 'विज्ञान कथा' का शुभारम्भ डॉ० सम्पूर्णानन्द की कृति 'पृथ्वी से सप्तर्षि मंडल' द्वारा हुआ माना जाता है। आजकल तो इस क्षेत्र में अनेक लेखक कार्यरत हैं जिनमें डॉ० ओम प्रकाश शर्मा, प्रो० दिवाकर, श्री उमेश चन्द्र मिश्र, राजेश्वर गंगवार, डॉ० जयंत विष्णु नार्लीकर, विष्णु दत्त शर्मा, रमेश दत्त शर्मा, प्रेमानन्द चन्दोला, डॉ० राजीव रंजन उपाध्याय, डॉ० अरविन्द मिश्र और श्री इरफ़ान ह्यूमन के नाम विशेषतः चर्चित हैं।

विज्ञान के लोकप्रियकरण के लिए विज्ञान कथाएँ अत्यंत सशक्त माध्यम हैं। कथा-कहानियाँ मनुष्य मात्र के लिए सदैव रोचक, मनोरंजक, लुभावनी और शिक्षाप्रद रही हैं। इनके माध्यम से विज्ञान के प्रमुख सिद्धान्तों, उनकी आकर्षक उपलब्धियों तथा वैश्विक रहस्यों को जानने का एक सरल सुबोध मार्ग मिल जाता है। इन विज्ञान कथाओं की तुलना विख्यात 'पंचतंत्र' कथाओं से की जा सकती है जिनका प्रणयन किसी सुयोग्य विद्वान ने मूर्ख राजकुमारों को राजनीति सिखाने के लिए किया था।

बालक बालिकाओं के मन में वैज्ञानिक रुचि एवं जागृति उत्पन्न करने के लिए तो ये विज्ञान कथाएँ बहुत ही प्रभावी माध्यम हैं। अतएव बाल विज्ञान कथा लेखन विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। विज्ञान दुरूह विषय है। वैज्ञानिक तथ्यों की अभिव्यक्ति के लिए नपी तुली भाषा तथा तथ्यों की एक सुनिश्चित शब्दावली की आवश्यकता होती है जो पाठकों की रुचि को प्रायः कुंठित कर देती है। परन्तु विज्ञान कथा के लिए सर्वसाधारण की सरल सुबोध भाषा का ही उपयोग होता है, इसमें तकनीकी जटिलता की कोई आवश्यकता नहीं होती है। क्योंकि, इन कथाओं में किसी वैज्ञानिक तथ्य, सिद्धान्त या उपलब्धि का वर्णन नहीं वरन् उनके उपयोग के रोचक रहस्यों एवं संभावित परिणामों को कहानी में चित्रित किया जाता है। कभी कभी इन कहानियों में किन्हीं सिद्धान्तों के भावी अज्ञात परिणामों की कल्पनाएँ भी समावेशित होती हैं, जैसा कि एच०जी० वेल्स के 'विज्ञान गल्पों' में है, जो भविष्य में सत्य सिद्ध हो सकती हैं। इस प्रकार विज्ञान कथाएँ वैज्ञानिक प्रगति के भूत, वर्तमान एंव भविष्य, तीनों का दिग्दर्शन करा सकती हैं।

विज्ञान कथाओं की चर्चा के संदर्भ में हमारा ध्यान कुछ विद्वानों की इस सोच की ओर भी

जाता है कि हमारे प्राचीन पुराणों में बहुत सी ऐसी आश्चर्यजनक घटनाओं का वर्णन है जिनमें वैज्ञानिक सत्य ढूँढा जा सकता है, जैसे देवताओं द्वारा आकाशवाणी, उनका अत्यंत तीव्र वेग से गमन (जैसे- हनुमान जी का रात भर में ही लंका से हिमालय तक जाकर वापस लौटना या समुद्र-लंघन), राम द्वारा सागर पर सेतु का निर्माण, त्रिशंकु का अंतरिक्ष में नगर बसाना (आजकल अंतरिक्ष में कालोनी बनाने की चर्चा सुनी जा रही है), महाभारत में दिव्य शस्त्रास्त्रों का प्रयोग, भीम द्वारा युद्ध के दौरान हाथियों को इतने द्रुत वेग से आकाश में फेंकना कि वे लौट कर धरती पर वापस न आ सकें, महर्षि च्यवन का युवा हो जाना या राजा ययाति को उनके पुत्र द्वारा यौवन-दान, दुर्गा सप्तशतती में रक्त की बूंदों से पूर्ण रक्तबीज राक्षसों की उत्पत्ति (क्लोनिंग या जीवोत्पत्ति), महर्षि वशिष्ठ का ब्रह्मदण्ड (लेसर चालित परमाणु शस्त्र) और विशिष्ट योद्धाओं (अर्जुन, कृष्ण, द्रोणाचार्य, भीष्म, कर्ण आदि) द्वारा अपने शस्त्रों को फेंक कर पुनः वापस लौटा लेना (गाइडेड मिसाइल) आदि। इन कथाओं को भले ही विज्ञानसम्मत न माना जा सके पर इतना तो स्पष्ट है कि आज उक्त समस्त क्रियाकलाप विज्ञान द्वारा प्रत्यक्ष सम्पादित हो रहे हैं, अतः इन कथाओं को अपने काल के संदर्भ में भविष्य दर्शन तो मानना ही होगा।

कथा कहानियों का ही एक दूसरा रूप है **'नाटक'** जिसमें पात्रों के कथोपकथन, हावभाव तथा क्रिया कलापों द्वारा किसी कथा की घटनाओं को प्रत्यक्ष रूप से दिखाने का प्रयास किया जाता है। हिन्दी विज्ञान लेखन में इस विधा का समावेश हो चुका है। इसके द्वारा वैज्ञानिक जानकारी देने, अवैज्ञानिक भ्रांतियों का निवारण करने तथा विज्ञान में रुचि उत्पन्न करने का सफल प्रयास किया जा सकता है। बाल विज्ञान लेखन में इस विधा के अनेक उदाहरण देखने को मिले हैं। 'विज्ञान प्रगति' में भी कई नाटक प्रकाशित हुए हैं। विज्ञान कथा विशेषांक में भी मंचन योग्य कहानियाँ प्रकाशित हुई हैं। इस क्रम में इरफान ह्यूमन की हाल ही में (अप्रैल 1998) में प्रकाशित विज्ञान कथा 'रोबोनाइड' 'विज्ञान' में प्रकाशित हुई है।

विज्ञान साहित्य के पठन में रुचि उत्पन्न करने की दिशा में **'रहस्य-रोमांच'** लेखन एक महत्वपूर्ण कड़ी है, परन्तु हिन्दी विज्ञान लेखन के क्षेत्र में इस ओर अभी बहुत ही कम ध्यान आकृष्ट हुआ है। वैज्ञानिक रहस्य रोमांच संबंधी लेख बहुत कम या विरले ही देखने को मिलते हैं, जबकि अंग्रेजी में इस विधा में प्रचुर साहित्य उपलब्ध है। इस विधा में हम ऐसे रहस्यों एवं आश्चर्यजनक घटनाक्रमों को शामिल कर सकते हैं जो या तो वैज्ञानिक आधार पर समझे नहीं जा सके हैं जैसे 'बरमूडा त्रिकोण' या ऐसे रहस्य जो किसी समय अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते थे पर अब वैज्ञानिक दृष्टि से गलत सिद्ध हो चुके हैं। इस संदर्भ का एक छोटा सा उदाहरण उल्लेखनीय है। एक वास्तविक दुर्घटना में एक व्यक्ति के ललाट में लोहे की एक कील धँस गई। डाक्टरों ने उसे निकाल भी दिया। उसके बाद उस व्यक्ति के मानसिक आचरण में कुछ विचित्र परिवर्तन हुए। स्वभाव की उग्रता कम हो गई, सक्रियता भी कुछ घटी और उसका व्यक्तित्व सर्वथा बदल गया जो उसके पूर्व व्यक्तित्व से भिन्न था। संभवतः इसी आधार पर कालान्तर में उपचार की एक विचित्र विधि विकसित हुई जिसके लिए आविष्कर्ता डाक्टर को पुरस्कार भी मिला। विधि यह थी कि किसी व्यक्ति की उग्रता एवं अतिसक्रियता को कम करने के लिए डाक्टर उसके ललाट में एक विशेष स्थान पर एक कील ठोंक देता था और कुछ देर बाद कील निकाल देता था। कहा जाता है कि अमेरिका जैसे विकसित देश में हजारों लोगों ने यह उपचार कराया था। बाद में पता चला कि यह उपचार मस्तिष्क की कुछ तंत्रिकाओं को नष्ट कर देता था जिससे उग्रता तो कम हो जाती थी परन्तु उसका व्यक्तित्व बदल

जाता था जो बहुधा अतिहानिप्रद था।

विज्ञान लेखन की एक विधा **पत्रलेखन** भी कम महत्वपूर्ण नहीं कही जा सकती है। विशेषतः बच्चों में वैज्ञानिक रुचि जाग्रत करने के लिए उनके माता, पिता या प्रियजनों द्वारा वैज्ञानिक खोजों का ऐतिहासिक चित्रण प्रस्तुत करने वाले पत्र बड़े उपयोगी हो सकते हैं। पं० जवाहरलाल नेहरू द्वारा लिखे गए 'पिता के पत्र पुत्री के नाम' इस बात के प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। बंगला साहित्य में 'विज्ञानेर चीठी' एक रोचक पुस्तक है।

विज्ञान को लोकप्रिय एवं रोचक बनाने की दिशा में **व्यंग्य, विनोद और हास्य** का उपयोग भी एक कारगर कदम हो सकता है। अंग्रेजी में इस विधा में काफी कुछ उपलब्ध है, पर हिन्दी में नहीं है। इस संदर्भ में 'विज्ञान' के अप्रैल 1999 के अंक में प्रकाशित, डॉ० रमेश दत्त शर्मा का लेख 'ललित विज्ञान लेखन को रोचक कैसे बनाएँ' द्रष्टव्य है। वहाँ शर्मा जी ने एक रोचक व्यंग्य दिया है- एक वैज्ञानिक महोदय नाव में बैठै नदी पार करते समय मल्लाह से पूछते हैं- "क्या तुम्हें न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त मालूम है ?" मल्लाह ने कहा "नहीं," वे पुनः पूछते हैं, "तुम डी०एन०ए० के बारे में तो कुछ जानते ही होगे ?" मल्लाह ने कहा, "नहीं साहब, मैं क्या जानूँ", वैज्ञानिक महोदय ने कहा, तब तो तुम्हारी आधी जिन्दगी बेकार हो गई।" तब तक नाव मझधार में पहुँच गई और उसमें एक छेद हो गया, पानी तेजी से नाव में भरने लगा। मल्लाह ने पूछा, साहब भयानक खतरा है, क्या आप तैरना जानते हैं ?" उन्होंने घबराते हुए कहा, नहीं। मल्लाह बोला, "तब तो आपका यह जीवन ही नष्ट होने वाला है" और वह नाव से कूदकर तैरते हुए भाग निकला। विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में व्यंग्य-विनोद लेखन की पर्याप्त गुंजाइश है, पर इसके लिए लेखक में विज्ञान तथा साहित्य दोनों का अच्छा ज्ञान होना चाहिए। फिलहाल यह विधा जहाँ-तहाँ अंग्रेजी से अनूदित होकर हिन्दी में आ रही है।

लेखन की दूसरी प्रभावशाली विधा **पद्य** है। विज्ञान एंव गणित में पद्य का उपयोग एक दुरूह कार्य है। पद्य के माध्यम से विज्ञान और गणित की अभिव्यक्ति स्पष्ट, सटीक एवं निर्विवाद रूप से संभव नहीं जान पड़ती है। परन्तु हमारे देश में संस्कृत वाङ्मय में गणित, ज्योतिष आदि विषयों का विवेचन पूर्णतः 'काव्य' या 'पद्य' विधा में ही होता रहा है। ज्योतिष के प्रायः सभी प्राचीन ग्रंथ ललित श्लोकों में रचे गए हैं। महर्षि कणाद, आर्यभट्ट और भास्कराचार्य जैसे ख्यातनामा प्राचीन विद्वानों की कृतियाँ पद्य रूप में ही हैं। विज्ञान को लोकप्रिय बनाने में यह विधा अत्यंत कारगर साबित हो सकती है। इस संदर्भ में कुछ प्राचीन एवं अर्वाचीन वैज्ञानिक तथ्यों की अभिव्यक्ति के उदाहरण के रूप में कुछ पद्य आपके समक्ष प्रस्तुत करूँगा।

(अ) वैदिक काल में महर्षि अथर्वण ने आग जलाने की एक कृत्रिम विधि का आविष्कार किया था, अरणि-मंथन

दारु रगरि ऋषि अग्नि प्रजारी, पाहन पटकि प्रगट चिनगारी।
गाधि तनय सत्तम ऋषि माना, विश्वामित्र नाम जग जाना।
सोइ अथर्वण विधि परिशोधा, अरणि विमंथक यंत्र प्रबोधा।
शमी वृक्ष पर पीपल जामा, ताकर अरणि शुष्क करि आना।
युगल अरणि संयुत रजु बांधी, तृण अरु तूल जतन करि नाधी।
अरणियुग्म बिच तीसरि डारी, द्रुत गति मथन प्रगट चिनगारी।
सो तृण मूल समिध सह पाई, धधकि जरै इति अग्नि जुहाई।

(ब) ज्योतिष शुल्व सूत्र; पैथागोरस का प्रमेय
आयत दोउ भुज वर्ग जुरावै, एक विकर्ण वर्ग सम आवै।
यह प्रेमय देखिय धरि ध्याना, अन्य भाँति कहि सकहिं सुजाना।
कर्ण वर्ण समकोण तिकोरा, लम्ब अधार वर्ग कर जोरा।
यह प्रमेय बोधायन दीना, शुल्व सूत्र में वर्णन कीना।

(स) खगोल विज्ञान
दोहा : जेहि पथ भानु परिक्रमत, नभ मंडन के छाउँ।
क्रांति वृत्त तेहिं गणितविद् दीने सुन्दर नाउँ।।
धरा तहाँ जिन अक्ष पर, ध्रुव ध्रुव गत ऊर्ध्वंश।
क्रांति वृत्त तल से झुकी, साढ़े तेइस अंश।।

(द) वैशेषिक शास्त्र में पदार्थ की परिभाषा
जल थल नभ रवि शशि ग्रह तारा, पवन, तेज, पावक उँजियारा
क्रिया प्रतिक्रिया उद्भव नाशा, नित संयोग, विभाग, विकासा
विश्व प्रपंच निरूपण करहीं, ऋषि मुनि विज्ञ नाम बहु धरही
एहि विधि विषय निरूपण लागी, पद बहु चुनहिं ज्ञान अनुरागी
पद से अर्थ करहिं अनुमाना, पद, मय-अर्थ पदार्थ बखाना
पद प्रबोधि किय अर्थ निरूपण, तिनहि पदार्थ कहे विद्वज्जन।

(य) परमाणुओं की कल्पना, परमाणु और फोटान
दोहा : छिति जल, तेज बयारि के, लघुतम कण अति झीन।
ऋषि कणाद परमाणु इति विलग नाम धरि दीन।

(फ) आर्यभट्ट की गणना विधि
अ इ ऊ स्वर क्रमशः जाना, एक शतक, दशसहस समाना।
ऋ दश लाख कि लृ करोड़ दश, ए से सूचित मान अर्ब दश।
ऐ दश खर्ब कि ओ दश नीला, औ दश पद्म प्रदर्शशीला।
क से म तक सब वर्णाक्षर, एक से गिनिय पचीस निरंतर।
य र ल व श ष स ह सुनु, तीन से दश तक सबके दश गुन।
व्यंजन मान योग करि धरहीं, स्वर से दश तक सबके दश गुन।
'शक' इकहत्तर 'कमल' छिहत्तर, 'खेशछ' बीस अर्ब सतहत्तर।

(क) लीलावती के कुछ प्रश्नोत्तर
प्रश्न : हंस कि पांति सरोवर बीच बिहार करै कछु काल बिताए।।
हंसिनि हंस थके श्रम से निकसे जल से तट पै चलि आए।।

देखहिं यूथ के मूल के अर्द्धक सात गुने जल में बगराए।।
देहु बताय सुता सुमुखी ओहि यूथ में केतिक हंस सुहाए।।

उत्तर : **दो वर्ण-समक भल जोहिये, विधिवत हल करि ताहि।**
सकल हंस परिवार की संख्या सोलह आहि।।

(ख) भास्कराचार्य द्वितीय के काव्य में गणना या संख्या बोध
दोहा : **रस गुण पूर्ण मही सम, शक भूपति के वर्ष।।**
जन्में भास्कर गणितविद् लिखि गए स्वयं सहर्ष।।
अर्थात् शक संवत 1036 (मही, पूर्ण, गुन, रस)

अब कुछ उदाहरण आधुनिक विज्ञान के भी देख सकते हैं। नील्स बोर ने परमाणु संरचना का जो मॉडल प्रस्तावित किया था, उसमें इलेक्ट्रान की स्थिति पर एक छंद देखिए :

पढ़ि सुनि समुझि ह्रदय अनुमाना, इलेक्ट्रान अद्‌भुत गुन साना।
येहि लहि बहै बिज्जु कै धारा, यंत्र अनेक विदित संसारा।
निर्गुण रूप सगुण अस करनी, भार अल्पतम बिनु समुझि न जाई।
छन्दः **काउ अहै इलेक्ट्रान बसे कहँ, का गुन, रूप, सुभाय कहा है।**
नाभि के गिर्द बसै परमाणु में, बैठत नेकु न घूर्मि रहा है।
आँखिन सों नहि देखन जोग, पै कौतुक तो जग छाइ रहा है।
बोर कहै थिर कक्ष पै घूमत देखे बिना नहि जात कहा है।

इस प्रकार के और भी उदाहरण प्रस्तुत किए जा सकते हैं। आप सबने घाघ और भड्डरी के नाम सुने होंगे जिनके खेती बारी और मौसम संबंधी अनेक दोहे चतुर किसानों की जुबान पर होते हैं, जैसे-

दिन में बादर राति निबद्दर, बहै पुरवैया झब्बर झब्बर।।
कहै घाघ हम होइब जोगी, कुआँ क पानी धोइहैं धोबी।।

घाघ और भड्डरी की विधा को आधुनिक जानकारी के आधार पर विकसित करके किसानों तक पहुँचाना चाहिए ताकि खेती बारी में उन्हें सटीक जानकारी याद रखने में सुविधा हो।

विज्ञान लेखन की तीसरी मुख्य विधा **'चम्पू'** है। इस शैली में गद्य और पद्य दोनों का उपयोग होता है। कुछ हल्के तौर पर इसे 'नौटंकी' विधा भी कहा जा सकता है। आजकल 'साक्षरता' के प्रचार प्रसार में दूरदर्शन पर अनेक विज्ञापन इसी शैली में आते हैं। विज्ञान के लोकप्रियकरण के सिलसिले में आयोजित नाटकों और नुक्कड़ नाटकों में यह विधा उपयोगी होती है। इसमें वार्तालाप के बीच बीच में, प्रभावी कविताओं तथा शेरो-शायरी का उपयोग किया जाता है। 'विज्ञान गरिमा सिंधु' के अंक 29 वर्ष 1999 में श्री एस०के० पाण्डेय (रांची रोड, पुरुलिया, पं० बंगाल) का एक लेख 'कोयला कथा' इस शैली का सुन्दर उदाहरण है, जिसमें तुकांत एवं अतुकांत दोनों प्रकार के पद्यों का उपयोग हुआ है,

जैसे-

पृथ्वी के निर्माण काल के समय कभी।
थे अतीत में महाद्वीप एकसाथ कभी।
मात्र एक भूखण्ड समाए था सबको।
नाम 'पेनजिया' दियां वैगनर ने जिसको।।

अभी हाल ही में (अगस्त 2001) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में विज्ञान परिषद् की ओर से प्रो० नन्दलाल सिंह स्मृति व्याख्यान में वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग के अध्यक्ष डॉ० राय अवधेश कुमार श्रीवास्तव ने 'भूमण्डलीय जलवायु परिवर्तन' तथा 'कामायनी' में उसकी वैज्ञानिक विवेचना विषय पर जो रोचक व्याख्यान दिया था वह इस विधा का एक सुन्दर उदाहरण है।

'जिज्ञासा विज्ञान की जननी है'। हिन्दी साहित्य के महान छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद की कामायनी में ऊषा की अरुणिम आभा से स्नात मेघमालाओं को निहार रहे किसी जिज्ञासु से पूछें-

ऊषा की सजल गुलाली जो, घुलती है नीले अंबर में।
वह क्या है ? क्या तुम देख रहे वर्णों के मेघांडबर में।।

विज्ञान लेखन को ललित बनाने में यह शैली अत्यंत ही उपयोगी है। अंत में विज्ञान लेखन की अपनी निजी भावनाओं को अभिव्यक्त करने वाले दो दोहों के साथ मैं अपनी बात समाप्त करूँगा-

दोहा: **सकल जीव बिच मनुज यह, अति प्रबुद्ध जिज्ञासु।**
भौतिक जग अन्वेषक, और विज्ञान पिपासु।।
सुख संपत्ति के प्राप्ति हित, हेरत प्रकृति रहस्य।
चाह सदा अमरत्व की, यद्यपि मृत्यु अवश्य।।

बी2/228, भदैनी
वाराणसी

विभिन्न विधाओं में विज्ञान लेखन की आवश्यकता

डॉ० विष्णुदत्त शर्मा

अनादि काल से नाना जातियाँ अपने विविध प्रकार के संस्कारों, रीति-रिवाजों आदि के साथ भारत में आती रही हैं। यहाँ भी पहले से ही अनेक प्रकार के मानवीय समूहों के विद्यमान होने के प्रमाण हैं। प्रारंभ में मानवीय समूह परस्पर संकेतों से वार्तालाप करते थे जो मूक विधा थी। उदाहरणार्थ-

'अ' फन कमल चक्र टंकोरा।
तेग पवन यौवन सिंगोरा।।
अंगुलि अक्षर, चुटकिन मात्रा।
राम करें लक्ष्मण से बात्रा।।

इन समूहों के बीच पाए जाने वाले भेद शनैः शनैः समाप्त होते चले गए और कालांतर में भाइयों की तरह एक-दूसरे में रच-बस गए। आज का भारतवर्ष विविध समूहों और उनकी भाषाओं, धर्मों, रीति-रस्मों का जीवन्त एवं समन्वित रूप है।

इस देश के करोड़ों मनुष्यों में आम चेतना भरने का काम बहुत दिनों से संस्कृत भाषा करती आई है और आगे भी करती रहेगी, ऐसी संभावना है। संस्कृत में साहित्य विपुल है। उसका साधन गहन एवं उसका उद्देश्य साधु है। उस भाषा को हिंदी माध्यम से समझने का प्रयत्न करना भी एक तपस्या ही है। संस्कृत, पालि, प्राकृत और अपभ्रंश की बढ़िया पुस्तकों के जितने उत्तम अनुवाद अंग्रेजी, फ्रेंच और जर्मन आदि भाषाओं में हुए हैं, उतने हिंदी में नहीं हुए। इस प्रकार हमारे प्राचीन साहित्य में ज्ञान का जो विपुल भंडार है उससे पाश्चात्य विद्वान लाभ उठा रहे हैं, अपनी चहुँमुखी प्रगति कर रहे हैं परंतु खेद है कि हम भारतीय ज्ञान बटोरने और तलाश करने के लिए विदेशी भाषाओं की अनूदित पुस्तकों से लाभ उठाने का प्रयास करते हैं।

प्राचीन भाषाएँ- संस्कृत, अवेस्ता या ग्रीक साहित्य से ही उपलब्ध हुई हैं, जिनके आधार पर हम कह सकने में समर्थ हैं कि तीनों की जननी एक ही मातृभाषा है। परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है- यह नियम भाषा पर भी लागू होता है। अतः भाषाओं में परिवर्तन होना ही विकास है। भाषा का कोई अंतिम स्वरूप नहीं होता। यह सदा आवश्यकतानुसार परिवर्तित होता रहता है। भाषा का साहित्य से घनिष्ठ संबंध है।

संप्रेषण की दृष्टि से जब साहित्य का विकास, प्रचार एवं प्रसार किया जाता है तो आरंभ में नकल से, फिर नकल-अकल और अंत में अकल का ही सहारा लिया जाता है। चूँकि संप्रेषण हेतु पद्य का सहारा अति सरल है जो मौखिक रूप से स्मरण हो जाता है यही कारण है कि हमारा संपूर्ण प्राचीन साहित्य श्लोकों पर आधारित था और शनैः शनैः गद्य-पद्य और आजकल गद्य में लिपिबद्ध है।

इस प्रकार विज्ञान लेखन विभिन्न विधाओं में भारतीय भाषाओं में प्राचीन काल में भी था और अर्वाचीन काल में भी।

जहाँ तक वैज्ञानिक साहित्य में विधाओं का प्रश्न है, यह बाह्य रूप के आधार पर निम्न प्रकार से श्रेणीबद्ध किया जा सकता है-

इन विधाओं को विज्ञान साहित्य के परिप्रेक्ष्य में भी परिभाषित तथा वर्गीकृत किया जा सकता है। अतः उपर्युक्त विधाओं का विवरण प्रस्तुत करने का मेरा आशय है कि साहित्यकार तो विधाओं को जानते हैं किंतु वैज्ञानिक विभिन्न विधाओं से अनभिज्ञ होते हैं। अतः इन विधाओं से भी परिचित होना एक वैज्ञानिक लेखक को अत्यंत आवश्यक है। तभी यह वैज्ञानिक अपने पाठकों को साहित्य का उत्तम रसास्वादन करा पाएगा। आजकल साहित्य जगत में अपनाने वाली उपर्युक्त विधाएँ हैं और अब तक अन्य विधा 'विज्ञान लेखन' को भी इन्हीं विधाओं के अंतर्गत समायोजित किया गया है।
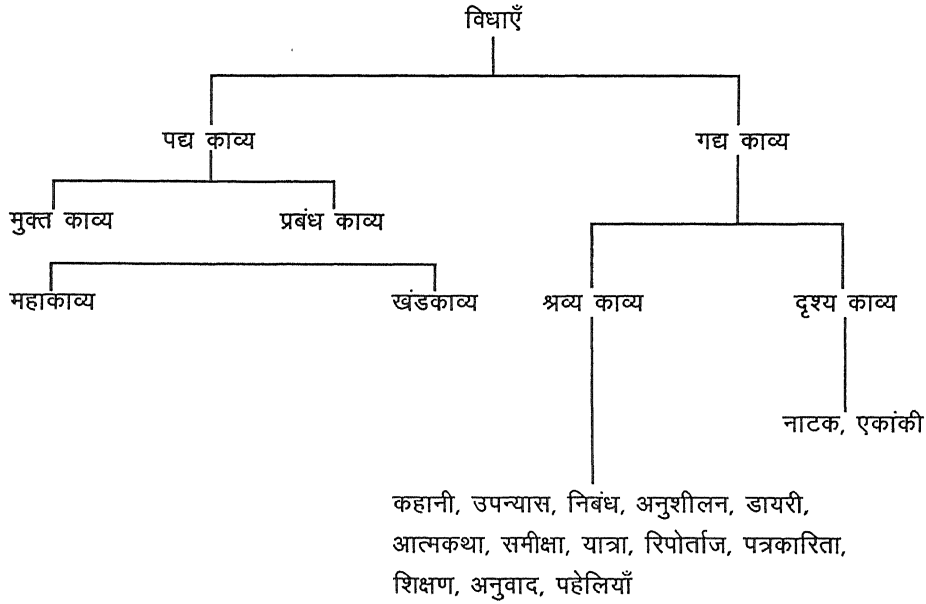
इस संदर्भ में यह जानना परम आवश्यक है कि विज्ञान साहित्य क्या है ? जिस साहित्य से विज्ञान प्रकट होता है, वह साहित्य 'विज्ञान साहित्य' कहा जा सकता है। अर्थात् जिस साहित्य में विज्ञान के विषय में लिखा हुआ है तथा वैज्ञानिक जानकारी एवं वैज्ञानिक विचार जिसमें है, वह 'विज्ञान साहित्य' है।

विज्ञान की अपनी भाषा होती है। इस भाषा के माध्यम से एक वैज्ञानिक, तथ्यों तथा गूढ़ रहस्यों को विभिन्न तकनीकी शब्दों के सहारे व्यक्त करता है। किन्तु इसे ग्राह्य भाषा के रूप में रूपान्तरित करने या अनुवाद करने में अनेक कठिनाइयाँ होती हैं। यही कारण है कि वैज्ञानिक के लिए मौलिक लेखन करना सरल, सुविधाजनक तथा सन्तोषप्रद होता है।

आधुनिक समाज विज्ञान की देन है। विज्ञान जीवन के हर पहलू को प्रभावित करता है इसीलिए जनसाधारण इससे अछूता नहीं है। भविष्य में समाज का क्या रूप होगा वह सब विज्ञान

पर निर्भर करता है। विज्ञान दोधारी तलवार के समान है। विज्ञान का उपयोग परमाणु-रासायनिक या जैव अस्त्रों के लिए हो अथवा जीवन स्तर को सुधारने के लिए ? विज्ञान का प्रयोग कैसे और किसके लिए करना है इसका निर्णय हम विज्ञान लेखकों को करना है। जन साधारण इस प्रक्रिया में तभी सम्मिलित हो पाएगा जब वह विज्ञान को समझेगा। अतः विज्ञान लेखन जन साधारण की भाषा में होना आवश्यक है। विज्ञान लेखन आयु वर्ग के अनुसार हो अर्थात् बाल विज्ञान, युवा विज्ञान तथा प्रौढ़ विज्ञान आदि की जानकारी के लिए विषय के साथ साथ भाषा शैली का भी ध्यान रखना होगा। अब प्रश्न उठता है कि हिन्दी साहित्य की रचनाएँ जिन विधाओं में की जा रही हैं क्या विज्ञान लेखन को भी उन्हीं विधाओं में किया जा रहा है ? खेद है कि ऐसा नहीं हो पा रहा है। जब तक वैज्ञानिकों की रुचि हिन्दी साहित्य में तथा साहित्यकारों की अभिरुचि विज्ञान में नहीं होती तब तक ऐसा संभव नहीं है।

कहावत है Rome was not built in a day। इसी प्रकार प्राचीन भारतीय वाङ्मय का विकास भी शनैः शनैः हुआ और विकसित हुई इसकी विधाएँ। जितना भी आर्ष-साहित्य उपलब्ध है उसमें विज्ञान लेखन बहुतायत है किंतु समय के अनुसार उस अवधि में कीमिया (alchmey), गणित तथा ज्योतिर्विज्ञान से संबद्ध कार्य एवं अन्वेषण अधिक किए गए। आर्यभट्ट, भास्कराचार्य आदि प्रख्यात गणितज्ञों ने शून्य, बिंदु, दशमलव प्रणाली, संख्या लेखन इत्यादि का प्रारंभ किया। यदि भारतीय गणितज्ञ समाज में नीवें न रखता तो समस्त विश्व की लगभग सभी खोजें असंभव हो जातीं। इनके अतिरिक्त भारतीय गणितज्ञों ने त्रिकोणमिति, रेखागणित, बीजगणित और पाटी गणित का भी श्रीगणेश किया। रसायन शास्त्र में प्रसिद्ध रसायन तथा बौद्ध धर्म के महायान नामक मत के प्रवर्तक प्रसिद्ध चिकित्साशास्त्री नागार्जुन का नाम इतिहास में प्रसिद्ध रहेगा। उस काल में कीमिया विषय पर लगभग 5० ग्रंथों का प्रणयन किया गया। प्राचीन ज्योतिषियों ने चन्द्र, पृथ्वी, सूर्य तथा अन्य ग्रहों की स्थिति के संबंध में जो घोषणाएँ कीं वे सर्वथा सत्य हैं और इसी आधार पर अंतरिक्ष में उपग्रहों को स्थापित किया गया। अतः जो व्यक्ति ज्योतिष को विज्ञान नहीं मानते, वे अज्ञानी हैं।

आज भी **पद्य-विधा** के अंतर्गत कुछ छुट पुट कविताएँ समस्या के समाधान हेतु पढ़ने को मिल जाती हैं। ध्यातव्य है डॉ० वी०के० तिवारी जी की ये पंक्तियाँ-

एड्स दे रहा दस्तक, अपने घर को इससे बचाओ।
इस भयंकर व्याधि से, बचाव के साधन अपनाओ।।
रक्तदान से पूर्व रक्त का, उचित परीक्षण करवाओ।
सुरक्षित यौन संबंध का, संदेश घर-घर पहुँचाओ।

पर्यावरण से संबंधित लेखक श्री दिलीप भाटिया के कितने सुंदर दोहे हैं-

वर्तमान का जब यह आलम है तो भविष्य भला क्या होगा।
कटते पेड़, कम होते जंगल, इससे बुरा और क्या होगा।।

इस प्रकार श्री देवव्रत द्विवेदी जी के पर्यावरण पर विचार दृष्टव्य हैं-

नदियाँ बदलती जा रहीं गन्दे नालों में,
शुद्ध वायु मिलती है बस ख्यालों में।
कारखानों से निकलता धुएँ का जहर,
मानवता पर बरस रहा बन का कहर।

श्रव्य काव्य के अंतर्गत **कहानी विधा** में विज्ञान ने प्रारंभ से ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है

किंतु हिन्दी साहित्य के इतिहास में विज्ञान कथाओं को सम्मिलित नहीं किया जाता, शायद यह समझकर कि विज्ञान तो नितान्त भौतिक सिद्धांतों, रासायनिक सूत्रों, गणितीय प्रमेयों, प्राणी जगत की स्थूल रचनाओं का विवरण प्रस्तुत करने वाला शास्त्र है। वास्तव में विचार किया जाए तो हिन्दी साहित्य की कहानी, जिसको गल्प (अपभ्रंश गप्प) भी कहते हैं, कल्पनाओं पर आधारित है, जबकि विज्ञान कथा तथ्यों पर है। (इस विधा के अन्तर्गत मैंने तीन विज्ञान कथाएँ (प्रतिध्वनि, अपकर्षण, सईस) लिखीं जिनमें प्रतिध्वनि सन् 1952-53 में प्रकाशित हुई थी)। पहली विज्ञान कथा सन् 1900 में सरस्वती पत्रिका (भाग-1, संख्या-7) में 'चन्द्रलोक की यात्रा' शीर्षक से छपी। यमुनादत्त वैष्णव की पहली विज्ञान कथा 'वैज्ञानिक की पत्नी' सन् 1937 में लिखी गई। डॉ० नवल बिहारी मिश्र (1901-1978) ने एक कथा संग्रह 'अधूरा आविष्कार' लिखा। वर्ष 1984 के नवंबर अंक तथा फरवरी 1985 अंक 'विज्ञान कथा अंक' के रूप में विज्ञान परिषद् प्रयाग ने छापा, इस प्रकार विज्ञान कथा का शुभारंभ हुआ। विज्ञान कथा लेखक डॉ० देवेन्द्र मेवाडी जी ने विज्ञान कथा के आशय को अपने शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया- "विज्ञान कथा साहित्य की वह विधा है जिसके माध्यम से लेखक मानव जीवन पर वैज्ञानिक खोजों, तकनीकी प्रगति, भावी घटनाओं और सामाजिक परिवर्तनों के संभावित प्रभाव दर्शाता है। वह भविष्य में झाँकता है और अपनी लेखनी से भविष्य की तस्वीर खींचता है। अपनी कल्पना और वैज्ञानिक तथ्यों के ताने-बाने से संभावनाओं का संसार बुनता है कि कैसी होगी कल की दुनिया ?"

उपन्यास विधा के अन्तर्गत डॉ० सम्पूर्णानन्द ने सन् 1953 में 'पृथ्वी से सप्तर्षि मंडल' एक छोटा सा उपन्यास लिखा। इसके पश्चात् सन् 1956 में डॉ० ओम प्रकाश शर्मा ने वैज्ञानिक सूचनाओं का प्रमाणिक संकलन करके 'मगल यात्रा' नामक उपन्यास लिखा। डॉ. देवेन्द्र मेवाड़ी जी की उपन्यासिकाएँ 'सभ्यता की खोज', 'डॉ० गजानन के आविष्कार' तथा 'खेम एंथानी की डायरी' आदि प्रकाशित हुईं। आचार्य चतुरसेन ने सन् 1960 में 'खग्रास' उपन्यास लिखा। प्रो० दिवाकर के 'सूरज की भेंट', 'दिमागों का अपहरण', 'नक्षत्रों का युद्ध', 'समाज के स्वामी' तथा 'किरणों के चोर' उपन्यास प्रकाशित हुए। श्री यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक' जी ने यहाँ एक ओर विज्ञान कथाओं का श्रीगणेश वर्ष 1937 में 'वैज्ञानिक की पत्नी' से किया वहीं इसके साथ-साथ आँखों के प्रतिरोपण पर आधारित उपन्यास 'चक्षुदान' (1949), कृत्रिम गेहूँ बनाने पर आधारित उपन्यास 'अन्न का आविष्कार' (1956), 'अपराधी वैज्ञानिक' (1968), 'हिमसुंदरी' (1971) तथा आंचलिक कहानी की पृष्ठभूमि पर कृत्रिम गर्भाधान के परिप्रेक्ष्य में 'नियोगिता नारी' (1987) का प्रणयन किया। सौभाग्यवश इस नायिका प्रधान उपन्यास की समीक्षा लिखने का दायित्व मैंने निभाया जिसका प्रकाशन 'आविष्कार' फरवरी, 1989 में हुआ। इस प्रकार उपन्यास विधा के अन्तर्गत सैकड़ों उपन्यास लिखे गए जिनके हिन्दी विज्ञान लेखक कैलाश शाह, दुर्गादास खत्री, डॉ० जयंत विष्णु नारलीकर, डॉ० बाल फोंड़के, डॉ० अरविन्द मिश्र आदि हैं।

विज्ञान लेखन का 90 प्रतिशत भाग निबंध विधा के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ। यह एक सशक्त विधा है जिसमें अस्सी के दशक में वैज्ञानिक प्रकाशन निर्देशिका के आधार पर लगभग 325 पत्रिकाएँ थीं। विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित मेरे निबन्धों का एक संकलन 'विज्ञान मुक्तावली' सन् 1998 में प्रकाशित हुआ। इसी विधा के अन्तर्गत मेरी एक कृति 'आर्ष साहित्य में मूलभूत विज्ञान' हिन्दी अकादमी दिल्ली के आर्थिक सौजन्य से 1993 में प्रकाशित हुई। श्री शुकदेव प्रसाद जी की कृति 'पर्यावरण और हम' वर्ष 1989 में प्रकाशित निबंधों का एक संकलन है।

अनुशीलन (आलोचना) विधा के अन्तर्गत कालजयी कृति का वैज्ञानिक विश्लेषण आता है। इस दृष्टिकोण से मेरी कृति 'रामचरितमानस में वैज्ञानिक तत्व' उल्लेखनीय है जिसपर अवध विश्वविद्यालय फैजाबाद ने 'विद्या वारिधि' की उपाधि प्रदान की। इसके अतिरिक्त 'रामासुर संग्राम' सैन्य विज्ञान के संदर्भ में तथा 'रामचरितमानसः मूल्यांकन और युद्ध पद्धति' जिसको बिहार सरकार ने अखिल भारतीय ग्रंथ पुरस्कार से सम्मानित किया है।

आत्मकथा विधा के अन्तर्गत मेरी एक कृति 'अनुरोधनामा' प्रेस में है जिसमें शरीर पर नक्षत्रों का प्रभाव, ब्लड ग्रुप का मानसिकता से संबंध तथा वृद्धावस्था में एलजाइमर रोग का प्रभाव आदि प्रसंगों के वर्णन से वैज्ञानिक कृति बन पड़ी है। इस विधा के अन्तर्गत विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में सृजित वह जीवनी है जिसके द्वारा विज्ञान का दृष्टिकोण स्पष्ट हो। विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा प्रकाशित श्री रामदास गौड़ अंक (1937), डॉ० गोरखप्रसाद स्मृति अंक (1961), खन्ना स्मृति अंक (1966), वैज्ञानिक परिब्राजक अंक (1981-82), डॉ० आत्माराम स्मृति अंक (1984), डॉ० नन्द लाल सिंह स्मृति अंक (1997), प्रो० भगवती प्रसाद श्रीवास्तव स्मृति अंक (1998), पं० कृष्ण वल्लभ द्विवेदी सम्मान अंक (1999) आदि भी इसी विधा की धरोहर हैं।

समीक्षा विधा के अन्तर्गत वे सभी विचार आते हैं जो विज्ञान लेखक की कृति के विषय में व्यक्त किए जाते हैं। विज्ञान कृति के गुण और दोषों का वर्णन इसी विधा में समायोजित किया जाता है। **यात्रा विधा** के अन्तर्गत प्रो० दिवाकर की कृति 'शुक्र ग्रह पर धावा', कैलाश शाह की 'पूर्वजों की खोज', श्री प्रेमचंद श्रीवास्तव की 'अंटार्कटिका', श्री रमेश वर्मा की 'सिंदूरी ग्रह की यात्रा', डॉ० ओमप्रकाश शर्मा की 'मंगल यात्रा', डॉ० नवल बिहारी मिश्र की 'सफर का साथी', तथा 'आकाश का रास्ता' आदि रचनाएँ आती हैं।

रिपोर्ताज विधा के अन्तर्गत वे सभी विषय आते हैं जिनका प्रसारण रेडिया तथा दूरदर्शन से होता है। इलेक्ट्रानिक मीडिया ने विज्ञान-विषय को बहुत गंभीरता से न तो आरंभ ही किया और न वर्तमान में ही ले रही है। मीडिया ने लोगों की, पाठकों की, विज्ञान के प्रति जिज्ञासा और नित हो रहे आधुनिक प्रयोगों की जानकारी के प्रति गंभीरता को देखते हुए विज्ञान विषयक स्तंभ/लेखों/धारावाहिकों को स्थान देना शुरू कर दिया। किन्तु यह आज भी विचारणीय विषय है कि प्रिंट मीडिया और इलेक्ट्रानिक माध्यमों में विज्ञान के स्तम्भों एवं लेखों के प्रति कितना न्याय दे रहा है।

पत्रकारिता विधा के अन्तर्गत वे सभी विषय आते हैं जिनका संबंध किसी एक विषय पर तथ्यों, आँकड़ों एवं दैनिक समाचारों पर आधारित है। इस प्रकार अनेक ऐसी वैज्ञानिक पत्रिकाएँ प्रकाशित हुईं जिन्होंने विज्ञान के प्रचार और प्रसार में योगदान दिया है। विज्ञान की विविध शाखाओं तथा तथ्यपूर्वक लेख छापने वाली पत्रिकाएँ- लोक विज्ञान, विज्ञान लोक, विज्ञान जगत, पुलिस विज्ञान, वैज्ञानिक, विज्ञान भारती, विज्ञान डाइजेस्ट, विज्ञानपुरी, ग्रामशिल्प, विज्ञान दूत, विज्ञान, विज्ञान प्रगति, आविष्कार, समीक्षा, जिज्ञासा आदि प्रकाश में आईं। पुस्तकों के विषय में अधिक जानकारी नहीं है किन्तु डॉ० मनोज कुमार पटेरिया की 'हिन्दी विज्ञान पत्रकारिता' पुस्तक उल्लेखनीय है। न्यायालिक विज्ञान (Forensic Science) संबंधित मेरी कृति 'नारी और न्याय' भी इसी विधा की धरोहर है जिसको पुलिस अनंसंधान एवं विकास ब्यूरो (भारत सरकार) ने वर्ष 2000 के लिए पं० गोविन्द वल्लभ पंत पुरस्कार से सम्मानित किया है।

शिक्षण विधा के अन्तर्गत वे सभी विज्ञान की पुस्तकें समाहित हैं जिनको पाठ्यक्रम में निर्धारित किया अथवा पाठ्य सामग्री में विषय विशेष पर सहायता ग्रंथ रूप में रचित है। इस विधा

के अन्तर्गत अधिकतर प्राध्यापक व अध्यापक अभ्यासरत होकर सफल पाए जाते हैं। इसमें भौतिकी, रसायन विज्ञान, भूविज्ञान, वनस्पति विज्ञान, प्राणि विज्ञान, प्रौद्योगिकी विज्ञान चिकित्सा, कृषि विज्ञान, अभियांत्रिकी, खगोल विज्ञान तथा मानव विज्ञान एवं जीवाश्म विज्ञान आदि पुस्तकों का समायोजन है। **ज्ञान विज्ञान शब्दकोश तथा विश्वकोश** भी इसी विधा में सम्मिलित कर सकते हैं। प्रो० शिवगोपाल मिश्र जी की 'विश्वविद्यालय रसायन', 'कृषि जैव विज्ञान', 'अम्लीय मृदाएँ' आदि अनेक रसायन विज्ञान तथा कृषि विज्ञान संबंधी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। इनके अतिरिक्त 'उर्वरक प्रौद्योगिकी', 'उर्वकर प्रौद्योगिकी', 'मृदा भौतिकी', प्रो० रामदास तिवारी की 'कार्बनिक रसायन', प्रो० हीरालाल निगम की 'अकार्बनिक रसायन', डॉ० पारसमाल अग्रवाल की 'क्वांटम सिद्धान्त', डॉ० एम. जी. भाटवडेकर की 'प्रकाशिकी' आदि उल्लेखनीय हैं। विचार किया जाए तो हिन्दी में विज्ञान लेखन पाठ्यपुस्तकों के रूप में ही आरंभ हुआ जिनमें गणित, ज्योतिष, आयुर्वेद, रसायन, प्राणि विज्ञान, भौतिकी, कृषि आदि की पुस्तकें मुख्य हैं। विभिन्न स्रोतों से ज्ञात हुआ कि सन् 1900 से पूर्व हिन्दी में विज्ञान की पुस्तकें सौ से अधिक नहीं थीं जो आज 10,000 से अधिक।

अनुवाद विधा कहने में तो सरल किंतु अपनाने में कठिन है। मैं पहले भी बता चुका हूँ कि लेखन कार्य का क्रम विकास इस प्रकार है कि पहले नकल, फिर नकल-अकल और बाद में अकल पर निर्भर करता है। यह विधा बहुत ही प्राचीन है और संस्कृत साहित्य से आगत है। इस विधा में नकल एवं अकल से कार्य किया जाता है। 'विद्युत के सिद्धांत' अनुवादक प्रो० हरिचन्द्र खरे, 'प्रकाश और वर्ण' अनुवादक प्रो० भगवती प्रसाद श्रीवास्तव तथा 'भौतिक विज्ञान में क्रांति' (1960) अनुवादक डॉ० निहाल करण सेठी आदि उल्लेखनीय हैं। श्री बदलदेवराय झा की अनूदित पुस्तक 'सरल विज्ञान विटप' (1860), श्री विनायक राव की अनूदित पुस्तक 'प्राणिशास्त्र' (1882), सी०एस०आई०आर० का अनूदित विश्वकोश 'भारत की सम्पदा' अनुवाद विधा का उत्तम उदाहरण है। इस विधा के अंतर्गत प्रचुर साहित्य उपलब्ध है और इसी कारण एक सशक्त विधा उभर कर विज्ञान साहित्य में सम्मुख है।

पहेलयाँ विधा भी आजकल विज्ञान साहित्य में काफी लोकप्रिय हैं। इनके माध्यम से बच्चों को समझाने हेतु वैज्ञानिक विषय कम शब्दों में व्यक्त किया जाता है किन्तु आशयपूर्ण एवं ज्ञानवर्धक होता है। ध्यातव्य है डॉ० अरुण आर्य की जीवाणु संबंध पहेली-

हम एक एवं बहुकोशीय
हम सूक्ष्म एवं सर्वव्यापी
हम स्वयंपोषी एवं परजीवी
हममें नाभिक तंत्र अपर्याप्त है।

चंद्रमा के विषय में प्रो० हरिश्चन्द्र गुप्त जी की एक सरल सुंदर सी पहेली प्रस्तुत है-

रॉकेट चलता बाण सरीखा वायुरहित आकाश में।
ढाई मील की दूरी तय हो जाए मास में।।

निःसंदेह 'विज्ञान प्रगति' में प्रकाशित होने वाली छोटी-छोटी (चार चार पंक्ति की) पहेलियाँ काफी रोचक व आकर्षक हैं-

आकर्षण की शक्ति महान,
'मैग्नीशिया' जन्मस्थान।

कहलाया था- लीडिंग स्टोन
अब बतलाओ मैं हूँ कौन ? (चुम्बक)

प्रिस्टले ने मुझे बनाया,
डेवी ने यह गुण बतलाया।
उदासीन एक गैस है खास,
सूँघो हँसी का हो अहसास। (नाइट्रस आक्साइड)

संभवतः ऐसी पहेलियों को पढ़ने की जिज्ञासा पाठकों के अंदर अवश्य ही बड़ी-बड़ी कविताओं और लेखों की अपेक्षा अधिक रहती होगी।

दृश्य काव्य विधा के अन्तर्गत नाटक एवं नौटंकी आदि को स्थान दिया गया है। यद्यपि इस विधा की ओर विज्ञान लेखकों की लेखनी बहुत ही कम उठी है फिर भी प्रेमानंद चंदोला जी की 'बैक्टीरिया अदालत में' (1979) नाटक संग्रह में 'गंदगीमल पर मुकदमा' तथा 'नाइट्रोजन की खेती' आदि उल्लेखनीय हैं।

यों तो प्रत्येक विधा संबंधित विज्ञान लेखन पर विद्वानों की लेखनी उठी है, यहाँ तक कि **मुक्त काव्य** भी अछूता नहीं रहा किंतु खेद है कि इस ओर विज्ञान लेखकों का ध्यान बहुत कम गया है। अतः विज्ञान को लोकप्रिय करने और साहित्यकारों से स्पर्धा करने के लिए बहुत कुछ करना शेष है। कारण कि साहित्यकार विज्ञान लेखकों को हीन भावना से चश्मा लगाकर देखते हैं, जबकि यह उनका अहं है।

5/48 वैशाली
गाजियाबाद-201010 (उत्तर प्रदेश)

विभिन्न विधाओं में विज्ञान लेखन

सुभाष लखेड़ा

आज जिन विधाओं में विज्ञान लेखन किया जाता है, उनको मोटे तौर पर पाँच हिस्सों में बाँटा जा सकता है :

1. परियोजना प्रस्ताव 2. प्रतिवेदन लेखन 3. शोधपत्र लेखन, शोधग्रंथ
4. पाठ्यपुस्तक लेखन 5. लोकप्रिय विज्ञान लेखन

जहाँ तक लोकप्रिय अथवा रुचिकर विज्ञान लेखन का सवाल है, इसे तीन भागों में बाँटा जा सकता है :

1. रुचिकर विज्ञान पत्रिकाओं संबंधी लेखन
2. समाचार पत्रों के लिए विज्ञान लेखन
3. रेडियो, दूरदर्शन पर प्रसारण संबंधी लेखन

चूँकि समाज तक वैज्ञानिक जानकारी पहुँचने के लिए और उसमें वैज्ञानिक जागरूकता पैदा करने के लिए रुचिकर विज्ञान लेखन की भूमिका सर्वाधिक प्रभावी होती है, फलस्वरूप इससे संबंधित कई उपविधाएँ आज हमारे सामने हैं।

रुचिकर विज्ञान लेखन के लिए लेखक जिन उपविधाओं को उपयोग में लाते हैं, उनमें सामान्य लेख, विज्ञान नाटिका, विज्ञान गल्प, प्रश्नोत्तरी, समाचारिकी, विज्ञान पहेलियाँ आदि शामिल हैं।

परियोजना प्रस्ताव

चूँकि विज्ञान का सृजन सामान्य तौर पर प्रयोगशालाओं में होता है, सर्वप्रथम वहाँ सम्पन्न होने वाले विज्ञान लेखन पर विचार किया जाना चाहिए। वैज्ञानिक अपने शोध कार्य हेतु जब कोई परियोजना हाथ में लेते हैं तो वे उसके लिए एक प्रस्ताव तैयार करते हैं। इस प्रस्ताव में परियोजना के उद्देश्य, उस पर खर्च होने वाली राशि, उसमें उपयोग किए जाने वाले उपकरणों, उससे प्राप्त होने वाले लाभों, परियोजना पूरी होने की संभावित अवधि, उस परियोजना के क्षेत्र में अब तक हुए कार्यों का संक्षिप्त विवरण, परियोजना में भाग लेने वाले वैज्ञानिकों और तकनीशियनों के नाम आदि दिए जाते हैं।

यहाँ यह बताना उचित होगा कि विज्ञान सृजन की यह पहली सीढ़ी भाषा की दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि जिस भाषा में कोई वैज्ञानिक अपना परियोजना प्रस्ताव तैयार करता है, वह उसी भाषा में अपना परियोजना प्रतिवेदन और शोधपत्र लिखता है। इतना ही नहीं, इन शोधपत्रों में उपलब्ध जानकारी भी सर्वप्रथम उसी भाषा के पत्र-

पत्रिकाओं में प्रकाशित होती है।

बहरहाल, जहाँ तक हमारे देश की प्रयोशालाओं में तैयार होने वाले परियोजना प्रस्तावों का सवाल है, कुछ अपवादों को छोड़कर ये सब अंग्रेजी में तैयार होते हैं। इसके कई कारण हैं। सर्वप्रथम कारण तो यह है कि जो वैज्ञानिक प्रस्ताव तैयार करते हैं, वे हमारे विश्वविद्यालयों से उच्च शिक्षा अंग्रेजी में ग्रहण करते हैं, उनकी पीएच०डी० थीसिस अंग्रेजी में होती है। परियोजना तैयार करने के लिए उन्हें जिन पुस्तकों और अनुसंधान पत्रिकाओं का सहारा लेना पड़ता है, वे सब अंग्रेजी में आसानी से प्राप्य होती हैं और सबसे प्रमुख बात यह भी है कि जो वरिष्ठ वैज्ञानिक उनकी परियोजना की जाँच-पड़ताल करते हैं और उसे स्वीकृत अथवा अस्वीकृत करते हैं, वे भी ऐसा चाहते हैं।

फलस्वरूप, हिन्दी के हिसाब से विज्ञान लेखन का यह पक्ष सर्वाधिक उपेक्षित है। इसलिए जब हम हिन्दी के विकास पर चिंतन-मनन करते हैं तो हमें विज्ञान की गर्भावस्था से ही सचेत होना होगा।

परियोजना प्रतिवदेन

विज्ञान लेखन की दृष्टि से परियोजना प्रतिवेदन का भी अत्यधिक महत्व है। इस प्रतिवेदन में परियोजना का उद्देश्य, वर्तमान स्थिति पूर्व संपादित कार्यों की समीक्षा, प्रयोग विधि तथा उपकरणों का विवरण, निरीक्षण और परिणाम, विवेचन, संस्तुतियाँ, और सन्दर्भ सूची होती है।

निःसन्देह, अधिकांश परियोजना प्रतिवेदन भी अंग्रेजी में ही लिखे जाते हैं। यहाँ भी इसके पीछे वे सभी कारण होते हैं, जिनका उल्लेख परियोजना प्रस्ताव तैयार करने में किया गया है।

शोधपत्र लेखन

विज्ञान लेखन का तीसरा प्रमुख चरण शोध पत्र लेखन है। कहने की जरूरत नहीं है कि हमारे यहाँ अपवादों को छोड़ दें तो शत-प्रतिशत शोधपत्र अंग्रेजी में लिखे जाते हैं। यहाँ वैज्ञानिक इसमें दो और कारण जोड़ देते हैं। उनके हिसाब से एक तो हिन्दी में ऐसे अनुसन्धान पत्र-पत्रिकाएँ उपलब्ध नहीं हैं, जहाँ वे अपने शोधपत्र छपवा सकें और दूसरे विदेशी जर्नलों में छपने से उनकी बात दुनिया के शीर्षस्थ वैज्ञानिकों तक पहुँच सकती है। सच कहा जाए तो इन दोनों कारणों में कोई दम नहीं हैं। हिन्दी में जो अनुसंधान पत्रिकाएँ मौजूद हैं, उनमें ऐसे वैज्ञानिक कभी शोधपत्र भेजते नहीं और जहाँ तक बात को या अपनी खोज को दूर तक पहुँचाने का सवाल है तो यदि बात या खोज में दम है तो वह अपने आप दूर तक पहुँच जाती है। भाषा उसमें कहीं आड़े नहीं आती है।

बहरहाल, हिन्दी में गिने-चुने शोधपत्र उपलब्ध हैं। फलस्वरूप, शोधपत्र लेखन की विधा का लाभ हिन्दी को नहीं मिला है।

पुस्तक लेखन

जहाँ तक पुस्तक लेखन का सवाल है, इसमें हमारी स्थिति बेहतर न सही, बदतर भी नहीं है। वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद् ने वर्ष 1966 में हिन्दी वैज्ञानिक और तकनीकी प्रकाशनों की पहली निदेशिका का प्रकाशन किया था। इस निदेशिका में 1965 तक हिन्दी में प्रकाशित वैज्ञानिक तथा तकनीकी प्रकाशनों की संख्या 2256 है। नई दिल्ली में आयोजित तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर 1966 से 1980 के बीच प्रकाशित हिन्दी वैज्ञानिक और तकनीकी

प्रकाशनों की दूसरी निदेशिका सन् 1983 में प्रकाशित हो गई, इसमें इनकी संख्या 3344 है। तत्पश्चात् सन् 1981 से लेकर सन् 1990 तक के दशक में प्रकाशित विज्ञान तकनीकी पुस्तकों के विषय में जो तीसरी निदेशिका प्रकाशित हुई, उसमें इनकी संख्या 1149 है।

सारे प्रयत्नों के बावजूद निःसन्देह इस दौरान प्रकाशित सभी पुस्तकों का नाम इस निदेशिका या इन निदेशिकाओं में नहीं आया होगा किन्तु ऐसी पुस्तकों की संख्या हजारों में नहीं होगी, ऐसा मेरा मानना है।

उपरोक्त आँकड़ों से यह स्पष्ट है कि पुस्तक लेखन की विधा का उपयोग हिन्दी में हो रहा है। इसके अलावा स्नातक स्तर तक की विज्ञान तकनीकी पाठ्यपुस्तकें भी हिन्दी में उपलब्ध हैं। वजह यह है कि देश के कुछ विश्वविद्यालयों में स्नातक स्तर की परीक्षाओं में हिन्दी माध्यम उपलब्ध है। पुस्तक लेखन की यह विधा और अधिक पुष्पित पल्लवित हो सकती है किन्तु इसके लिए ज़बानी जमा खर्च की नहीं अपितु ठोस प्रयासों की आवश्यकता है क्योंकि ऐसी लोकप्रिय विज्ञान पुस्तकों का अपेक्षित प्रचार-प्रसार नहीं हो पाता है।

लोकप्रिय विज्ञान लेखन

विज्ञान लेखन की अन्य विधाओं की स्थिति भी कुछ बेहतर है। लोकप्रिय वैज्ञानिक पत्रिकाओं, समाचार पत्रों, पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक और अर्धवार्षिक पत्रिकाओं में लंबे अर्से से विज्ञान विषयक लेख छपते रहे हैं। किन्तु एक बात पर इधर भी ध्यान देने की जरूरत है। प्रमुख रूप से ऐसे लेख स्वास्थ्य और पर्यावरण जैसे मुद्दों से जुड़े होते हैं। हो सकता है ऐसा 'मांग और आपूर्ति' के नियम से होता हो किन्तु हमें जनता को विज्ञान के सभी पक्षों की जानकारी देने के लिए प्रयास करने चाहिए।

आज विज्ञान और प्रौद्योगिकी का विकास जिस तीव्र गति से हो रहा है और संबंधित सूचनाएं भी जितनी तेजी से उपलब्ध हो रही हैं, यह जरूरी है कि पाठकों को लेखों के माध्यम से नवीनतम जानकारी परोसी जाए। ऐसा करने से ही हिन्दी विज्ञान लेखन की उपयोगिता और प्रासंगिकता को सही दिशा में बढ़ाया जा सकता है।

हिन्दी में विज्ञान गल्प, विज्ञान पहेली और विज्ञान नाटिकाओं की स्थिति, कुछ कमजोर है। इस ओर भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

कुल मिलाकर विज्ञान लेखन की विभिन्न विधाओं को अपनाकर ही हम हिन्दी की स्थिति को मज़बूत कर सकते हैं। समाज में वैज्ञानिक सोच विकसित करने की दृष्टि से भी यह बेहद जरूरी है। अंग्रेजी के माध्यम से हम इस देश में 'साइंटिफिक टेम्पर' पैदा करने में असफल रहे हैं। हिन्दी के माध्यम से हम समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण पैदा करने में अवश्य सफल होंगे। यह स्वयं में एक जाँचा परखा यानी वैज्ञानिक तथ्य है।

746, सेक्टर-3, आर०के० पुरम,
नई दिल्ली-110022

विभिन्न विधाओं में विज्ञान लेखन : चुनौतियाँ और संभावनाएँ

डॉ० प्रभाकर द्विवेदी 'प्रभामाल'

विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी "इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखन-चुनौतियाँ और संभावनाएँ" में भाग लेते हुए मैं 'विभिन्न विधाओं में विज्ञान लेखन' विषय पर अपने विचार प्रस्तुत करते हुए गौरव का अनुभव कर रहा हूँ।

बीसवीं सदी या उसके पूर्व भी विज्ञान लेखकों के समक्ष जो भी चुनौतियाँ थीं, निश्चय ही इक्कीसवीं सदी में उससे कहीं अधिक बढ़कर चुनौतियाँ आने की सम्भावना है। विज्ञान के अत्यधिक तेजी से बढ़ते कदम, उनकी शाखाओं और प्रशाखाओं का विस्तार, नए नए अन्य विषयों एवं तकनीकों का उद्भव, भविष्य में अन्य प्रकार के विस्तार की सम्भावनाएँ इस बात का प्रतीक है कि चुनौतियाँ भी दिनों दिन बढ़ती ही जाएंगी। अतः हमें आज से और अभी से मिल बैठकर साहस, धैर्य एवं विवेकपूर्वक आगामी चुनौतियों का सामना करने के लिए सम्भावनाओं का निर्धारण कर लेना होगा। यह तथ्य तो निश्चय रूप से सर्वस्वीकृत है कि विज्ञान रूपी शिशु का जन्म अनादिकाल से सम्भवतः जीवन के प्रारम्भिक काल में ही हो गया था जिसपर वैज्ञानिक आज भी माथापच्ची कर रहे हैं और अभी तक किसी निश्चित निष्कर्ष पर नहीं पहुँचे हैं। विज्ञान की उन्नति तथा अवनति का इतिहास भी अनिश्चय की परिधि से घिरा है। इसे किसी देश-काल की दृष्टि से तटस्थ रूप से निश्चयात्मक तथ्य रूप में प्रगट करना शायद अव्यावहारिक और कठिन होगा। अपने देश के बौद्धिक, पौराणिक तथा बाद की भी वैज्ञानिक उपलब्धियाँ एवं उनका विवरण एक स्वयंसिद्ध गरिमा, महत्ता एवं आश्चर्य का विषय है। आज की इस संगोष्ठी के निकले निष्कर्ष निश्चय ही भविष्य में देश, काल एवं परिस्थितियों की परिधि से निकल कर सम्पूर्ण मानवता का कल्याण करने के में सार्थक सिद्ध होंगी इसमें शंका की कोई गुन्जाइश नहीं है। निश्चय ही ये निष्कर्ष भावी विज्ञान लेखकों के मार्गदर्शन में सहयोगी एवं सार्थक भूमिका निभाने में समर्थ होंगे, ऐसा मेरा विश्वास है।

इक्कीसवीं सदी में भी विज्ञान के उत्तरोत्तर बढ़ते चरणों से विकास और विनाश दोनों की सम्भावनाएँ सुनिश्चित हैं। जहाँ विज्ञान का लाभप्रद विकास जीवमात्र के लिए हितकारी है, वहीं विनाश का लक्ष्य भूमण्डल की अब तक की सारी उपलब्धियों को पल भर में धूल धूसरित करने में सक्षम है। मानव स्वभाव में गुण एवं अव्गुण दोनों समान रूप से विद्यमान हैं। हम अपनी क्षमता एवं प्रतिभा का लक्ष्य क्या निर्धारित करते हैं– चाहे परिस्थितिवश या बाध्यता से- यह वैज्ञानिकों एवं वैज्ञानिक लेखकों पर निर्भर करेगा। विज्ञान का प्रयोग विकास एवं विनाश दोनों के लिए अनादि काल से होता चला आ रहा है तथा जब तक मानवता पृथ्वी पर रहेगी ये दोनों सम्भावनाएँ भी आज से बढ़कर ही भविष्य में भी बनी रहेंगी। विज्ञान सर्वजन हिताय भी हो सकता है और सर्वनाश का कारण

भी। अतः वैज्ञानिकों एवं विशेषकर विज्ञान लेखकों को सर्वदा सतर्क और सावधान रहना होगा कि वैज्ञानिक उपलब्धियाँ गलत हाथों में न जाने पाएँ।

विज्ञान का चाहे जो भी लक्ष्य अथवा उद्देश्य हो, विज्ञान लेखन को प्रभावी बनाने के लिए विभिन्न विधाओं का अपना विशेष महत्वपूर्ण योगदान सुनिश्चित है। विभिन्न विधाओं में- लेख, निबन्ध, कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, यात्रा वृत्तान्त, जीवन चरित्र, पत्राचार, आत्मकथा, वार्ता, चुटकुले, पहेलियाँ, हास्य व्यंग्य आदि का नाम लिया जा सकता है। इनके अलावा लोकगीत, नौटंकी एवं कठपुतली भी अपने आप में प्रभावी विधाएँ हैं। आज की सूचना क्रान्ति के दौर में कैसेट, सी.डी. व ई-मेल व इन्टरनेट भी प्रभावी भूमिकाएँ निभाने में सक्षम हो गए हैं। भविष्य में और भी सम्भावनाएँ बढ़ती जाएंगी, ऐसी उम्मीद है।

विज्ञान लेखकों के समक्ष वैज्ञानिक पत्र पत्रिकाओं एवं अनुसंधान तथा अन्वेषण सम्बन्धी पत्रिकाओं में लेखन की अपनी चुनौती तो रहेगी ही जिससे वैज्ञानिकों के बीच आपसी ज्ञान विज्ञान की समझ एवं विवेक तथा अनुशासन को बढ़ावा मिले। किन्तु इसके साथ ही साथ लोकप्रिय विज्ञान लेखन की भी अपनी महत्ता है जिससे जन जन तक विज्ञान की उपलब्धियों को पहुँचाकर उन्हें लाभान्वित किया जा सके तथा उनकी समस्याओं को वैज्ञानिकों तक पहुँचाकर उनका समाधान ढूँढ पुनः आम लोगों को लाभ दिया जा सके। इस प्रकार लोकप्रिय विज्ञान लेखन के माध्यम से विज्ञान की उपलब्धियों को सर्वसुलभ बनाया जा सके। उपयुक्त लक्ष्य की प्राप्ति हेतु ऊपरलिखित विधाओं का अपना महत्व है। किसानों एवं मजदूरों की अपनी बोलचाल की भाषा में लेख और निबन्ध लिखकर इन उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव है। अन्तर्राष्ट्रीय जगत में जो शब्द प्रचलित हो गए हैं उन्हें उसी प्रकार स्वीकार करना उचित होगा। भाषान्तर अथवा अनुवाद से उसके प्रयोग एवं समझ में गूढ़ता आएगी। इसके साथ साथ सर्वमान्य वैज्ञानिक शब्दावली आयोग के शब्दों का ही प्रयोग करने से एकरूपता बनी रहेगी। इसका भी ध्यान रखना होगा। विषय को सरल, सुबोध एवं भावगम्य बनाकर लेखन किया जाए जिससे गूढ़ वैज्ञानिक रहस्य भी आम लोगों की समझ में आ सकें। हर विधा का अपना महत्व एवं प्रभाव है। विज्ञान लेखक चाहे जिस भी विधा में लेखन का चुनाव करे, उनको प्रभावी एवं फलदायी बनाने पर विशेष जोर देना होगा। देश काल एवं परिस्थिति के अनुसार विधा का चुनाव करना अधिक श्रेयस्कर होगा। आज भी अनेक विधाओं का प्रयोग वैज्ञानिक कर रहे हैं। इक्कीसवीं सदी में इन विधाओं का प्रयोग उत्तरोत्तर और भी बढ़ेगा। इनका क्रमबद्ध, समन्वित एवं विवेकपूर्वक उपयोग करके वैज्ञानिक उपलब्धियों को और अधिक लाभकारी बनाने की आवश्यकता होगी। वैज्ञानिक एवं विज्ञान लेखक इक्कीसवीं सदी की चुनौतियों के अनुरूप उनके समाधान की सम्भावनाएँ तलाश कर विज्ञान को जन कल्याणी बनाने के उद्देश्य की पूर्ति किस हद तक कर सकते हैं, इसी में विज्ञान लेखकों की सार्थकता एवं समर्थता सन्निहित है। अतः हम सभी इस संगोष्ठी के निष्कर्षों के साथ कमर कस कर तत्परतापूर्वक अपने लक्ष्य की प्राप्ति हेतु सक्रिय हो जाएँ और सदा सर्वदा उद्देश्यों की प्राप्ति में समर्थ बने रहें। विज्ञान लेखक चुनौतियों का सामना करने में समर्थ और सक्षम होंगे ऐसा मेरा विश्वास है।

अवकाश प्राप्त रीडर एवं विभागाध्यक्ष
पशुपालन एवं दुग्ध विज्ञान विभाग
कुलभास्कर स्नातकोत्तर महाविद्यालय
इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश

हिन्दी में विज्ञान लेखन का स्वरूप

डॉ० डी.डी. ओझा

यह हर्ष का विषय है कि विज्ञान की शिक्षा हिन्दी माध्यम से भारतवर्ष के बड़े भू-भाग यानि लगभग 12 राज्यों एवं दो केन्द्र शासित प्रदेशों में दी जा रही है। हिन्दी में हजारों की संख्या में विज्ञान की पाठ्य पुस्तकें तथा अन्यान्य संदर्भित ग्रंथ उपलब्ध है। हिन्दी में वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दों की कमी स्वतंत्रता पूर्व से महसूस की जाती रही है। इस कमी को दूर करने का प्रथम प्रयास सन् 1927 ई० में नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा किया गया तथा सभा द्वारा भौतिकी, रसायन, गणित आदि कुछ विषयों में अंग्रेजी पारिभाषिक शब्दों के हिन्दी के पर्याय सुनिश्चित करवाकर उनका प्रकाशन कराया गया। डॉ० सत्यप्रकाश सरस्वती तथा डॉ० फूलदेव प्रसाद वर्मा ने ऐसी शब्दावलियों पर आधारित अनेक पुस्तकों की रचना की तथा वे अन्यों के प्रेरणा स्रोत भी बने। इक्कीसवीं सदी में विज्ञान परिदृश्य परिवर्तित हो चुका है। आज आपेक्षिक आर्द्रता, संकुल रसायन, संतृप्त विलयन, ऊतक पारिस्थितिकी संसाधन, पर्यावरण, जीनोम, नाभिकीय ऊर्जा, ऊर्ध्वाधर आदि अनेक शब्द शिक्षक-विद्यार्थी शिक्षालय सभी में सुपरिचित हो गए हैं जिनका 60 वर्ष पूर्व नाम भी ज्ञात नहीं था। प्रदूषण, प्रतिभूति घोटाला, अवमानना जैसे शब्द गली-मोहल्लों एवं बाजारों में भी सुपरिचित हो चुके हैं। आयुर्विज्ञान एवं अभियांत्रिकी की स्नातक/स्नातकोत्तर परीक्षाओं तथा व्यवसाय प्रशासन की कुछ परीक्षाओं को छोड़कर समस्त परीक्षाओं के लिए अध्यापक भारतीय भाषाओं में पढ़ा रहे हैं।

वस्तुतः लेखन का अर्थ है चमत्कृत शैली में किसी ज्ञान को इस तरह प्रस्तुत करना जिसमें भाषा का प्रवाह हो, विषयवस्तु में पूर्वापर का पालन हो, जो प्रामाणिक तथ्यों पर आधारित हो एवं पाठकों की जिज्ञासाओं का शमन करने वाला हो। विज्ञान हमारे जीवन में कदम-कदम पर है। प्रत्येक वस्तु का परीक्षण करके तथा उसके आधार पर निष्कर्ष प्राप्त करके सिद्धान्त प्रतिपादन करना भी विज्ञान की श्रेणी में आता है। वस्तुतः वैज्ञानिक लेखन कई माध्यमों से हम तक पहुँचते हैं। ये मौलिक भी होते हैं, अनूदित और अनुकूलित भी। वैज्ञानिक एवं तकनीकी साहित्य हमें सामान्यतया चार माध्यमों से प्राप्त होता है– यथा पुस्तकों के माध्यम से, शोधपत्रों तथा शोध पत्रिकाओं के माध्यम से, कोशों तथा विश्वकोशों के माध्यम से तथा जन संचार माध्यमों से– वैज्ञानिक तथा तकनीकी विचारों को प्रसारित करने का सबसे सशक्त माध्यम पुस्तकें हैं क्योंकि मुद्रित रूप में उपलब्ध ज्ञान साहित्य न केवल पीढ़ियों तक सुरक्षित रहता है वरन् विश्व के जिज्ञासुओं को तत्काल सुलभ भी होता है।

विज्ञान लेखन का दूसरा माध्यम शोधपत्र एवं शोध पत्रिकाएँ भी हैं जिनसे हमें अन्वेषणात्मक वैज्ञानिक साहित्य का बहुत बड़ा अंश प्राप्त होता है। सामान्यतया शोधपत्र या तो संगोष्ठियों में वाचित होते हैं अथवा शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित होते हैं। यह लेखन उच्चस्तरीय होता है तथा सामान्य जन के लिए नहीं होता। विश्वकोश एवं परिभाषा कोश से भी हमें विज्ञान लेखन प्राप्त होता है।

विश्वकोशों में जानकारी या सामग्री की मात्रा अधिक होती है तथा यह सामग्री संक्षिप्त लेखों के रूप में संयोजित की जाती है, जबकि परिभाषा कोशों में सामग्री परिभाषाओं, सूत्रों तथा लक्षणों के रूप में दी जाती है। आज वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के द्वारा विभिन्न ज्ञान विज्ञान विषयों पर प्रकाशित 57 परिभाषाकोश उपलब्ध हैं।

विज्ञान लेखन या वैज्ञानिक एवं तकनीकी साहित्य का अंतिम रूप समाचारपत्रों तथा पत्र-पत्रिकाओं के अतिरिक्त संचार माध्यमों यथा रेडियो एवं टेलीविजन के माध्यम से भी प्राप्त होता है। इनमें जिन पाठों का वाचन किया जाता है वे लेखन की श्रेणी में ही आते हैं। जनसंचार माध्यमों से प्रसारित वैज्ञानिक तथा तकनीकी साहित्य की भाषा तथा शैली सरल रखी जाती है तथा इसका प्रस्तुतिकरण भी रोचक होता है जिससे जन मानस को यह ग्राह्य हो सके। इसी प्रकार तकनीकी विषयों को भी गैर तकनीकी तथा रोचक प्रसंगों के साथ जोड़ने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार का लेखन **लोकप्रिय विज्ञान लेखन** कहा जाता है।

वैज्ञानिक लेखन का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत **मौलिक लेखन** होता है। मौलिक पुस्तकों का लेखक हमेशा विषय का विशेषज्ञ होता है क्योंकि मूल चिंतक के रूप में वह अपनी उद्भावनाओं तथा खोजों को लिपिबद्ध करता है। मूल लेखक या वैज्ञानिक जिस भाषा में सर्वप्रथम अपना साहित्य लिखता है वही लेखन प्रामाणिक माना जाता है। इसी कृति पर समस्त अनुवाद भी आश्रित होता है। मौलिक वैज्ञानिक लेखन न केवल वैज्ञानिक चिंतन, ज्ञान विज्ञान तथा शोध कार्य को आगे बढ़ाता है वरन् भाषा के विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान करता है। मौलिक लेखन से ही वास्तव में भाषा का सहज और प्राकृतिक विकास होता है और प्रचलन में रहने के कारण तकनीकी शब्दावली या तकनीकी भाषा रूप स्वीकार्य और ग्राह्य होते हैं।

आज विश्व के विभिन्न देशों में ज्ञान विज्ञान और टेक्नोलॉजी के क्षेत्र में जिस तीव्र गति से अनुसंधान और प्रयोग हो रहे हैं उनके रहते कोई भी देश अपने को विज्ञान के क्षेत्र में स्वनिर्भर नहीं महसूस करता। विकसित देशों में भी नई से नई वैज्ञानिक और तकनीकी जानकारी प्राप्त करने की एक प्रकार की होड़ सी लगी है जिसके फलस्वरूप अनेक राष्ट्र दूसरी भाषाओं में प्रकाशित नवीनतम वैज्ञानिक साहित्य को अपनी भाषाओं में अनूदित करवाकर अपने ज्ञान को अद्यतन रखने का प्रयास करते हैं। ऐसी स्थिति में अनूदित वैज्ञानिक साहित्य की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाती है।

वैज्ञानिक अनुवाद आज विश्व में दो रूपों में देखने को मिलता है। एक रूप वह है जहाँ कार्यरत वैज्ञानिक नए ज्ञान को प्राप्त करने के लिएं अन्य भाषाओं में प्रकाशित शोधपत्रों तथा पुस्तकों का तत्काल अनुवाद चाहते हैं। अनुवाद का दूसरा रूप वह है जो ऐसी भाषाओं में किया जाता है जिसमें वैज्ञानिक लेखन की परंपरा पूर्णतः विकसित नहीं है। हमारे देश में दिल्ली में स्थित INSDOC नामक संस्था भारतीय वैज्ञानिकों की माँग पर विदेशी भाषाओं से अंग्रेजी में वैज्ञानिक अनुवाद का कार्य करती है। वस्तुतः वैज्ञानिक अनुवाद का कार्य एक जटिल प्रक्रिया है तथा इसके साथ कुछ समस्याएँ भी जुड़ कर इस कार्य को कठिन बना देती हैं।

आज वैज्ञानिक और तकनीकी क्षेत्रों में प्रतिदिन इतना विपुल साहित्य प्रकाशित हो रहा है कि किसी भी एक व्यक्ति के पास एक ही विषय पर लिखे गए नवीन साहित्य को पूरी तरह से पढ़ने का समय नहीं है। किसी भी पुस्तक में सामान्यतः कुछ खास अंश ही विशेषज्ञ की निकटतम रुचि का होता है। अतः समय के अभाव, साहित्य की विपुलता और पाठकों की निजी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिक साहित्य के महत्वपूर्ण पक्षों को सार-संक्षेप के रूप में संपादित या संकलित

करके भी प्रस्तुत किया जाता है। साइंस डाइजेस्ट, लेख सारांश, चयनिकाएँ, संकलित लेख संग्रह,विश्वकोश तथा लोकप्रिय ज्ञान विज्ञान की पुस्तकों के रूप में अलग-अलग प्रकार के पाठकों की आवश्यकतानुसार आज जो सामग्री उपलब्ध है वह सार संक्षेप के रूप में वैज्ञानिक सामग्री को अनुकूलित करके प्रस्तुत करने की ही प्रथा है।

हमारे देश में सर्वप्रथम सन् 1888 के लगभग प्रो० टी०के० गज्जर के मार्गदर्शन में गुजराती की पाँच वैज्ञानिक पुस्तकें प्रकाशित हुईं। सन् 1909 में हिन्दी के महेशचरण सिंह की पुस्तक 'रसायन शास्त्र' प्रकाशित हुई। इसी प्रकार बंगीय साहित्य परिषद् में बंगला और नागरी प्रचारिणी सभा ने हिन्दी में कुछ वैज्ञानिक पुस्तकें और शब्द संग्रह निकाले।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हमारे देश में विज्ञान लेखन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य हुए, यथा उच्च कोटि के लेखकों का हिन्दी में पदार्पण, भाषा एवं शैली में स्पष्टता तथा प्रवाह, मौलिक लेखन व अनुवाद। निजी प्रकाशकों ने भी जो पुस्तकें प्रकाशित कीं उनके बाह्य आवरण आकर्षक, सुसज्जित एवं वृहद आकार के हैं जिसमें वैज्ञानिक विषयों को चित्र से समन्वित किया जा चुका है। भारत में विज्ञान लेखन एवं प्रकाशन हेतु 10 मार्च 1913 का दिन अत्यन्त ही शुभ कहा जा सकता है क्योंकि देश के मूर्धन्य विद्वानों ने इस दिन **विज्ञान परिषद्** की स्थापना प्रयाग में की तथा अप्रैल 1915 में ही 'विज्ञान' नामक पत्रिका का शुभ प्रकाशन किया जो आज तक जीवित है तथा कालांतर में भी अपने उज्ज्वल भविष्य की ओर अग्रसर रहेगी।

विज्ञान का लोकप्रियकरण-समय की माँग

आज के युग में विज्ञान के ज्ञान को जन साधारण तक पहुँचाने का कार्य कितना महत्वपूर्ण है इसके दोहराने की आवश्यकता नहीं है। विज्ञान के सरल ज्ञान को जन जन तक पहुँचाना विदेशी भाषा के द्वारा नहीं हो सकता है और न ही विकास का मार्ग ही प्रशस्त हो पाता है। इस संदर्भ में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की निम्न पंक्तियाँ सार्थक हैं-

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटै न हिय को शूल।।

ऐसा विज्ञान, जो जनमानस के ज्ञानवर्द्धन के लिए रोचक ढंग से लिखा, कहा या प्रदर्शित किया जाए, जिससे कि सैद्धान्तिक पक्षों में उलझे बिना वैज्ञानिक तथ्यों की जानकारी हो सके, लोकप्रिय विज्ञान कहलाता है। विज्ञान साहित्य आम साहित्य से भिन्न होता है तथा इसमें मनचाहे शब्दों का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। विज्ञान अपने आप में एक अनुशासित विषय है तथा इसकी अपनी भाषा होती है। इसमें तकनीकी शब्दावली का ही प्रयोग अपेक्षित है, जिसमें शब्दार्थ एवं भावार्थ दोनों एक ही होते हैं। अतः जो लोग यह तर्क देते हैं कि शब्दावली आयोग द्वारा निर्धारित की गई पारिभाषिक शब्दावली क्लिष्ट है, उसका सरलीकरण होना चाहिए। ऐसे लोगों को ध्यान रखना चाहिए कि शब्द कभी क्लिष्ट नहीं होते हैं तथा विज्ञान शब्दावली भी सर्वसाधारण के प्रयोग के लिए नहीं होती है।

आज अनुसंधानवेत्ताओं द्वारा ऐसे तथ्यों और शब्दों का पता चला है जिन्हें जन सामान्य की भाषा में व्यक्त ही नहीं किया जा सकता है— जैसे क्वाण्टम सिद्धान्त, पार्टिकल फिजिक्स अथवा वनस्पति विज्ञान में पौधों के वर्गीकरण से सम्बन्धित कुलों के नाम। ऐसे शब्दों को हिन्दी के किसी विशेष शब्द द्वारा नहीं समझाया जा सकता। अतः इनको ज्यों का त्यों प्रयोग करना ही श्रेयस्कर रहता

है क्योंकि ये जनमानस में प्रचलित हो चुके हैं, जैसे- हारमोन, विटामिन, एक्स रे, अल्ट्रसाउन्ड, कम्प्यूटर, इंटरनेट, जीनोम आदि।

लोकप्रिय विज्ञान साहित्य के प्रचार प्रसार हेतु यह आवश्यक है कि उसमें समरसता का पूर्ण समावेश हो क्योंकि नीरसता पाठकों को ग्राह्य नहीं होती है। आज हर्ष का विषय है कि विज्ञान साहित्य प्रत्येक विधा जैसे- कविता, कहानी, नाटक, लेख, फीचर, समाचार कथा आदि सभी में उपलब्ध है। यदि वैज्ञानिक सामग्री का रुचिकर प्रस्तुतीकरण नहीं होता है तो वह टिकती नहीं है।

आज के युग में विज्ञान लेखन में लेखकों को निम्न बिन्दुओं पर विचार करना चाहिए :-

1. लेखक को विषयवस्तु का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।

2. लेखकों को पाठकों के मानसिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा बौद्धिक स्तर का भी ध्यान रखना चाहिए।

3. लेखकों की भाषा सरल, सुबोध तथा जनसामान्य के समझ की होनी चाहिए।

4. इलेक्ट्रानिक मीडिया का प्रयोग शब्दावली के प्रचार प्रसार के लिए करना।

5. विज्ञान के ज्वलंत विषयों पर यथेष्ट में लोकोपयोगी साहित्य का सृजन होना चाहिए।

6. वरेण्य वैज्ञानिकों को अंग्रेजी का मोह त्याग कर हिन्दी में लेखन करने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देना चाहिए।

अंत में यह कहना चाहूँगा कि आज हिन्दी में विज्ञान का भविष्य बहुत उज्जवल हो चुका है। वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग, केन्द्रीय निदेशालय एवं हिन्दी ग्रंथ अकादमियों तथा स्वयंसेवी संस्थाओं प्रमुखतः विज्ञान परिषद् प्रयाग ने इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया है। आज हिन्दी में विज्ञान विषय पर लगभग 2500 से अधिक लेखक विद्यमान हैं जिनमें महिलाएँ भी सम्मिलित हैं तथा हिन्दी में विभिन्न विज्ञान विषयक लगभग एक सहस्र पुस्तकें प्रकाशित भी हुई हैं। आज हमें आत्मविश्वास तथा निष्ठा की जरूरत है। जब तक हर विज्ञानप्रेमी नित्य ही हिन्दी में लिखेगा नहीं तब तक प्रगति मंद रहेगी। इस सम्बन्ध में हमारे वर्तमान प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी का भी यही सुझाव है कि हिन्दी का विकास तभी संभव है जब यह शीघ्र विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं अनुसंधान की भाषा बन जाए। तो आइए, प्रधानमंत्री जी के निर्देश की अनुपालना करने का संकल्प लेवें और हिन्दी माँ की गरिमा बढ़ावें।

गुरुकृपा, ब्रह्मपुरी, हजारी चबूतरा
जोधपुर-4

हिन्दी भाषा में विज्ञान लेखन की उपयोगिता

दर्शनानन्द

विज्ञान लेखन को हिन्दी भाषा में लोकप्रिय बनाने के प्रयास जारी हैं। इसका भविष्य उज्ज्वल है। इस दिशा में वर्तमान स्थिति यह है कि विज्ञान लेखन की प्रक्रिया युगों से अंग्रेजी भाषा में ही चली आ रही है। समस्त विषयों– भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र, जन्तु विज्ञान, वनस्पति शास्त्र, कृषि विज्ञान, उद्यान विज्ञान, दुग्ध विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान, अभियांत्रिकी विज्ञान, कम्प्यूटर विज्ञान व पर्यावरण विज्ञान आदि अथवा इन सभी विषयों की शाखाओं के शोध कार्यों, थीसिस (Thesis) अथवा वैज्ञानिक कार्यों के लेखन व प्रकाशन अंग्रेजी भाषा में ही होते चले आ रहे हैं। इनके शोधपत्र (Research Papers) भी विदेश स्तर पर; देश स्तर पर अथवा प्रदेश स्तर पर अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित शोध पत्रिकाओं (Journals) में ही प्रकाशित होते रहे हैं।

इन शोध पत्रिकाओं में से कुछ इस प्रकार हैं:–

Egyptian Journal of Horticulture, Proceedings International Society of Citriculture, Egyptian Journal of Phyto-pathology, Indian Journal of Agricultural Science, Indian Journal of Horticulture, Indian Food Packer, Indian Journal of Entomology, Indian Journal of Soil Conservation, Indian Journal of Plant Pathology, South Indian Horticulture, Punjab Horticulture Journal व अन्य जर्नल या वैज्ञानिक शोध पत्रिकाएँ। ये सारे जर्नल या शोध पत्रिकाएँ अंग्रेजी में प्रकाशित होती हैं।

इतना अवश्य है कि इन वैज्ञानिक विषयों के साधारण लेख (Popular Articles) अंग्रेजी में तो लिखे ही जा रहे हैं, परन्तु ये हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं में भी लिखे जाते रहे हैं और अब भी लिखे जा रहे हैं। इनके प्रकाशन के लिए हिन्दी में अनेक पत्रिकाएँ हैं, जिनमें साधारण वैज्ञानिक लेखों के अतिरिक्त शोध लेख भी प्रकाशित होते हैं, जैसे 'विज्ञान', 'आविष्कार', 'खेती', 'फल-फूल', 'कृषि चयनिका', 'पर्यावरण पत्रिका' आदि। शोध पत्रों को हिन्दी भाषा में प्रकाशित करने के लिए विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा 'विज्ञान' के अतिरिक्त 'अनुसंधान पत्रिका' भी प्रकाशित हो रही है, परन्तु उसमें भी अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग होते हैं।

अंग्रेजी भाषा का ज्ञान रखने और अंग्रेजी भाषा में विज्ञान लेखन की पद्धति से अपने देश का, विज्ञान का, या राष्ट्र भाषा हिन्दी का कोई अपमान नहीं होता, वरन् विषम परिस्थितियों में यह ज्ञान उपयोगी ही सिद्ध होता है।

दूसरी ओर चूँकि हिन्दी अपने देश भारत की राष्ट्र भाषा है, इस कारण इसे विज्ञान लेखन में वरीयता मिलना और इसे लोकप्रिय बनाना केवल आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्य है।

फिर भी हिन्दी भाषा में विज्ञान लेखन को अभी तक वह स्थान नहीं प्राप्त हो पाया है, जो

प्राप्त होना चाहिए था, विशेष कर विज्ञान शोध कार्यों के लेखन में। इसी क्रम में यह इंगित करना अनुचित न होगा कि इस दिशा में अभी तक हिन्दी भाषा की अनदेखी ही होती रही।

इसका मुख्य कारण यह है कि हिन्दी वैज्ञानिक लेखन सामग्रियों को देश विदेश के सभी वैज्ञानिक अंग्रेजी भाषा में ही प्रस्तुत करने के अभ्यस्त हो चुके हैं। इन लेखों को हिन्दी भाषा में लिखने में उन्हें अनेक कठिनाइयाँ व अड़चनें आती हैं। अंग्रेजी भाषा में वैज्ञानिक शोध पत्रिकाओं अथवा साधारण वैज्ञानिक पत्रिकाओं में प्रकाशित होने पर सभी वैज्ञानिक उन लेखों का उपयोग कर पाएँगे– ऐसी धारणा है।

दूसरी धारणा यह भी रहती है कि किसी साक्षात्कार में या किसी चयन समिति आदि के समक्ष उपस्थित होने पर हिन्दी भाषा में प्रकाशित विज्ञान लेखनों का कोई विशेष महत्व नहीं रहता। ऐसे विचार भी रहते हैं कि सम्भवतः यह सभी के लिए उपयोगी सिद्ध न हो पाएँ।

शिक्षण संस्थानों में भी यही प्रक्रिया चल रही है। समस्त वैज्ञानिक पुस्तकें भी अंग्रेजी भाषा में ही प्रकाशित होती रहीं। अब कुछ पुस्तकें हिन्दी में भी प्रकाशित हो रही हैं।

पुनः समस्त वैज्ञानिक विषयों के तकनीकी शब्द अंग्रेजी में ही रहे। इनके नाम हिन्दी भाषा में या तो अभी तक बन ही नहीं पाए या बने तो प्रचलित नहीं हो पाए या नाम दिए गए शब्द कठिन रहे या शब्दों को मान्यता नहीं प्राप्तु हुई आदि। कुछ दशक पूर्व के Vitamin लिए 'जीवति', Iron के लिए 'अयस', Fat के लिए 'वसा', 'चिकनाई' व 'चर्बी', Protein के लिए 'प्रोमोजीन', Carbohydrate के लिए 'प्रांगोदीय', Potassium के लिए 'दहातु' नाम हिन्दी में दिए गए, परन्तु ये अधिक प्रचलित नहीं हो पाए। कार्बोहाइड्रेट के लिए 'कार्बोज' के प्रयोग का प्रचलन अवश्य है। फैट के लिए भी 'वसा' लिखा जा रहा है, परन्तु आयरन के लिए 'लोहा' ही लिख दिया जाता है। नाइट्रोजन के लिए 'नत्रजन' या 'नेत्रजन' लिखना भ्रामक प्रतीत होता है, क्योंकि लगभग तीन दशक पूर्व फर्टिलाइजर एसोसिएशन ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली से खाद पत्रिका में एक लेख के प्रकाशन के क्रम में यह निर्देश आए थे कि नाइट्रोजन के लिए नाइट्रोजन ही लिखा जाए तथा नत्रजन या नेत्रजन न लिखा जाए। इस प्रकार अंग्रेजी भाषा के बहुत से वैज्ञानिक तकनीकी शब्दों को हिन्दी में लिख कर ही लेखन को लोकप्रिय बना दिया जाता है, जिससे कि विषय सामग्री को पढ़ने व समझने में सरलता हो।

कुछ तकनीकी नाम या शब्द तो ऐसे हैं जिनका हिन्दी भाषा में बदलना सम्भव ही नहीं लगता– जैसे Mongifera indica (आम), Rana tigrina (मेंढक), Dacus cucurbitae (कद्दू की फल मक्खी), Fusarium oxysporum, form Psidii (अमरूद का उकठा रोग), Sodium Chloride (नमक), Ammonium Sulphate (एक उर्वरक)। इसी प्रकार कितने केमिकल फॉर्मूले व फ्लोरल फॉर्मूले हैं जिनकी हिन्दी नहीं है। H_2O (पानी) के लिए हिन्दी भाषा में क्या लिख जा सकता है ?

फूल के विभिन्न भाग जो अंग्रेजी में हैं उनमें से बहुतों के हिन्दी भाषा में एक से अधिक नाम हैं या कठिन से लगते हैं। Androecium की हिन्दी 'प्रमुंग'; Stamen की 'पुंकेसर'; Filament की 'तन्तु' व 'तन्तु केसर' और Anther की हिन्दी 'पराग कोष' व 'परागाशय' तथा Gynoecium की 'जायांग' बनाई गई है। सामान्यतः अंग्रेजी शब्द Ovary का हिन्दी भाषा में 'गर्भाशय' व 'अण्डाशय' नाम दिए गए हैं। इसी प्रकार के Style लिए 'योनि नली', 'गर्भ नाल' और 'वर्तिका' (तीन नाम); Stigma के लिए 'गर्भ नाल मुण्ड' और 'वर्तिकाग्र' (दो नाम) तथा Corolla के लिए' दल चक्र', 'दल पुंज', 'पंखुड़ी पुंज' (तीन नाम) और Petal के लिए 'दल' व 'पंखुड़ी' हिन्दी नाम दिए गए। Calyx

के लिए 'बाह्य दल पुंज', 'पुटचक्र' और 'अंखुड़ी पुंज' (तीन नाम) तथा Sepal के लिए 'बाह्यदल' और 'अंखुड़ी' हिन्दी नाम बने हैं।

Propagation के लिए भी हिन्दी भाषा में 'प्रसारण' और 'सम्वर्धन' — दो शब्द हैं। फलदार पौधों के वानस्पतिक प्रसारण के क्रम में Budding के लिए हिन्दी भाषा में 'कलिकायन' व 'चश्मा चढ़ाना' और कलम बाँधने (Grafting) की एक विधि Incharging के लिए 'साटा' और 'भेंट कलम' शब्द प्रयोग में आ रहे हैं, परन्तु Veneer Grafting (वेनिअर ग्राफ्टिंग) के लिए कोई शब्द बनाया गया नहीं लगता, जबकि इसके लिए 'जड़ाव कलम' का नाम देने पर विचार किया जा सकता है। (Venner का अर्थ 'ऊपर से लकड़ी के टुकड़े का जड़ाव' है)। इसी प्रकार Claft grafting के लिए कोई हिन्दी नाम नहीं है। इसे 'फाट कलम' का नाम दिया जा सकता है।

इस प्रकार विभिन्न विषयों में अंग्रेजी के अनेक तकनीकी शब्द ऐसे हैं, जिनके हिन्दी भाषा में अभी तक नाम नहीं हैं। अनेक नाम भी भ्रम उत्पन्न करते हैं। विभिन्न संस्थानों द्वारा कोश भी बनाए जा रहे हैं। Hectare का उच्चारण 'हेक्टेयर' होता है परन्तु भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के प्रकाशनों में 'हेक्टर' का प्रयोग किया जाता है, जो एक विचारणीय बिन्दु है। सामान्यतः Litre को हिन्दी में 'लीटर' लिखा जा रहा है। इसकी पुष्टि होना आवश्यक है कि इसके लिए 'लीटर' लिखना ठीक है या 'लिटर'। आजकल एक प्रथा सी बन गई है कि कोई भी कार्यक्रम अभियान के रूप में जो चलाया जा रहा है, उसे आधा अंग्रेजी और आधा हिन्दी में या अंग्रेजी में ही नाम दिया जा रहा है। जैसे Operation Ujala, Operation Lok Nirman, Operation Green।

अतः वर्तमान परिस्थितियों में आवश्यकतानुसार अंग्रेजी के वैज्ञानिक तकनीकी नामों को शुद्ध उच्चारण के साथ हिन्दी में ही लिख कर विज्ञान लेखन को लोकप्रिय बनाया जा सकता है क्योंकि वाचक इस प्रकार विषय सामग्री को भली भाँति समझ सकते हैं। इसी क्रम में अंग्रेजी नामों को कोषों में शुद्ध स्पेलिंग के साथ अंग्रेजी में लिखा रहना भी अत्यंत आवश्यक है। हिन्दी तकनीकी शब्दावली कोष केवल एक मान्यताप्राप्त संस्थान द्वारा समस्त वैज्ञानिक विषयों को दृष्टिगत रखते हुए ही बनाना उपयुक्त होगा। कोश में जो शब्द बनें उन्हें सरल होना आवश्यक है। फिर भी अंग्रेजी भाषा के वैज्ञानिक तकनीकी शब्द जो हिन्दी भाषा में बच चुके हैं, उनमें से एक ही सर्वमान्य सरल शब्द को प्रचलित करना अधिक उपयोगी होगा। ऐसा करने से हिन्दी भाषा में विज्ञान लेखन की लोकप्रियता और अधिक बढ़ेगी।

उपनिदेशक (अवकाश प्राप्त)
उद्यान इलाहाबाद मण्डल
सी–67, गुरु तेग बहादुर नगर
करेली हाउसिंग स्कीम,
इलाहाबाद–211016

हिन्दी तथा इसकी उपभाषाओं में विज्ञान लेखन का अभाव, निवारण का प्रयास, दशा और दिशा

डॉ० राजेश्वरी शांडिल्य

इलाहाबाद विश्वविद्यालय के विज्ञान संकाय के इस पवित्र, प्रसिद्ध और दर्शनीय शिक्षा भवन के सभागार में उपस्थित होकर आप जैसे प्रबुद्ध श्रोतागण को सम्बोधित करने में आज मुझे अत्यधिक सुखद अनूभूति हो रही है। इसके दो कारण हैं। एक तो यह कि लगभग अर्धशताब्दी के पश्चात् इस प्रेरक भवन और यहाँ के परिवर्तित परिवेश को देखकर मैं विस्मित हूँ। लगभग पचास वर्ष पूर्व मैं इस विश्वविद्यालय की छात्रा थी तब इस भवन में मैं विज्ञान की कक्षाओं और प्रयोगशालाओं में गुरुजनों के सानिध्य में कुछ सीखने का प्रयास करने के साथ हृदय में एक महत्वाकांक्षा संजोए रहती थी कि अपनी मातृभूमि की सेवा में विज्ञान को ही माध्यम बनाऊँगी परंतु मेरा वह सपना अधूरा ही रह गया। फिर भी इस सभागार में आज श्रोतागण की उपस्थिति और उनके विश्वास भरे नेत्रों से मुझे यह आश्वस्ति मिल रही है कि हमारे बाद के असंख्य छात्र छात्राओं ने इस विश्वविद्यालय से विज्ञान पढ़कर इस प्रकार के सपनों को अवश्य पूरा किया है। किसी एक व्यक्ति अथवा कुछ व्यक्तियों के विज्ञान पढ़ लेने अथवा न पढ़ लेने से कोई अंतर नहीं पड़ता क्योंकि जब हम सामूहिक दायित्व बोध से काम करते हैं तो हमें व्यक्तिगत हितों की उपेक्षा कर समष्टि के प्रति समर्पित होना पड़ता है। आज का विज्ञान इसी बिन्दु पर केन्द्रीभूत है। लगभग एक शताब्दी पूर्व स्थिति अन्य प्रकार की थी। कभी किसी व्यक्ति ने कोई वैज्ञानिक खोज कर ली तो वह दर्शनीय और पूज्यनीय व्यक्ति बन जाता था क्योंकि विज्ञान के क्षेत्र में उस समय सामूहिकता का भाव उदय नहीं हुआ था। वैज्ञानिक स्वयं कुछ घनिष्ठ सहायकों के साथ शोध कार्य करते थे। आज की स्थिति में यह परिदृश्य नितांत बदला हुआ है। अमेरिका के नासा की बात हो या भारतवर्ष के इसरो की बात हो, माहौल एक सा है। सैकड़ों एवं सहस्रों वैज्ञानिक एक कड़ी के रूप में शृंखलाबद्ध होकर एक दूसरे के पीछे सहभाव से समर्पित होकर खड़े हैं। ऐसे वातावरण में व्यष्टि का विशेष मूल्य नहीं होता क्योंकि उसका लक्ष्य 'स्व' से परे 'सर्व' में तिरोहित हो चुका है और जिस कार्य में वह लगा है वह कार्य भी मानवीय न होकर दैवी बन जाता है। आप जानते हैं कि ईश्वर के प्रति समर्पण से अधिक कोई समर्पण नहीं होता। वह शरणागत है उसकी शरण में जाकर सब कुछ भूल जाना पड़ता है। वही स्थिति आज के वैज्ञानिकों की है। वे अपने कर्म को ईश्वर की पूजा मानकर अंजाम दे रहे हैं। जहाँ साधन शुद्ध और निष्कलुष है वहाँ लक्ष्य तथा फल निश्चित ही केवल बहुजन हिताय नहीं बल्कि 'सर्व हिताय' होंगे। ऐसे समर्पित वैज्ञानिकों को मैं अपना विनम्र प्रणाम अर्पित करती हूँ। मेरी सुखद अनुभूति का दूसरा कारण यह है कि इस विश्वविद्यालय के विज्ञान की एक साधारण सी पूर्व छात्रा को आज

विज्ञान परिषद् की राष्ट्रीय संगोष्ठी सम्बोधित करने का एक दुर्लभ अवसर प्राप्त हुआ है। जीवन में ऐसे अवसर बहुत कम लोगों को यदा-कदा ही मिलते हैं। यह मेरा सौभाग्य है और इसके लिए मैं परिषद् के प्रधानमंत्री डॉ० शिवगोपाल मिश्र जी के प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त करती हूँ। मिश्र जी की यह दृष्टि मुझे बहुत पसन्द आई कि विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के लिए इस प्रकार की महत्वपूर्ण संगोष्ठियों में वैज्ञानिकों के अतिरिक्त इतर वर्ग के व्यक्तियों को भी आमंत्रित किया जाए जो वैज्ञानिक नहीं हैं परंतु उनके हाथ में एक ऐसा हथियार है जिससे वे विज्ञान को वैज्ञानिक से अधिक प्रभाव एवं गति से लोकप्रिय बना सकते हैं। इस वर्ग में मीडिया, लेखक, संपादक मुख्य रूप से सम्मिलित किए जा सकते हैं। मैं स्वयं भी छोटी-मोटी पुस्तकें लिखती हूँ। मेरे लेखन में विज्ञान के हल्के-फुल्के विषय भी रहते हैं जो बाल अथवा किशोर वय के बच्चों के लिए उपयोगी हों। मैं एक हिन्दी भोजपुरी पत्रिका की संपादक भी हूँ।

आज की गोष्ठी का विषय अत्यंत सामयिक, समीचीन एवं यथार्थ पर आधारित है। विज्ञान को लोकप्रिय कैसे बनाया जाए मुख्य मुद्दा यह नहीं होना चाहिए बल्कि हमको इस पर विचार करने की आवश्यकता है कि समाज में वैज्ञानकि दृष्टिकोण कैसे उत्पन्न किया जाए। भारतवर्ष का समाज निरक्षर, पिछड़ा, अंधविश्वासी, धर्मभीरु आदि अनेक प्रकार की भूल भुलैया में फँसा है। इसके अनेक क़ारण हो सकते हैं जिन पर विचार करना इस संगोष्ठी का विषय नहीं है और न तो इसका यहाँ अवसर है। समाज सुधार समाजसुधारकों, राजनीतिज्ञों और समाजसेवियों का कार्यक्षेत्र है। इस प्रकार के निःस्वार्थ समाजसेवियों की इस देश में एक लंबी परंपरा रही है। ऋषि मुनियों से लेकर भगवान महावीर, गौतम बुद्ध, आदिगुरु शंकराचार्य, कबीर, तुलसी, स्वामी दयानन्द, विवेकानन्द, राजा राममोहन राय, महात्मा गाँधी, अम्बेडकर आदि कितने नाम ऐसे हैं जिन्होंने अपना संपूर्ण जीवन समाज से जड़ता के उच्छेदन के लिए होम कर दिया। यह कम आश्चर्य का विषय नहीं है कि भारतीय समाज सहस्रों वर्षो के गंभीर प्रयासों के बावजूद टस से मस नहीं हुआ। बल्कि कई दृष्टियों से समाज की जड़ता बढ़ती जा रही है जिसके लिए हमारी प्रजातंत्रीय व्यवस्था और वोट बैंक की विचारधारा जिम्मेदार है। यदि विज्ञान को लोकप्रिय बनाना है तो समाज के इस स्वरूप पर विचार किए बिना हम आगे नहीं बढ़ सकते। हमारे सैकड़ों महापुरुष अपने जीवन को खपाकर भी समाज को हिला नहीं सके, इसका क्या कारण हो सकता है। मेरा जहाँ तक अध्ययन और समझ है मैं इसकी पृष्ठभूमि में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव ही देखती हूँ। विज्ञान पढ़ना और वैज्ञानिक दृष्टि उत्पन्न करना दो पृथक-पृथक विषय हैं। जरूरी नहीं है कि विज्ञान पढ़कर ही वैज्ञानिक दृष्टि उत्पन्न की जाए। वैज्ञानिक दृष्टि कोई वस्तु नहीं है कि उसे साकार प्रस्तुत करके हाँ या ना करा लिया जाए। वैज्ञानिक दृष्टि का सीधा अर्थ होता है तर्क-वितर्क की शक्ति, निष्पक्ष एवं निःस्वार्थ भाव से समीक्षा की दृष्टि और किसी विचार को समझ लेने के पश्चात् उसे न केवल आत्मसात् करना वरन् उसके क्रियान्वयन की भी दृष्टि। भारतीय जनमानस, जैसा कि मैंने पहले ही कहा है अनेक भ्रमजालों में फँसा हुआ है, इसलिए उससे कोई अपेक्षा न करके यह प्रबुद्ध वर्ग अथवा तथाकथित समाज सुधारकों का कार्य है कि वे अपने अभियान, अपनी विचारधारा और क्रियान्वयन को वैज्ञानिक दृष्टि से देखें, परखें और तब समाज में प्रवेश करें। आज के युग में पच्चासी प्रतिशत और पन्द्रह प्रतिशत की विचारधाराएँ समाज में प्रचलित हैं जो समाज को बाँट रही हैं। यह निरा अवैज्ञानिक दृष्टिकोण है। विज्ञान शत प्रतिशत का हित चाहता है वहाँ 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' का आदर्श निरर्थक हो जाता है। वैज्ञानिक

का एक ही उद्देश्य 'सर्व हिताय' का होता है। भला आप स्वयं सोचें कि जिसके पास वैज्ञानिक दृष्टि है ही नहीं वह समाज को कैसे वैज्ञानिक दृष्टि प्रदान कर सकता है। हमें यहाँ यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारा जो भी कार्य है वह लोकार्पित होता है और हम सब कुछ लोक के लिए ही करते हैं, किसी वर्ग विशेष के लिए नहीं। हमारी दृष्टि निर्भेद होकर समग्रता का भाव रखती है। हमारे कार्य, हमारी विचारधारा और हमारी दृष्टि सूर्य चन्द्र की भाँति सर्वहित के लिए मुक्त होते हैं परंतु लोक में जाकर वहाँ कोष्ठक बनने लगते हैं कौन हमारा है कौन पराया है। हमारी वास्तविक व्यथा यही है। और इसी का उच्छेदन ऐसी संगोष्ठियों तथा विचार-विमर्श का उद्देश्य होना चाहिए। विज्ञान की सफलता इसी में है कि संकीर्ण विचारधारा के बदले व्यापक दृष्टि के संचार का बीड़ा उठाए।

अपने इस लक्ष्य को प्राप्त करने में विज्ञान के लिए एक नहीं अनेक बाधाएँ हैं परंतु सबसे बड़ी बाधा संवादहीनता, भाषाहीनता और लोक निषेध की है। आपने इन शब्दों से मेरा आशय समझ लिया होगा। हम जिसके लिए इतना तामझाम, शोधर्काय, आविष्कार, चिंतन-मनन करते हैं वह लक्ष्य हमारा लोक ही है। यह कितना दुःखद है और त्रासद है कि हम उस लोक से संवाद स्थापित करने में आज तक असफल रहे हैं। इसका सर्वाधिक दुखांत पक्ष यह कि हमारी इस असफलता का प्रतिशत गत पचास वर्षों में और अधिक बढ़ा है। संवाद का माध्यम भाषा होती है। जब स्वयं प्रबुद्ध वर्ग ही भाषाहीन बन गया है तो वह किस प्रकार संवाद स्थापित करे उसके समक्ष यह एक विकट चुनौती है। चूँकि वह इस चुनौती को स्वीकार करने से कतराता है, अपने को अक्षम पाता है इसलिए उसके लिए लोक निषिद्ध स्थान बन गया है। यद्यपि उसने अपना संपूर्ण जीवन ही लोक के लिए समर्पित कर दिया है परंतु उसका लोक प्रवेश वर्जित है क्योंकि वह भाषाहीन है। हमारी अंग्रेजी मानसिकता हमें अपने मूल से विचलित कर हमें नष्ट भ्रष्ट कर रही है। भारतीय इतिहास और संस्कृति के लिए आज परीक्षा का समय आ गया है। सन् 1000 ईस्वी तक हम विश्व के संस्कृतिसम्पन्न, अर्थसंपन्न और प्रबुद्ध नागरिक थे परंतु मुस्लिम आक्रमण के पश्चात् जब हमारा पतन प्रारंभ हुआ तो वह निरन्तर गहराता ही गया और अब यह भविष्य की बता पाएगा कि हम इस दुरभिसंधि से उबर पाएंगे या गर्त के पर्त में ही जाना हमारी नियति है। हमारे वेद, उपनिषद्, रामायण, गीता, महाभारत, पाणिनि का अष्टाध्यायी, यास्क का निरुक्त, चरक संहिता आदि सभी ग्रंथों में न केवल वैज्ञानिक दृष्टि है वरन् उसमें अनेक स्थलों पर वैज्ञानिक विवेचन भी प्रस्तुत किए गए हैं। ईश्वर की शक्ति हो, ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति हो, समाज की स्थिरता या समन्वय हो, किसी भी दृष्टि से आप देख लें वैज्ञानिक दृष्टि मिलेगी। विज्ञान के बिना संपूर्ण वैज्ञानिक दृष्टि भी नहीं उत्पन्न हो सकती। इसका प्रवेश हमारे जीवन के प्रत्येक अंग और ज्ञान के प्रत्येक विषय में विज्ञान का अंश समाहित है। स्कूल, कॉलेज के दिनों में हम लोग प्रायः यह प्रश्न पढ़ते थे कि अर्थशास्त्र विज्ञान है या कला, साहित्य विज्ञान है या कला आदि। इससे भी स्पष्ट है कि विज्ञान की पैठ सर्वोपरि है। यदि यह दृष्टि हमको परंपरा और संस्कार से न मिली होती तो हम अंक, शून्य और दशमलव प्रणाली का आविष्कार नहीं कर पाते। यदि इस भारतीय अवदान से विश्व समुदाय वंचित हो गया होता तो आज न विज्ञान होता, न गणित होती और न शोध या आविष्कार होते। हमारे प्राचीन साहित्य में वर्णित पुष्पक विमान, नाना प्रकार के प्रक्षेपास्त्र, भाँति-भाँति के विध्वंसक धनुष बाण, इन्द्र का वज्र, दधीच की हड्डी, आज से कोई ढाई हजार वर्ष पूर्व मस्तिष्क तक की शल्य क्रिया आदि का उल्लेख कपोल कल्पना नहीं है। इन सबके पीछे विज्ञान है और हमारे वैज्ञानिक दृष्टिकोण का परिणाम है। आप जानते होंगे कि धनवंतरि, चरक जैसे चिकित्सक और

आर्यभट तथा भास्कराचार्य जैसे वैज्ञानिक स्वयं भी एक बहुत बड़े साहित्यकार थे। उनके सभी ग्रंथ श्लोकबद्ध उच्चकोटि की व्याकरणसम्मत संस्कृत भाषा में लिखे हैं। इन महापुरुषों में संवादहीनता और भाषाहीनता नहीं थी। वे और उनके कार्य जन जन में लोकप्रिय थे। क्योंकि वे लोक में प्रवेश की भाषा जानते थे। जो साहित्यकार और वैज्ञानिक लोक प्रवेश नहीं पा सका वह निश्चित ही संवाद और भाषाहीनता का मारा हुआ था।

मेरे वक्तव्य के मुख्य बिन्दु भाषा पर अब विचार करने का अवसर आ गया है। यदि विज्ञान को लोकप्रिय बनाकर उसे प्रवेश देना है और लोक में प्रतिष्ठित करना है तो हमें सर्वप्रथम संवादहीनता और भाषाहीनता का निवारण करना होगा। तभी हम लोक निषेध के दोष से मुक्त होकर लोक प्रवेश के अधिकारी होंगे। उसके लिए हमारी पहली शर्त अंग्रेजी मानसिकता और अंग्रेजी में लेखन से मुक्ति दिलाने की है। इसी विश्वविद्यालय में डॉ. सत्यप्रकाश जी थे जिन्होंने आज से पचासों वर्ष पूर्व, विज्ञान का लेखन हिन्दी में किया था। उनके समक्ष संवादहीनता की समस्या कभी नहीं उठी। उन्होंने अकेले दम पर विज्ञान को जितना लोकप्रिय बनाया वह कई संस्थाएँ मिलकर भी नहीं कर पाईं। अब समय आ गया है कि हम हिन्दी अथवा हिन्दी की उपभाषाओं में विज्ञान लेखन के लिए भाषायी शक्ति का अभाव, तकनीकी शब्दों की अनुपलब्धता और वैज्ञानिक दृष्टि सम्पन्न भाषा संरचना का दुखड़ा न रोकर अपनी मानसिकता बदलें और जैसा भी, जिस रूप में भी या जिस स्तर प भी बन पड़े उसका श्रीगणेश कर दें। हमको यह मानकर चलना होगा कि हम गैलीलियो, न्यूटन, आइंस्टाइन या स्टीफन हॉकिन्स के लिए नहीं लिख रहे हैं बल्कि हम जो कुछ भी लिख रहे हैं वह इस देश की निरक्षर जनता, दबे-कुचले लोग और फटे-पुराने कपड़ों में लिपटे हुए उस बाल पीढ़ी के लिए कर रहे हैं जिनमें अनेक प्रतिभाएँ छिपी हुई हैं। हमें लोक की भाषा में अपने विचार व्यक्त करने में क्यों संकोच होता है यह मैं नहीं समझ पाती। मैं स्वयं हिन्दी और भोजपुरी दोनों भाषाओं में समान रूप से लिखती पढ़ती हूँ। जैसा कि मैंने पूर्व में ही कहा है मैंने अनेक विषयों पर भी निबन्ध लिखा है परन्तु मुझे कोई कठिनाई नहीं आई। पहले आप लोक की दृष्टि में अपनी दृष्टि डालकर देखिए तब आपको समझ में आएगा कि लोक की भाषा क्या होती है और आपको कैसे लिखना है। प्रयोगशाला के बंद कमरे अथवा अध्ययन कक्ष में खोए रहने से आप लोक प्रवेश नहीं पा सकेंगे। आपको लोक साहित्य में जाकर लोक की समझ उत्पन्न करनी होगी। और जब आप लोक की संवेदना, लोक की भाषा और लोक की कठिनाइयों से स्वयं साक्षात्कार करके हिन्दी अथवा किसी अन्य लोक भाषा में कठिन से कठिन विषय भी लिखने का प्रयास करेंगे तो निश्चित ही आप लोक प्रवेश से वर्जित नहीं हो सकते और आपके विचार लोकप्रिय होंगे क्योंकि आपका वार्तालाप उन्हीं की भाषा शैली में है। अर्थशास्त्र में नोबल पुरस्कार प्राप्त विद्वान गुन्नार्र मिर्डल का कथन है कि किसी भी राष्ट्र के लोगों को आपस में जोड़ने वाली जो कड़ी है वह अपनी भाषा ही होती है। विदेशी भाषा कभी भी लोक संवाद का माध्यम नहीं बन सकती। मिर्डल ने तो यहाँ तक कहा कि राष्ट्र की वास्तविक प्रगति और जनता के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहभागिता के लिए लोक संवाद से बढ़कर अन्य कोई माध्यम नहीं हो सकता। आप इस सर्वमान्य वैश्विक भाषायी विद्वान से असहमत नहीं हो सकते। विज्ञान को लोकप्रिय बनाकर जन जन तक पहुँचाना तो राष्ट्रीय महत्व के अनेक कार्यों में एक लघु अंश मात्र है। गाँधी जी ने सन् 1917 में ही कलकत्ता के महाधिवेशन में घोषित कर दिया था कि अपनी भाषाओं को छोड़कर अंग्रेजी के मोह में फँसना भारतवर्ष के लिए शोक का विषय है। यह

एक राष्ट्रीय ट्रैजिडी है। इसक़ी मिसाल सारी दुनिया में नहीं मिलती। हमारे इतिहास में मेरी दृष्टि से केवल तीन ही महापुरुष ऐसे हैं जिन्होंने लोक को समझा और लोकानुकूल लोक भाषा में ही कार्य किया इसीलिए कालजयी बने। वे महापुरुष हैं- भगवान बुद्ध, संत कबीर और महात्मा तुलसीदास। हमें विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के लिए इन्हीं के आदर्श पर चलकर सफलता मिल सकती है, और कालांतर में इस देश को भी इसका सुफल मिलेगा और भारत पुनः जगदीश चन्द्र बोस, चन्द्रशेखर, नार्लिकर और शकुंतला देवी को बार-बार उत्पन्न कर सकेगा।

प्रधान संपादक
भोजपुरी लोक
ए-14, माल एवेन्यू कॉलोनी
लखनऊ-226001

हिन्दी में विज्ञान लेखन की आवश्यकता क्यों ?

एम०पी० यादव

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है एवं भाषा सृष्टि के प्रारम्भ से ही मनुष्य की सहचरी बनी हुई है। अपने अतीत को वर्तमान और भविष्य से जोड़कर देखने की क्षमता सिर्फ मनुष्य में ही है। मनुष्य में यह क्षमता विविध अवदानों के सहारे मूर्त होती है एवं तथ्यात्मक परिणाम उपस्थित करती रहती है। मनुष्य अपनी समस्याओं को बौद्धिक एवं सैद्धान्तिक आधार पर हल करने की कोशिश करता है। बुद्धि की परिलब्धियाँ सफल अभिव्यक्ति के कारण ही कालजयी बन सकी हैं। जीवन के प्रत्येक आयाम (यथा विज्ञान, कला एवं साहित्य आदि) जिसमें अभिव्यक्ति को महत्व प्राप्त है के विकास में भाषायी असंतुलन हमारे विकास के रास्ते में सबसे बड़ा अवरोध बनकर सामने आ रहा है। प्रस्तुत लेख में हम अपनी चर्चा को अधिकतम विज्ञान तक ही सीमित रखते हुए इस संदर्भ में विभिन्न आवश्यकताओं पर दृष्टिपात करेंगे।

शिक्षा हमारे जीवन का अनिवार्य अंग है। आज शिक्षा के बढ़ते महत्व और सभ्य समाज की मूलभूत आवश्यकता के रूप में सामने आने के कारण इसके सरल एवं ग्राह्य प्रसार की व्यवस्था की अनिवार्यता महसूस की जा रही है। भौतिक विकास का आधार वैज्ञानिक प्रगति है, किन्तु शिक्षा में विज्ञान का आधुनिक ढाँचा यूरोपीय है अतः इसी कारण तर्क दिए जाते हैं कि इसके अध्ययन के लिए यूरोपीय माध्यम को ही स्वीकार कर लिया जाए। परन्तु इस तर्क के आधार में ढेर सारी विसंगतियाँ हैं, खासकर जब यह सिद्ध हो गया कि बालक द्वारा विषय की ग्राह्यता मातृभाषा में अधिक होती है। इस आधार पर हमें अन्य समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है।

भारतीय संदर्भ में त्रिभाषा सूत्र की दक्षिण भारत में विफलता एक बड़ी समस्या के रूप में सामने आई है जो भावनात्मक ही नहीं बल्कि यथार्थतः तर्क संगत है। हम इस जटिल एवं तेज गति से बदल रहे संसार में अपने जीवन के 4-5 वर्ष भाषा के अनुशीलन में लगा देने का जोखिम नहीं उठा सकते। साथ ही साथ हमें एक राष्ट्र के रूप में बने रहने के लिए जिन मुख्य अवदानों की आवश्यकता होती है उनमें से भाषा एक अनिवार्य अंग है। जैसा कि हमारा अनुभव रहा है राष्ट्र ने हमेशा मनुष्य के लिए सुरक्षा कवच का काम किया है। राष्ट्रीय एकता आज विकास की अनिवार्यता है। इन मूल कारणों की वजह से विज्ञान की शिक्षा को मातृभाषा में दिए जाने की आवश्यकता है।

एक निराधार तर्क यह दिया जाता है कि विज्ञान लेखन हिन्दी में अव्यावहारिक एवं दुःसाध्य है। भला उन दिनों को हम कैसे भूल सकते हैं जब खगोल विज्ञान एवं गणित को भारतीय शास्त्रकारों ने अप्रतिम ऊँचाइयों तक पहुँचा दिया था। गणित के संदर्भ में कुछ तथ्य स्मरणीय हैं। जिन मूलभूत सिद्धान्तों को पाश्चात्य वैज्ञानिक समाज सत्रहवीं शताब्दी में उद्घाटित कर सका है भारतीय मनीषा उनमें से कुछ के बारे में पाँचवीं शती से बारहवीं शती के मध्य में ही परिचित हो चुकी थी। लैंग्राज,

न्यूटन, कॉशी की प्रतिभा जिस आलोक से विश्व सभ्यता को उद्घाटित कर सकी है आर्यभट्ट, वाराहमिहिर, श्रीधर आदि ने उनमें से कुछ रहस्यों पर से स्वयं ही पर्दा उठा दिया था। किसी को भी संदेह नहीं होना चाहिए कि खगोलशास्त्रीय पदावली विश्व के सर्वाधिक अधुनातन उपादानों पर आरूढ़ होकर ही समर्थ हो सकी है। संस्कृत भाषा ने इसी खगोलशास्त्र को अपने जटिल एवं मिश्र समाज की सहायता से अप्रतिम ऊँचाइयों तक पहुँचाया था। हिन्दी इसी महान विश्व भाषा की पुत्री है एवं अपनी संरचनागत सरलता के कारण इसमें संस्कृत से सबकुछ ग्रहण करने की क्षमता है। जब विश्व में विज्ञान अपने आधुनिकतम रंग ढंग के साथ चीनी, जर्मन, रूसी, फ्रेंच आदि भाषाओं का सानिध्य लेकर आ सकता है तो ऐसा कोई कारण नहीं कि विश्व की साठ करोड़ जनसंख्या की भाषा हिन्दी इस हेतु असमर्थ है।

वस्तुतः इस भूल की जितनी यथार्थता भाषा की अभिव्यक्तिगत सीमाओं के कारण को लेकर है उससे कहीं अधिक कुछ लोगों का वह अक्षम दंभ है जो हमें अपने अधिकारों से वंचित रखने के लिए एवं अपनी खातिर संरक्षित रखने के लिए भाषा की अभेद्य दीवार खड़ी करना चाहता है। इसी दक्षिण भारत में कट्टरपंथी राजगोपालाचारी जैसे महान नेताओं का जन्म हुआ जिन्होंने अपनी सारी क्षेत्रीय प्रवृत्तियों को धता बताते हुए हिन्दी को राष्ट्र भाषा के रूप में स्वीकार करने की उपयुक्तता घोषित की थी।

भाषायी संघर्ष के दो आयाम हैं- एक तो विश्व स्तर तक अपनी बात औरों तक पहुँचानी है और दूसरे अपने घर के लोगों की बात सुननी है। हिन्दी भाषा को जिस तरह से आगे बढ़ना चाहिए उस गति से यह नहीं बढ़ रही है। लोकतांत्रिक भारत की राजनैतिक मेधा में भाषा को लोकतंत्र में नोच खसोट के लिए एक अस्त्र मान लिया गया है जिसमें अनवरत लक्ष्य को प्राप्त करने तक प्रयास करना होगा। आज के युग में इंटरनेट, सूचना प्रौद्योगिकी, कम्प्यूटर आदि हमें काफी आशाएँ बँधा रहे हैं। आज हिन्दी में साफ्टवेयर तैयार हो रहे हैं जिससे ऐसा लगता है कि आज हिन्दी में विज्ञान के प्रसार की दशाएँ अधिक अनुकूल हैं। विज्ञान को हिन्दी माध्यम से हिन्दी भाषी जनता के बीच ले जाना अधिक सरल हो गया है। आवश्यकता इस बात की है कि विज्ञान की निधि को हिन्दी भाषा में उपलब्ध कराने की कोशिश की जाए। इसके लिए हमें मौलिक रचनाओं के साथ-साथ अनूदित ग्रंथों की ओर भी पर्याप्त ध्यान देना होगा, तमाम विज्ञान से संबंधित तकनीकी शब्दों का हिन्दी में रूपांतरण करना होगा एवं उसका जनसामान्य के बीच प्रचार एवं प्रसार करना होगा। मैं समझता हूँ कि इसके लिए भारत के उदारवादी समाज ने हिन्दी भाषा के लिए उदारवादी रुख अख्तियार करके हमारे लिए दरवाजा खोल दिया है।

आज के इस वैज्ञानिक युग में कम्प्यूटर ने हिन्दी में मुद्रण की समस्याएँ काफी हद तक कम कर दी हैं। अतः ऐसी स्थिति में विज्ञान लेखन हिन्दी में पूरी सामर्थ्य एवं गुणवत्ता के साथ हो सकता है। प्रगति के आधार विज्ञान को जब तक अपनी भाषा का कलेवर नहीं मिलेगा, भाषा स्वीकार्य नहीं हो पाएगी। विभिन्न परिवर्तनों ने आज हमें इस स्थिति में पहुँचा दिया है जहाँ से आज यह सम्भव है। इस सम्भावना को मूर्त रूप देने के लिए हिन्दी में विज्ञान लेखन महत्वपूर्ण ही नहीं बल्कि अति आवश्यक है।

शोध छात्र, भौतिकी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

इक्कीसवीं सदी के विज्ञान लेखन में संस्कृत भाषा का महत्व

शिवेन्द्र कुमार पांडे

लेखन के लिए भाषा व लिपि एक अनिवार्यता है। लेकिन लिखित सामग्री का सदुपयोग शिक्षित वर्ग ही कर पाता है व शिक्षा प्रसार के लिए विभिन्न विषयों पर पुस्तकें उपलब्ध कराते रहना लेखकों का कर्तव्य होता है। फिर लेखन कार्य एक निरंतर गतिमान प्रक्रिया है क्योंकि हमारे ज्ञान का स्तर नित नई जानकारियों के फलस्वरुप बढ़ता ही रहता है। इसलिए लेखन सामग्री किस भाषा व लिपि में प्रस्तुत की जाए इस का बहुत महत्व है, विशेषकर भारत जैसे बहुभाषीय देश में।

इतिहास पर नजर दौड़ाने पर हम पाते हैं कि अंग्रेजी शासन के पूर्व भारतवर्ष कई भागों में विभाजित था, जहाँ अलग–अलग भाषाएँ प्रचलित थीं। इसके बावजूद चिरकालीन भारतीय सभ्यता ने, इन पृथक भागों को एक माला के दानों के समान आपस में पिरो दिया था, जिसका श्रेय संस्कृत भाषा को जाता है। इतिहास साक्षी है कि भारत के इन अलग अलग भागों में समृद्ध साहित्य की रचना हुई, पर भाव सबके एक थे। सभी धर्मों से प्रेम करना भारतीय संस्कृति की पहचान बन गई थी।

भारत में द्रविड़ मूल की कुछ भाषाओं को छोड़कर अन्य सभी प्रान्तीय भाषाओं की जननी संस्कृत भाषा है। संस्कृत मूल की भारतीय भाषाओं में हिन्दी बोलने व समझने वालों की संख्या सबसे अधिक है। इस सत्य से भी कोई इनकार नहीं कर सकता कि अधिकांश भारतीय नागरिक सरल हिन्दी व उससे मिलती जुलती भाषा बोलने व समझने में समर्थ हैं। हिन्दी सिनेमा व टी०वी० में प्रसारित रामायण, महाभारत आदि धारावाहिकों की लोकप्रियता भी यही भाव दर्शाती है। हिन्दी के इस व्यापक जनाधार को देखते हुए भारतीय संविधान सभा ने 50 वर्ष पूर्व (14.9.1949) एक विधेयक पारित कर हिन्दी को भारतीय राजभाषा व देवनागरी को लिपि बनाने की मंजूरी दी थी। लेकिन राजनैतिक स्वार्थ के कारण हम पिछले 50 वर्षों में भी हिन्दी को पूर्णतः अपनाने में असमर्थ रहे हैं व इस ऐतिहासिक दिवस को एक भारतीय त्यौहार के समान धूमधाम से मनाते हुए अगले वर्ष तक के लिए भूल जाते हैं।

'भारतीय मानव विज्ञान सर्वेक्षण विभाग' द्वारा 1980 के दशक में एक 'समाज विज्ञान परियोजना' का कार्य प्रारंभ किया गया था। इस कार्य को पूरा करने में 7 वर्षों का समय लगा और इस विभाग ने 120 खंडों में फैली अपनी विस्तृत रिपोर्ट 1992 में भारत सरकार को प्रेषित की थी, जिसके अनुसार भारत में–

1. 4635 समुदाय के लोग निवास करते हैं।

2. 325 भाषाएँ बोली जाती हैं, जो मुख्यतः 12 अलग अलग भाषाओं की शाखाएँ हैं।

3. 14 लिपियाँ प्रचलित हैं।

4. 62.5 प्रतिशत लोग द्विभाषीय हैं।

5. प्रत्येक समुदाय के इतिहास व लोक साहित्य में देशान्तरण का उल्लेख पाया गया है।

उल्लिखित अनेकताओं का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कर निष्कर्ष निकालने पर यह मत स्पष्टतः उभरता है कि बुनियादी शिक्षा के लिए मातृभाषा ही सबसे उत्तम माध्यम हो सकती है। लेकिन भाषा का प्रश्न 'रोजी रोटी और आर्थिक विकास' से भी अंतरंग रूप में जुड़ा है व भारत में इस क्षेत्र के अंतर्गत अंग्रेजी का वर्चस्व स्थापित है। हम अंग्रेजी को नकार भी नहीं सकते, क्योंकि वह एक अंतरराष्ट्रीय भाषा का स्वरूप धारण कर चुकी है जिसे विश्व में सबसे अधिक लोग बोलचाल में उपयोग करते हैं। विश्व में अंग्रेजी भाषा की लोकप्रियता का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू यह भी है कि वर्तमान में सबसे उत्कृष्ट वैज्ञानिक/तकनीकी लेखन का कार्य इसी भाषा में हो रहा है, जिनके विषय में निरंतर अवगत रहना भारत के अपने आर्थिक हित में है क्योंकि एक नई विधि विकसित होने पर, उससे भी उच्चस्तर विकास की संभावनाएँ उभरने लगती हैं।

एक अन्य महत्वपूर्ण तथ्य की ओर उल्लिखित रिपोर्ट ध्यान आकृष्ट करती है कि भारत में 62.5 प्रतिशत नागरिक द्विभाषीय हैं। अर्थात् मातृभाषा के अलावा, अन्य भाषा का भी ज्ञान भारतीय रखते हैं। बाल मनोविज्ञान के आधुनिक विद्वानों के अनुसार जब बच्चा माँ के गर्भ में रहता है, तो उस दौरान माँ–बाप द्वारा घर में उपयोग की जा रही भाषा का नक्शा बच्चे के दिमाग में स्थापित होता रहता है (याद करें– अभिमन्यु द्वारा चक्रव्यूह वेधन वर्णन), जिसके फलस्वरूप बच्चा जन्म लेने के पश्चात उस भाषा को बिना अधिक प्रयास के सरलता से अपना लेता है। इन्हीं विद्वानों के अनुसार एक बच्चा 10–12 वर्ष की उम्र तक कुछ अन्य भाषाएँ भी बिना किसी अतिरिक्त दबाव के सीख सकता है, लेकिन उम्र बढ़ने के साथ साथ नई भाषा सीखने की क्षमता, दिमाग के भीतर प्रस्तुत अवस्था में निष्प्रभावित रूप धारण करने लगती है। फिर बड़ी उम्र में एक नई भाषा सीखने की इस दिमागी क्षमता को पुनः सक्रिय करने का स्तर भी सभी में एक समान नहीं रह पाता है, व उसे सीखने के लिए अथक प्रयास व दृढ़ निश्चय की आवश्यकता होती है।

इसलिए भारत जैसे बहुभाषीय देश में बच्चों को उनकी मातृभाषा में ही बुनियादी शिक्षा दी जाती है। हमारे देश में, आज बहुत आवश्यकता है कि सभी वैज्ञानिक व तकनीकी विषयों में हिन्दी व अन्य सभी क्षेत्रीय भाषाओं में पुस्तकें लिखी जाएँ, विशेषकर युवा वर्ग के लिए, जो देश का भविष्य हैं। लेकिन इन पुस्तकों को लिखते समय हमें एक व्यावहारिकता अपनाते हुए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुचर्चित वैज्ञानिक व तकनीकी शब्दों को उसी रूप में अपनाते हुए उपयोग करना होगा ताकि भविष्य में उच्च स्तर का अध्ययन करते समय भारतीय विद्यार्थियों को कठिनाई न हो। वैसे भी कई विदेशी भाषाओं के शब्द भारतीय भाषाओं के अंतरंग बन चुके हैं और इस प्रकार कुछ नए शब्दों को अपनाने से हमारी ही भाषाएँ समृद्ध होंगी। इस प्रकार की पुस्तकें, अपनी मातृभाषा में पढ़ने पर वे वैज्ञानिक व तकनीकी विषयों को आसानी से समझते हुए ग्रहण कर सकेंगे, जिससे उनका उत्साह बढ़ेगा और उनमें मौलिक रूप में सोचने व कार्य करने की प्रेरणा भी जागृत होगी।

इसके साथ साथ अंग्रेजी भाषा में शिक्षा का वर्तमान प्रावधान भी बनाए रखना होगा। अंग्रेजी भाषा के इस महत्व का ही प्रताप है कि विश्व सूचना प्रौद्योगिकी व्यापार क्षेत्र में भारतीयों का वर्चस्व स्थापित हुआ है। इसलिए अंग्रेजी को नकारना भारत के लिए बुद्धिमानी नहीं होगी।

वैश्वीकरण को गति मिलने के कारण विश्व बाजार संकुचित होता जा रहा है जिसके फलस्वरूप आर्थिक प्रतिस्पर्धा की दौड़ में फोटो फिनिश जैसी संभावनाएँ उभरने लगी हैं– जैसे कौन किस वस्तु का विकास पहले करता है व कौन सबसे पहले पेटेन्ट प्राप्त करता है। इस दौड़ का मुख्य कारण है अंतर्राष्ट्रीय व्यापार जगत से जुड़े विशेषज्ञों के प्रक्षेपण कि अगले एक/दो दशकों के भीतर 50 प्रतिशत से ज्यादा विश्व व्यापार बायोटेक्नोलॉजिकल उत्पादनों में होने लगेगा। इससे प्रभावित हो विश्व के समृद्ध उत्तरी देश अधिक से अधिक पेटेन्ट प्राप्त करने की दौड़ में 90 प्रतिशत पेटेन्टों के मालिक बन बैठे हैं, जबकि वास्तविकता यह है कि जैविक विविधता के भण्डार विश्व के दक्षिणी देशों (भारत, इंडोनेशिया, चीन, आस्ट्रेलिया, ब्राजील, पेरू, इक्वेडोर, कोलंबिया, मेक्सिको व मेडागास्कर) में ही सीमित रह गए हैं। यद्यपि बायोटेक्नोलॉजिकल क्रांति के सूत्रधार उत्तर के विकसित देश हैं, लेकिन दक्षिण के देशों में भारत की स्थिति थोड़ी भिन्न है क्योंकि जैविक संपदा भण्डार समृद्ध होने के साथ, भारत स्वयं में बायोटेक्नोलॉजिकल अनुसंधान व विकास के क्षेत्र में एक अग्रणी देश है, जिसे दक्षिण के अन्य देशों के समान, उत्तर के देशों से टेक्नोलॉजी हस्तांतरण की आवश्यकता नहीं है। फिर भारत के पास, उत्तर के देशों की अपेक्षा, कम खर्च में कुशल तकनीशियनों की कमी नहीं है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात्, भारत पहली बार ऐसे विशाल व्यापारिक क्षेत्र के द्वार पर खड़ा है, जहाँ एकमात्र उपभोक्ता न होकर, एक नई टेक्नोलॉजी का अग्रणी उत्पादक बन भविष्य के विश्व व्यापार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए शिखर पर पहुँच सकता है, जिसके सामने सूचना प्रौद्योगिकी व्यापार क्षेत्र में भारत की वर्तमान आर्थिक सफलता भी साधारण प्रतीत होने लगेगी।

अब चूँकि यह 'जैविक सम्पदा' आधारित व्यापार है इसलिए सूचना प्रौद्योगिकी के समान हमारे कुछ गिने चुने शिक्षित वैज्ञानिक इसे अकेले एक बृहत् भौतिक स्वरूप नहीं प्रदान कर सकते हैं। इसके लिए उन्हें भारत में उपलब्ध विशाल मानव श्रम व पशु शक्ति का इष्टतम उपयोग करना होगा। वैसे भी वैज्ञानिक संदर्भ में कार्य करने की शक्ति को ऊर्जा कहा जाता है। मानव श्रम व पशु शक्ति भारत में उपलब्ध सबसे समृद्ध ऊर्जा स्रोत है (विश्व में द्वितीय व प्रथम)। लेकिन भारतीय परियोजनाकारों ने आज तक इनकी लगातार अनदेखी की है और इन्हें एक समस्या के रूप में ही पहचाना है। इस सोच से प्रभावित हो, विकास कार्यक्रमों के लिए पूंजी निवेश को मूल आधार बनाया है व इस विशाल ऊर्जा स्रोत के दोहन के विषय में वैज्ञानिक ढंग से सोचा ही नहीं है, जो भारत का प्रथम कर्तव्य होना चाहिए था। वर्तमान में उभरते इस नए व्यापार क्षेत्र में इन महत्वपूर्ण भारतीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग अनिवार्य रूप में करना होगा, अन्यथा इसमें भी हम पिछड़ जाएँगे।

लेकिन विकास कार्यक्रमों को सफल अंजाम देने के लिए भारत में शिक्षा प्रसार बढ़ाना अनिवार्यता होगी। इस शिक्षा का मतलब किसी डिग्री से नहीं, पर ऐसी शिक्षा से है, जो अपना भला बुरा सोचने की क्षमता से समर्थ नागरिक तैयार कर सके व जीविकोपार्जन क्षेत्र में उनकी कार्यकुशलता वृद्धि कर उन्हें अधिक आय अर्जन में सहायक हो। इस प्रकार के शिक्षा कार्यक्रम निर्माण कर, उन्हें वृहत स्तर पर लागू करना होगा, क्योंकि वैज्ञानिक परीक्षणों से ज्ञात होता है कि 'शैक्षिक प्राप्ति और उत्पादन क्षेत्रों में उत्पादकता के मध्य सुस्पष्ट आनुभाविक नियमितता होती है' अर्थात् शिक्षित श्रमिकों के उत्पादन में स्पष्ट वृद्धि होती है, चाहे वह कोई भी व्यवसाय क्षेत्र क्यों न हो।

किसी भी क्षेत्र में विकास करने के लिए, संबंधित विषय का गहन अध्ययन कर शोध कार्य करने होते हैं, जिनका आधार होता है मानव का समकालीन ज्ञान भंडार, जो ग्रंथों, पुस्तकों व लेखों आदि से प्राप्त होता है। इसलिए अंग्रेजी के साथ भारत मे संस्कृत भाषा के प्रसार को एक नई गति

प्रदान करनी होगी ताकि भारतीय प्राचीन ग्रंथों में विभिन्न विषयों में भरे पड़े ज्ञान भंडार का लाभ हमारे विद्वान उठा सकें। अब तो ऐसा लगने लगा है कि इन ग्रंथों का अध्ययन कर अपने शोध कार्यक्रम निर्माण द्वारा आगे बढ़ने का प्रयास करने वाले विद्वानों को प्रतिस्पर्धा की दौड़ में, उन दूसरों पर बढ़त प्राप्त हो सकती है, जिनका शोध कार्यक्रम इन भारतीय प्राचीन ग्रंथों पर आधारित नहीं है। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री व 1998 के नोबल पुरस्कार विजेता डॉ० अमर्त्य सेन के अनुसार उनकी वर्तमान उपलब्धि का मुख्य आधार है, उनका संस्कृत भाषा ज्ञान जिससे इन प्राचीन भारतीय ग्रंथों का अध्ययन करने में उन्हें सक्षम बना कर उत्प्रेरक की भूमिका निभाई है और प्रेरित किया है कि वे इनके माध्यम से अर्जित ज्ञान का सदुपयोग आधुनिक परिवेश में करते रहें।

वर्तमान शिक्षा पद्धति एकांगी है, जिसके फलस्वरूप मानव मस्तिष्क के अंतर में प्राकृतिक रूप में अंगीभूत सम्पूर्ण क्षमता का विकास नहीं हो पाता है। मानव मस्तिष्क की इस असीमित क्षमता का अनावरण आधुनिक विज्ञान अब धीरे धीरे करने लगा है। लेकिन इस विषय पर भारतीय प्राचीन ग्रंथों में कई महत्वपूर्ण जानकारियाँ पहले से ही उपलब्ध होने के कारण कई प्रमाण मिलते हैं। इनके गंभीर अध्ययन से प्राप्त ज्ञान के आधार पर भारतीय विज्ञान सार्वभौम क्षेत्रों में शोध कार्यक्रमों को गति प्रदान कर देश में आर्थिक विकास को पर्यावरण के द्वार तक ले जा सकते हैं। इनमें भरे ज्ञान के माध्यम से बौद्धिक, स्मरण, शैक्षणिक, रचनात्मक, नैतिक, तर्क, आदि शक्तियों का विकास करने के साथ साथ चिंता व तनाव से छुटकारा प्राप्त करते हुए 'जियो व जीने दो' जैसे सौहार्द भरे पर्यावरण में जीवन-यापन संभव बनाया जा सकता है।

उल्लिखित चर्चा से स्पष्ट हो जाता है कि संस्कृत भाषा का ज्ञान हमारे विद्वानों की कार्य क्षमता में वृद्धि प्रदान कर भारत को विश्व की एक महाशक्ति के आसन पर बैठा सकता है।

विश्व इतिहास स्पष्ट दर्शाता है कि आर्थिक विकास के साथ पारस्थितिकीय संतुलन बनाए रखना एक अनिवार्यता है और इस ओर समुचित ध्यान न देने के कारण ही कई उन्नत सभ्यताएँ समय के अंतराल में मात्र इतिहास बन चुकी हैं। इस दृष्टि से देखने पर ज्ञात होता है कि भारतीय प्राचीन ग्रंथों में 'पारिस्थितिकीय पर्यावरण संविधान' का विस्तृत प्रावधान उपलब्ध है, जिसका लाभ उठाने के लिए संस्कृत भाषा का ज्ञान आवश्यक है।

भारत जैसे विशाल देश में रोटी, कपड़ा, मकान, बुनियादी शिक्षा, स्वास्थ्य, भूमि सुधार, भूजल भंडारण पुनः पूरण के अभाव में सभी आर्थिक विकास कार्यक्रम बेमानी हो जाएँगे। भारत में ऐसे विकास कार्यक्रम निर्माण करने होंगे, जिसमें श्रम ऊर्जा का अधिक से अधिक उपयोग किया जाए- अर्थात् जल संभर प्रबंध कौशल परियोजनाओं को भारत की प्राचीन गोधन आधारित पद्धतियों के वृहत् उपयोग से संभव बनाया जा सकता है, जो पर्यावरण संगत कार्य भी होगा और भारत को आर्थिक प्रगति की ओर ले जाएगा।

इसलिए भारत में बुनियादी शिक्षा का आधार सभी मातृभाषाएँ होनी चाहिए और इसके साथ साथ अंग्रेजी में शिक्षा का प्रावधान यथावत् रहना चाहिए। इसके अलावा संस्कृत भाषा भी सभी कक्षाओं में नियमित रूप से पढ़ाई जानी चाहिए ताकि उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थी भारत के प्राचीन ग्रंथों में अपनी रुचि के विषय का अध्ययन कर सकने में समर्थ रहें। मानव मस्तिष्क की क्षमता अनन्त है जिसके अंतर्गत तीन भाषाएँ सीखना कोई कठिन कार्य नहीं है।

फिर राष्ट्रीय एकता की भावना को चिरकालीन बनाए रखने के लिए सभी भारतीय भाषाओं को देवनागरी में लिखा जाए तो सारे देश को लाभ मिलेगा। यह समय की माँग भी लगती है।

इतिहास साक्षी है कि समय की माँग के अनुरूप भाषा की लिपियाँ बदलती रही हैं (जैसे संस्कृत–बोलचाल की भाषा से खरोष्ठी व ब्राह्मी में लिखा जाना और वर्तमान में देवनागरी माध्यम) पर भाषाएँ अबाध रूप से फलती फूलती रही हैं। यही भारत के संविधान का लक्ष्य भी है।

राष्ट्रीय भावना को प्रेरणा देने वाले महाकवि मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत–भारती' जो कहा था, वर्तमान संदर्भ में भी सामयिक है–

'हम कौन थे, क्या हो गए हैं, और क्या होंगे अभी।
आओ विचारें आज मिलकर, ये समस्याएँ सभी।।

इसलिए आधुनिक भारत में अधिक से अधिक वैज्ञानिक लेखन कार्य हिन्दी व अन्य सभी क्षेत्रीय भाषाओं में किया जाना चाहिए। लेकिन उसका सम्पूर्ण लाभ उठाने के लिए देवनागरी वर्णमाला को 'राजलिपि' के रूप में अपनाने के साथ साथ संस्कृत भाषा के ज्ञान प्रसार को उच्चस्तरीय प्राथमिकता देनी होगी व अंग्रेजी का स्तर भी यथावत् रखना होगा।

छवि निकुज, बांस बंगलो कम्पाउण्ड
चौथी क्रासिंग, राँची रोड, पुरुलिया
(पश्चिम बंगाल) पिन–723101

भविष्यस्य गवाक्ष विज्ञानकथा

डॉ० राजीव रंजन उपाध्याय

विज्ञान के लोकप्रियकरण के निमित्त विज्ञान लेखन की विभिन्न विधाओं में लेखन के विविध आयामों में विज्ञान कथा-गल्प लेखन एक पूर्णरूपेण स्थापित विधा है। इसके अन्तर्गत वैज्ञानिक उपन्यास भी आ जाते हैं। अन्तर मात्र लघु और दीर्घ वृत्त, दीर्घ कलेवर और अल्प पृष्ठों का है। इस संचार क्रान्ति के युग में दीर्घकाय वैज्ञानिक उपन्यासों की रचना में, लोकप्रियता में यद्यपि आंशिक रूप में वृद्धि अवरुद्ध हुई है, पर दीर्घकाय विज्ञान कथाओं, विज्ञान गल्पों की लोकप्रियता सामान्य विज्ञान कथाओं के अनुरूप प्रभावित नहीं हुई है। एक प्रमुख कारण है, विज्ञान कथाओं के द्वारा कुछ ही पृष्ठों में मनोरंजन, रस, आनन्द मिश्रित थ्रिल को उत्पन्न करने की क्षमता, जो इनकी लोकप्रियता को बढ़ाने में इस गति प्रधान युग में, सहायक सिद्ध हो रहा है।

सामान्य रूप से यह माना जाता है कि हिन्दी विज्ञान कथाओं का प्रादुर्भाव आज से अनुमानतः सौ वर्षों पूर्व उस युग की प्रतिष्ठित पत्रिका 'सरस्वती' में (सरस्वती अंक 6 1900) हुआ था। परन्तु इसके पूर्व 1880-86 के मध्य में साहित्याचार्य पं० अम्बिका दत्त व्यास की दीर्घ कलेवर की विज्ञान उपन्यासिका प्रकाशित हुई थी और डॉ० शिवगोपाल मिश्र के शब्दों में "आश्चर्यजनक वृत्तान्त नामक पुस्तक उनकी गद्य शैली का उत्कृष्ट नमूना कही जा सकती है। हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखकों की दृष्टि से इस पुस्तक का छूट जाना अपने आपमें आश्चर्यजनक है। जो जीवंतता, जिज्ञासा, रोचकता, हास्य व्यंग की छटा, भाषा और वर्णन में एक साथ मौजूद हैं, वह अपने आप में अनोखा प्रभाव छोड़ती है।" (डॉ० शिवगोपाल मिश्र, विज्ञान, विज्ञान कथा विशेषांक, मई 2000 पृ० 31-33)। यदि सुधीजन दीर्घकलेवर के उपन्यासों को कथा कहानी, विज्ञान कथा का स्वरूप मानें तो यह रचना सरस्वती में प्रकाशित 'चन्द्रलोक की यात्रा' और 'आश्चर्यजनक घण्टी' से पूर्ववर्ती विज्ञान कथा के रूप में प्रतिष्ठित होने का दावा कर सकती है।

जैसे विहंगम दृष्टि से देखने पर, अनुशीलन करने पर भारतीय वाङ्मय में वेदों, उपनिषदों में, पुराणों में, यहाँ तक कि दसवीं शती के आसपास रचित 'योगवाशिष्ट' में वर्णित लौह मानकों-रोबोगणों के वर्णन, जिनकी कल्पना लौह-कथनों के आधार पर हुई होगी पूर्ववर्ती बहुश्रुत त्रिशंकु, ययाति, द्रोणाचार्य की, कौरवों की उत्पत्ति के वर्णन, कल्मशपाद से लेकर संस्कृत साहित्य की, पाली, प्राकृत में चित्रित अनेक रोचक कथाओं में वर्णित तथ्यों के केन्द्र बिन्दु में, नाभि में निहित तत्व है शुद्ध मनोरंजन, जिसमें विज्ञानसम्मत तत्वों का, तथ्यों का पुट देकर इनकी रोचकता में वृद्धि की गई है— इस कारण मैं इन कथाओं को प्रच्छन्न विज्ञान कथाएँ कहता हूँ।

वैसे यदि हम समय के पंख पर आसीन हो विज्ञान कथाओं का पुनरावलोकन करें तो 'सरस्वती' में प्रकाशित 'चन्द्रलोक की यात्रा', 'आश्चर्यजनक घण्टी' तथा 'विज्ञान की कहानियाँ', चन्द्रलोक की यात्रा (सदाशिव केलकर), उड़ते अतिथि (विनोदिनी मिश्र), आकाश में युद्ध (सत्य प्रकाश पाण्डेय), बैलून विहार (सदा सहाय चतुर्वेदी), भूगर्भ की सैर (एक हिन्दी सेवी द्वारा अनूवादित), विज्ञान विध्वंसक आदि अनेक रचनाओं ने, विज्ञान कथाओं को, विज्ञान गल्प को स्थापित करने, सुसंस्कृत

करने और इस विधा को दिशा निर्देश और स्वरूप प्रदान करे में स्तुत्य भूमिका निभाई है। इन्हीं रचनाओं ने कालान्तर में विज्ञान कथा में विज्ञानसम्मत तथ्यों को सम्मिलित कर, उन्हें भविष्योन्मुखी बनाने में अप्रतिम योगदान दिया है।

फलस्वरूप डॉ० नवलबिहारी मिश्र की लम्बी विज्ञान कथा 'मंगल ग्रह की पहली यात्रा' 1956 में प्रकाशित हुई थी परन्तु उसके पूर्व भी 'विशाल भारत' और 'त्रिपगथा' नामक पत्र-पत्रिका में विज्ञान कथाओं को प्रश्रय मिला था। इस युग में विज्ञान कथा लेखकों में श्री दुर्गा प्रसाद खत्री, यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक', डॉ० नवल बिहारी मिश्र, बृज मोहन गुप्ता, डॉ० सम्पूर्णानन्द, डॉ० ओमप्रकाश शर्मा, आचार्य चतुरसेन शास्त्री एवं महापंडित राहुल सांकृत्यायन के विज्ञान कथा के स्वरूप निर्धारित करने, उसे विकसित एवं प्रतिष्ठित करने के अंशदान को कभी भुलाया नहीं जा सकता है। हिन्दी कहानी की भाँति ही विज्ञानकथाओं में भी साहित्य वर्णित सभी तत्व रहते हैं। हम इनके कथानक को, कथा सूत्र को, पात्रों को, उनके चरित्रों को, भाषा को, शैली को और देशकाल को लेकर हिन्दी कहानी से तुलनात्मक अध्ययन करें तो एक तथ्य जो इस विश्लेषण में उभर कर सामने आएगा- वह है विज्ञान कथाओं का भविष्योन्मुखी होना। भावों के, मनोभावों के चित्रण, पात्रों के चरित्रों का चित्रण, भूगामी-हिन्दी कहानी की भाँति मन्दगति से विकसित नहीं होता-वरन वह गतिमान यान के समरूप होकर आवश्यकतानुसार चित्रित होता है। कारण है विज्ञानकथाओं की त्वरा और घटनाक्रमों से जूझने की प्रकृति।

एक और तथ्य जो विज्ञान कथाओं को शुद्ध साहित्य से अलग खड़ा कर देता है वह है- इन कथाओं में, भूख, संत्रास, शिश्नोदर और तत्संबंधित चित्रणों का अभाव। साहित्य की कथाओं के विपरीत इनका लक्ष्य दूसरा ही होता है। उन पर भविष्य की घटनाओं को परिदृश्य प्रस्तुत करने के साथ साथ कथा के प्रसाद गुण, मनोरंजन, सूचना तथा रस दृष्टि का दायित्व भी होता है।

विज्ञान कथाओं के सृजन में कभी वृद्धि तो कभी न्यूनता होती रही। इस विधा का सृजन क्रम कभी भी अवरुद्ध नहीं हुआ। परन्तु इनको साहित्य के एक अंग के रूप में प्रतिष्ठित होने का श्रेय संभवतः इस कारण से प्राप्त नहीं हो सका क्योंकि साहित्य लेखन और विज्ञान साहित्य लेखन के बीच शुद्ध साहित्य लेखन करने वालों की यह मानसिकता कि विज्ञान साहित्य लेखन, साहित्य के लिए, साहित्यकार के लिए नहीं है। तथ्यतः ऐसा कुछ भी नहीं है। अक्षर तो अक्षर हैं।

इस मनोवैज्ञानिक अंतर को घटाने और विज्ञान कथा को साहित्य की एक विधा के रूप में प्रतिष्ठित करने हेतु 'भारतीय विज्ञान कथा लेखक समिति' की फैजाबाद में स्थापना की गई थी। इस समिति ने हिन्दी विज्ञान कथा लेखन के सशक्त हस्ताक्षर यथा- सर्वश्री देवेन्द्र मेवाड़ी, हरीश गोयल, डॉ० अरविन्द मिश्र, स्वप्निल भारतीय, जाकिर अली रजनीश, अनिल कुमार, जीशान हैदर जैदी, मनीष मोहन गोरे, श्रीमती कल्पना कुलश्रेष्ठ तथा इन पंक्तियों का लेखक भी संबद्ध है। इन सभी रचनाकारों के संकल्प ने इस विधा को प्रतिष्ठा दिलाई है।

इस संचार-प्रधान वैज्ञानिक युग में मात्र वैज्ञानिक साहित्य ही नहीं, सहज साहित्य भी विज्ञानमय हो उठेगा। यह मात्र समय की बात है और उस समय विज्ञान कथा स्वतः प्रतिष्ठित हो उठेगी। वह समय विज्ञानसम्मत कहानियों का होगा, विज्ञान कथाओं का होगा।

अध्यक्ष, भारतीय विज्ञान कथा लेखक समिति
परिसर कोठी काके बाबू, देवकाली मार्ग
फैजाबाद-224001

इक्कीसवीं सदी में विज्ञान पत्रकारिता

विजय चितौरी

पिछले दिनों दो घटनाएँ एकसाथ घटीं। 11 सितम्बर को आतंकियों ने अमेरिका के चार यात्री विमानों का अपहरण करके उनका उपयोग मिसाइल की तरह करते हुए वर्ल्ड ट्रेड सेंटर ध्वस्त कर दिया। इस घटना के ठीक बाद अमेरिका के विभिन्न शहरों में तथा विश्व के कुछ अन्य देशों में भी एन्थ्रेक्स जीवाणु युक्त पाउडर वाले डाक लिफाफे मिले। कुछ मौतें भी हुई हैं। आतंकी कार्यवाही के साथ साथ यह खुला जैविक युद्ध ही है जिसने सारी दुनिया को दहला कर रख दिया है।

इक्कीसवीं सदी की यह शुरुआत भयावह भविष्य की ओर संकेत करती है क्योंकि केवल युद्ध व आतंक के क्षेत्र में ही नहीं, जैव प्रौद्योगिकी, अन्तरिक्ष, संचार, चिकित्सा, कृषि, पर्यावरण आदि अनेक क्षेत्रों में क्रान्तिकारी परिवर्तन होने वाले हैं। ये क्रान्तिकारी परिवर्तन तथा खोजें भले ही मानवता के हित के लिए हों लेकिन स्वार्थी व अराजक लोग उनका दुरुपयोग शुरू कर ही देते हैं। जीवाणुओं के सम्बन्ध में की गई खोजें मानव को रोगों से बचाने के लिए की गई थीं। लेकिन उसी ज्ञान का उपयोग करके आज जैविक युद्ध का ताना-बाना बुना जा रहा है। गर्भ लिंग परीक्षण की तकनीक भी चिकित्सा कार्यों के लिए खोजी गई थी लेकिन इस तकनीक का उपयोग आज गर्भ में कन्या भ्रूण नष्ट करने के लिए किया जा रहा है।

अब वह दिन दूर नहीं जब मानव क्लोन हमारे बीच में रहेंगे। एक आतंकी को खत्म किया जाएगा तो पता चलेगा कि असली आतंकी तो सुरक्षित है– मारा गया आतंकी असली का क्लोन था। मानव क्लोन के अस्तित्व में आने के बाद सामाजिक ताना-बाना छिन्न-भिन्न हो जाएगा। अनेक तरह की कानूनी अड़चनें पैदा होंगी।

अन्तरिक्ष विज्ञान में निकट भविष्य में मानव लंबी छलांग लगाने वाला है। आदमी चाँद पर पहुँच ही चुका है। वहाँ अब पानी भी मिल गया है। आगे वहाँ मानव बस्ती बसाने की योजनाएँ बन रही हैं। इसी तरह चाँद के बाद मंगल अब दूसरा निशाना है। उम्मीद है कि 2020 तक वहाँ भी आदमी चहलकदमी कर रहा होगा। जिस तरह की आतंकी घटनाएँ पिछले दिनों हुईं उस आधार पर देखें तो कल को किसी आतंकवादी के हाथ परमाणु हथियार लग सकते हैं। ऐसी स्थिति में ये आत्मघाती आतंकी क्या कर गुजरेंगे, इसे सोच कर तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

इस तरह की अनगिनत चुनौतियाँ हमारे सामने हैं या आने वाली हैं। ऐसी स्थिति में निकट भविष्य की पत्रकारिता आज जैसी सामान्य और सपाट कैसे रहेगी ? आज प्रिंट और इलेक्ट्रानिक मीडिया में विज्ञान विषयक समाचारों की उपेक्षा हो रही है। पूरे समाचार पत्र में मुश्किल से 4-5 प्रतिशत जगह ही विज्ञान को मिल पा रही है। लेकिन कल ऐसा संभव नहीं होगा क्योंकि पत्रकारिता समाज की आवश्यकता है। समाज के बीच वही पत्रकारिता जीवित रहेगी जो लोगों को युग की चुनौती से आगाह कर सके और उन्हें सही रास्ता दिखा सके। इस दृष्टि से देखें तो इसमें कोई दो

राय नहीं कि कल की चुनौती वैज्ञानिक उपलब्धियाँ और इनके कारण समाज में उपजे अन्तर्विरोध होंगी। इस चुनौती का सामना सामान्य पत्रकार नहीं, केवल विज्ञान पत्रकार ही कर सकता है। इस तरह आने वाले कल की पत्रकारिता विज्ञान केन्द्रित पत्रकारिता होगी। जैविक व रासायनिक हथियारों से सम्बन्धित लेख पहले ही अखबारों में छपते रहे हैं। लेकिन पिछले दिनों अमेरिका में हुई आतंकी घटनाओं के बाद आम आदमी की रुचि इस तरह के वैज्ञानिक लेखों को पढ़ने में एकबारगी बढ़ गई। अमेरिका में जब एन्थ्रैक्स पाउडर युक्त लिफाफे मिलने लगे तो कितने ही लोग एन्थ्रेक्स के सम्बन्ध में जानने के लिए बेचैन हो उठे।

लेकिन विज्ञान के विविध अंगों के लगातार विकसित होते जाने के कारण विज्ञान पत्रकारिता का भी विविधीकरण आवश्यक हो जाएगा। भौतिक शास्त्र का स्नातक विज्ञान पत्रकार जीव जन्तुओं व पर्यावरण सम्बन्धी रिपोर्टिंग नहीं कर पाएगा। इसी तरह जीव विज्ञान का स्नातक पत्रकार ब्रह्मांड सम्बन्धी पत्रकारिता नहीं कर पाएगा। इस तरह विज्ञान पत्रकारिता में भी अलग अलग शाखाओं के विज्ञान पत्रकार होंगे।

एक विज्ञान पत्रकार से उम्मीद की जाती है कि उसके पास विषय की विशेषज्ञता तो होगी ही, पैनी दृष्टि और खोजी प्रवृत्ति भी होगी। अमेरिका द्वारा 'बाइनरी नर्व गैस' बनाए जाने का खुलासा एक खोजी विज्ञान पत्रकार ने ही किया था। उसने अमेरिकी सेना द्वारा जारी तीन टेंडर नोटिस देखे। दो टेंडर उन गैसों के थे जिनके मिश्रण से जहरीली गैस बनती थी जबकि तीसरा टेंडर उस शैल का था जो दोनों गैसों के विस्फोट से पूर्व एक दूसरे से अलग करता था। उक्त पत्रकार ने उन तीन टेंडरों को मिलाकर जो विज्ञान समाचार बनाया उससे सारी दुनिया में खलबली मच गई। इसी तरह पाकिस्तान द्वारा परमाणु बम बनाने की खबर भी एक खरीद आर्डर से ही खुली। इस आर्डर में एक विशेष प्रकार के इस्पात और 'फ्रीक्वेंसी कन्वर्टर' खरीदने का उल्लेख था। ये दोनों ही परमाणु बम निर्माण में इस्तेमाल होते हैं। इसी प्रकार कुछ वर्ष पूर्व एक विदेशी एजेंसी द्वारा भारत में 'एडिस एजिप्टाई' नामक मच्छर पर शोध परियोजना चलाई जा रही थी। यह मच्छर 'पीत ज्वर' या 'यलो फीवर' फैलाता है जो भारत में नहीं होता। फिर यह शोध भारत में क्यों हो रहा है ? यह सवाल एक विज्ञान पत्रकार के मस्तिष्क में पैदा हुआ और उसे पता लगा कि दरअसल एजेंसी का असल उद्देश्य पीत ज्वर को जैविक हथियार के रूप में विकसित करना है। जब यह समाचार अखबारों में छपा तो काफी होहल्ला मचा और परियोजना बन्द कर दी गई।

साहित्य और पत्रकारिता समाज के दर्पण ही नहीं अपितु दिशा-निर्देशक भी होते हैं। समाज पर आसन्न संकटों से छुटकारे के लिए दिशानिर्देश वही दे सकता है जिसे समस्या की पूरी जानकारी रहे। इक्कीसवीं सदी के सामने आज जो चुनौतियाँ दिख रही हैं उसमें विज्ञान लेखक व विज्ञान पत्रकार का दायित्व बहुत ज्यादा बढ़ जाता है। आज ऐसे उपन्यास, कहानी, लेख व रिपोर्ट की जरूरत है जो जनता को बता सकें कि यदि किसी आतंकवादी ने जुनून में आकर परमाणु बम फेंक दिया तो आम आदमी क्या करे ? यदि जैविक हमला हो जाए तो लोग अपना जीवन कैसे सुरक्षित करें ? प्रदूषण और जनसंख्या विस्फोट का हल क्या हो सकता है ? कैंसर, एड्स जैसे रोगों से कैसे बचा जा सकता है ? आदि आदि।

संपादक
'गाँव की नई आवाज़' (मासिक)
घूरपुर, इलाहाबाद

उपभोक्ता संरक्षण हेतु विज्ञान लेखन की आवश्यकताएँ

रामचन्द्र मिश्र

वर्तमान उपभोक्ता संस्कृति अथवा अप-संस्कृति के दौर में आवश्यक एवं अनावश्यक दोनों प्रकार की उपभोक्ता वस्तुओं एवं सेवाओं की अधिकाधिक खपत बड़ी तेजी से और अविवेकपूर्ण ढंग से हो रही है जिसका गंभीर कुपरिणाम संतत् विकास पर पड़ रहा है। आज के तथाकथित आदर्श वाक्य हैं, 'ज्यादा कमाओ, ज्यादा खाओ', 'यह भी खाओ, वह भी खाओ', 'नई से नई सभी चीजें खरीदो', 'ज्यादा आराम, ज्यादा मनोरंजन' आदि। इस 'खाऊ अपसंस्कृति' में आज उपभोक्ता विवेक से हट कर 'स्यूडो' या असत् परिष्कृत जीवन बिताना चाहता है।

आज बाजार में नित्यप्रति ऐसे उत्पादों का धड़ल्ले से प्रवेश हो रहा है और स्यूडो विज्ञान द्वारा उनका बेबाक प्रचार किया जा रहा है जिसके बारे में आवश्यक तकनीकी सूचना का भारी अभाव है। ऐसे उत्पादों की गुणवत्ता और विश्वसनीयता तथा इनके उपयोग की दक्षता और सुरक्षा संबंधी क्रांतिक बिंदुओं से आम उपभोक्ता ही नहीं, शिक्षित वर्ग भी बहुधा बेखबर है। उत्पादों के छद्म प्रचार की बदौलत उपभोक्ताओं का सही मार्गदर्शन होने के बजाय विमार्गदर्शन ही होता है। मुक्त भूमंडलीकरण के दौर में स्थूल व्यापारीकरण एवं विमार्गदर्शन में अपेक्षित कमी तो नहीं हुई, वृद्धि अवश्य हुई है।

विचारणीय है कि उपभोक्ता अपसंस्कृति के प्रसार में सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक परिवर्तनों का तो हाथ है ही, विज्ञान एवं तकनीकी को भी इसमें सन्नद्ध किया गया है। अधिकांश संसाधित खाद्य पदार्थों एवं सदृश खाद्यों में अनेकानेक रासायनिक योगजों की रेल-पेल जिनके दूरगामी विषाक्त प्रभाव अपरीक्षित हों, एक ज्वलंत उदाहरण है और एक अभिज्ञेय पहचान है उपभोक्ता अपसंस्कृति की। यह विचित्र बात है कि ऐसे उपभोक्ता उत्पादों के छद्म प्रचार में विज्ञान के सही तथ्यों का नहीं बल्कि स्यूडो विज्ञान का सहारा लिया जाता है। इस खतरनाक रुख को सही दिशा देना उपभोक्ता के लिए एक सर्वोच्च महत्व का विषय है जिसमें विज्ञान लेखकों की अहम भूमिका हो सकती है।

प्रेरणा बिंदु

ज्ञातव्य है कि देश के सभी व्यक्ति जन्म से मृत्यु तक ही नहीं बल्कि वस्तुतः गर्भ धारण से अंतिम क्रियाकर्म तक उपभोक्ता होते हैं जिनके लिए विविध खाद्य, अखाद्य वस्तुओं, उपभोज्य पदार्थों, उपकरणों एवं सेवाओं की आपूर्ति करनी होती है। उपभोक्ता की श्रेणी विशाल और व्यापक होने के बावजूद संगठित नहीं है। अतः उपभोक्ता को स्थूल व्यापारीकरण की बदौलत शोषण का शिकार बना लिया जाता है। सही सरल वैज्ञानिक जानकारी का प्रसार उपरोक्त विसंगति को दूर करने में प्रभावी साबित हो सकता है। यक्ष प्रश्न यह है कि उपभोक्ता की जिज्ञासाओं का समाधान कैसे होगा, कौन

करेगा, और कब करेगा ?

हिन्दी विज्ञान लेखन के वटवृक्ष डॉ० शिवगोपाल मिश्र की पुस्तक, लोकप्रिय विज्ञान लेखन, एक शास्त्रीय विवेचन (सह लेखक, डॉ० दिनेश मणि), विज्ञान परिषद् प्रयाग, 1998 में दिए गए एक शीर्षक 'रोजमर्रा के विवादों का समाधान, केवल लोकप्रिय विज्ञान द्वारा' (पृष्ठ 60) के अंतर्गत विज्ञान लेखक कुछ उपभोक्ता समस्याओं को अंकित करते हुए पूछते हैं कि 'इनका उत्तर कौन देगा' ? केवल विज्ञान लेखक। उसे मुफ्त उत्तर देना होगा, माध्यम जो भी हो, यह जिम्मेवारी उसकी है। जाहिर है कि यदि विज्ञान लेखन की बदौलत उपभोक्ताओं को सही मार्गदर्शन मिलता है और उनका निकट एवं सुदूर भविष्य सुरक्षित होता है तो विज्ञान लेखक के लिए एक बड़ा पुरस्कार होगा, प्रेरणा बिंदु होगा। मात्र लेखकीय प्रामाणिकता की खातिर विनम्र उल्लेख करना है कि प्रस्तुत अभिपत्र के लेखक उपभोक्ता संरक्षण विज्ञान संबंधी केन्द्रीय एवं राज्य स्तरीय विविध समितियों में बतौर सदस्य सक्रिय रहे हैं और इनसे प्राप्त दीर्घ अनुभवों के आधार पर इस विषय का विवेचन किया है जो बहुलोकोपयोगी होने के बावजूद संप्रति बहुधा अचर्चित रहा है। अतः प्रथमतः विषय के आधार पर प्रासंगिकता को जान लिया जाए।

प्रासंगिकता

उपभोक्ता समस्याओं के प्रति व्याप्त उदासीनता अथवा असहाय भावना के बावजूद कई सक्रिय तत्वों की बदौलत भारत में उपभोक्ता आन्दोलन जोर पकड़ रहा है जिसमें विज्ञान का संबल भी लिया जा रहा है। संयुक्त राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय प्रयोग हेतु अपनाए गए आठ उपभोक्ता अधिकारों को भारत में उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत शामिल किया गया है जो निम्नांकित हैं :-

मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति का अधिकार : समुचित परिमाण में भोजन, वस्त्र, आवास, स्वास्थ्य, रक्षा, स्वच्छता एवं शिक्षा जैसी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आवश्यक सामानों और सेवाओं को उचित मूल्य पर प्राप्त कराना।

सुरक्षा का अधिकार : विशेषतः ऐसे उत्पादों, उत्पादन विधियों एवं सेवाओं के प्रयोग में सुरक्षा सुनिश्चित करना, जो स्वास्थ्य के लिए खतरनाक हों।

सूचना का अधिकार : सभी उत्पादों के संबंध में वैज्ञानिक जानकारी पाने का अधिकार, जो सही उत्पाद चुनने में सहायक हों एवं भ्रामक प्रचार से उपभोक्ता को आगाह करें।

चुनने का अधिकार : विभिन्न मूल्यों पर प्राप्त संतोषप्रद गुणवत्ता के विविध उत्पादों में से वांछित उत्पादों को चुनना।

सुनवाई का अधिकार : उपभोक्ता संरक्षण नीतियों के निर्माण हेतु विविध उत्पादों के विकास एवं उपभोक्ताओं के वाजिब सरोकारों को मद्देनजर रखना।

क्षतिपूर्ति का अधिकार : घटिया उपभोक्ता उत्पादों एवं असंतोषजनक सेवाओं के निर्माण एवं इनके अयथार्थ प्रचार से होने वाली क्षति की उचित भरपाई करना।

उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार : उपभोक्ता उत्पादों का सही सूचनानुसार चुनाव हेतु आवश्यक जानकारी और निपुणता प्राप्त करना तथा उपभोक्ता के अधिकारों, कर्तव्यों और कार्रवाई करने के संबंध में उन्हें शिक्षित किए जाना तथा

स्वस्थ पर्यावरण का अधिकार : उपभोग की बदौलत वर्तमान और भावी पीढ़ियों की तंदुरुस्ती को होने वाले खतरों से बचाव हेतु स्वस्थ पर्यावरण सुनिश्चित करना।

ज्ञातव्य है कि जहाँ अधिकार होते हैं वहाँ कर्तव्य भी अपेक्षित हैं। अतः उपभोक्ता अधिकारों से लाभान्वित होने के वास्ते निम्नांकित **पाँच उपभोक्ता कर्तव्य** निर्धारित किए गए हैं। ज्ञातव्य है कि कर्तव्य बिना अधिकार और अधिकार बिना कर्तव्य लूला-लंगड़ा है। कर्तव्य विचार व अधिकार कल्पना प्रधान होता है। कर्तव्य का स्थान अधिकार से ऊँचा है, अतः उपभोक्ता संरक्षण की लड़ाई लड़ने के लिए इन कर्तव्यों को निभाना होगा।

विवेचनात्मक जागरूकता : उपभोक्ता उत्पादों की गुणवत्ता और मूल्यों के संबंध में विवेचनात्मक रूप से जागरूक और जिज्ञासु बने रहना।

कार्रवाई की भावना : उपभोक्ता समस्याओं के प्रति निष्क्रिय भाव त्याग कर सक्रिय भावना रखना तथा शोषणविहीन व्यवहार हेतु कार्रवाई करना।

सामाजिक सरोकार : स्वयं के उपभोग का स्थानीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय समुदायों पर पड़ने वाले कुप्रभावों के संबंध में सजग रहना, खासकर उन समुदायों के संबंध में जो प्रतिकूल स्थितियों में हों।

पर्यावरणीय जागरूकता : विविध उत्पादों की खपत से होने वाले पर्यावरणीय कुपरिणामों से जागरूक रहना और व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करना, तथा

एकात्मकता/समस्वार्थ की भावना : उपभोक्ता संरक्षण हेतु प्रभावी रूप से एकजुट होकर समस्वार्थ की भावना से कार्रवाई करना।

प्रथम आवश्यकता

उपरोक्त अधिकारों एवं कर्तव्यों के वहन हेतु विज्ञान लेखन की आवश्यकताएँ प्रायः असीमित हैं। संयुक्त राष्ट्र ने विभिन्न राष्ट्रों द्वारा उपभोक्ता नीति के निर्माण एवं अद्यतन करने के वास्ते आठ सूत्रीय दिशानिर्देश जारी किए हैं जो इस प्रकार हैं : निर्णय लेने में उपभोक्ता की सहभागिता, उपभोक्ता के आर्थिक हितों की सुरक्षा, क्षतिपूर्ति के प्रभावी उपाय, उपभोक्ता सुरक्षा का कार्यान्वयन, उत्पादों का मानकीकरण, उपभोक्ता शिक्षा एवं सूचना की उपलब्धि, विविध उत्पादों हेतु उपभोक्ता की पहुँच तथा उपभोक्ता के स्वास्थ्य रक्षा के इंतजामात सुनिश्चित करना।

स्वाभाविक है कि उपभोक्ता संरक्षण क्रम को आरंभ करने और चलाने के वास्ते वैज्ञानिक जानकारी पहुँचाना सर्वोच्च महत्व की आवश्यकता है। विज्ञान लेखन की आवश्यकता निश्चय ही इस तथ्य से साफ रेखांकित होती है।

प्रयोजन पूरक लेखन

ज्ञातव्य है कि उपभोक्ता संबंधी विज्ञान लेखन किसी एक विषय से संबंधित नहीं है बल्कि बहुविषयक क्षेत्र है। इसके अंतर्गत रसायन, भौतिकी, वनस्पति, प्राणि, खाद्य, कृषि, आयुर्वेद, औषधि, आधुनिक उपचार, पदार्थ विज्ञान आदि शाखाएँ तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में जैव, धातुकी, सिविल, यांत्रिकी, रासयानिकी, वैद्युतिकी, वैमानिकी, वानिकी, संगणक, अंतरिक्ष, तथा अन्य कई परंपरागत और नवीनतम विषय शामिल हैं जिन पर विज्ञान लेखकों को लेखनी चलानी है। निम्नांकित उपभोक्ता पदार्थों एवं सेवाओं के संबंध में सूचनात्मक, निर्देशात्मक एवं खोजपूर्ण विज्ञान लेखों की भारी आवश्यकता है।

मूलभूत आवश्यकताएँ : हवा, पेय जल, भोजन, वस्त्र, आवास आदि।

स्वच्छता/स्वास्थ्य रक्षा के उत्पाद : साबुन, प्रक्षालक, केशमार्जक, केशतेल, सौंदर्य प्रसाधन, औषधि, चिकित्सा सेवा, प्रदूषण नियंत्रण सेवा आदि।

खाद्य पदार्थ : खाद्य मिलावट, खाद्य विषाक्तता, पेयजल गुणवत्ता, खनिज जल, शीतल पेय, दूध एवं दूध से निर्मित उत्पाद, चाय, कॉफी, खाद्य तेल, मसाले, संसाधनीकृत या डिब्बाबंद खाद्य आदि के संबंध में खोजपूर्ण रिपोर्ट।

ऊर्जा प्रणालियाँ : पेट्रोलियम तेल व गैस, कोयला, अधूम कोक, गोबर गैस, सौर ऊर्जा आदि घरेलू पदार्थों एवं इनके उपयोग हेतु उपकरणों की दक्षता, सुरक्षा, रख रखाव आदि विषय।

उपभोक्ता सेवाएँ : यातायात, परिवहन, जनसंचार, विद्युत एवं जल आपूर्ति, वित्तीय सेवाओं आदि से जुड़े विषय।

घरेलू उपकरण/युक्तियाँ : प्रकाश, ऊष्मा, चल ऊर्जा संबंधी विद्युत उपकरण, तेल व गैस संबंधी उपकरण/युक्तियाँ, प्रेशर कुकर, रेडियो, टेलीविजन, धुलाई मशीन आदि संबंधी विशिष्ट तकनीकी जानकारी।

विविध व्यवहार्य वस्तुएँ : कीटनाशी पदार्थ, प्लास्टिक पदार्थ, लेखन सामग्री, खेल सामग्री, सुरक्षा सामग्री, आभूषण, पूजा सामग्री, शृंगार सामग्री आदि।

अनावश्यक/हानिकारक उत्पाद : सतत् विकास में बाधक, पर्यावरणनाशी, अनिष्टकर कार्यों हेतु निर्मित उत्पाद एवं लागत मान्यताओं के पूरक उपभोग के खिलाफ वैज्ञानिक जागरूकता।

उपरोक्त पदार्थों तथा सेवाओं के सर्वेक्षण एवं जाँच परीक्षा की रिपोर्ट के आधार पर जो विज्ञान लेखन होगा वह प्रयोजनपूरक साबित होगा। जिन उत्पादों पर जाँच रिपोर्ट उपलब्ध न हो उनके मानकों एवं मानक संदर्भ ग्रंथों से प्राप्त तकनीकी जानकारी प्राप्त करना होगा। लेखन कार्य में इन सारी जानकारियों का एक तुलनात्मक अध्ययन, विश्लेषण करना आवश्यक होगा। उत्पादों के लेबल पर अंकित आयतन, मात्रा, संरचना, गुणधर्म, प्रयोग-दक्षता, चेतावनी, सावधानियाँ आदि संबंधी सूचना भी लेखन में सहायक होंगी।

उपभोक्ता हेतु लेखन का मूल उद्देश्य संबंधित वैज्ञानिक जानकारी का प्रसार करना और इस प्रकार प्रयोक्ताओं की व्यावहारिक दक्षता की वृद्धि करना है ताकि वे अपने अधिकारों का प्रभावी रूप से इस्तेमाल और जिम्मेवारियों का वहन करें। विज्ञानलेखकों को यह भी देखना है कि गलत, भ्रामक या अतिशयोक्तिपूर्ण विज्ञापनों का तार्किक खंडन करें और इनमें प्रयुक्त स्यूडो विज्ञान की जगह सही वैज्ञानिक जानकारी से उपभोक्ता को अवगत कराएँ।

प्रायोगिक कार्यक्रम

भारत सरकार के विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विभाग के अंतर्गत सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान प्रायोगिक तौर पर एक कार्यक्रम 'विज्ञान प्रौद्योगिकी द्वारा उपभोक्ता संरक्षण' चलाया गया था जिसका उद्देश्य था, उपभोक्ता पदार्थों एवं सेवाओं संबंधी तकनीकी जानकारी बढ़ाना एवं इनकी गुणवत्ता में सुधार लाना। इसके लिए राष्ट्रीय स्तर की एक सलाहकार समिति गठित हुई थी (लेखक समिति के सदस्य थे)। इस कार्यक्रम का विस्तारित उद्देश्य यह भी था कि आम खपत के उत्पादों के सुधरे हुए रूप तैयार किए जाएँ और दक्षता एवं सुरक्षा के कारक मजबूत किए जाएँ। सूचनाप्रद वैज्ञानिक साहित्य, रिपोर्ट, वीडियो फिल्म आदि के निर्माण की भी योज़ना थी। इस कार्यक्रम हेतु अत्यंत सीमित प्रावधान था, अतः मात्र कुछ पदार्थों के संबंध में ही सुधारात्मक कार्य हो सके (प्रक्षालक, दियासलाई, खाद्य तेल, विद्युत वल्ब, ट्यूब, पेंसिल, आदि) खाद्य मिलावट की जाँच हेतु लेखक द्वारा एक घरेलू किट भी तैयार किया गया।

उपरोक्त प्रायोगिक कार्यक्रम से प्राप्त कुछ वैज्ञानिक साहित्य विज्ञान लेखन कार्य में बहुत सहायक साबित हुए किंतु व्यापक रूप में कोई प्रभाव नहीं पड़ सका। इस कार्यक्रम के राज्य सरकारों द्वारा बड़े पैमाने पर किए जाने की अपेक्षा के साथ बीच में ही बंद कर दिया गया था। उपभोक्ताओं को तकनीकी साक्षर बनाने में इस कार्यक्रम के जरिए विज्ञान लेखक प्रभावी भूमिका अदा कर सकते हैं।

प्रश्नोत्तर

लोकप्रिय हिन्दी विज्ञान लेखन पर जब भी गंभीर चिंतन की आवश्यकता होगी, डॉ० शिव गोपाल मिश्र की उपरोक्त उल्लिखित पुस्तक संदर्भ के रूप में सर्वथा उपयोग होगी। उन्होंने इसमें कुछ अहम विचारणीय मुद्दे उठाए हैं। विज्ञान लिखने के लिए लिखा जाए या पढ़ने के लिए, धनार्जन, यश अर्जन के लिए या पारिश्रमिक की आशा किए बगैर, विषय विशेषज्ञ लिखें या सामान्य विज्ञान लेखक, देश की भाषा में ही लेखन क्यों करें, विज्ञान लेखन को आजीविका का साधन क्यों न बनाएँ आदि प्रश्न। इन प्रश्नों पर विविध संबंधित संदर्भों में ही विचार करना उचित होगा। संभवतः इनका सामान्यीकरण सही न हो। प्रस्तुत विषय के संदर्भ में इन प्रश्नों के उत्तर विचारणीय होंगे।

उपभोक्ता संरक्षण हेतु गैर सरकारी संगठनों के माध्यम से अनुभव एवं दक्षताप्राप्त विषय विशेषज्ञ कार्यरत हैं जो उपभोक्ता कल्याण के उद्देश्य से प्रेरित हैं। वे अपने विषयों पर तो लेखन करते ही हैं, बहुविषयक उपभोक्ता मुद्दों के अध्ययन, लेखन में भी अपने को योग्य पाते हैं। इसमें धनार्जन का उद्देश्य नहीं होता है, यश अर्जन भले ही होता हो। ऐसे सक्रियक विशेषज्ञ एक अभिमान से जुड़े हैं और यही कारण उनका प्रेरणास्रोत है। उनका लेखन लिखने मात्र के लिए नहीं, पढ़ने और व्यावहारिक उपयोग के ध्येय से किया जाता है। उनके द्वारा रचित साहित्य के आधार पर बहुधा आम पत्रकार ज्यादा लिख पाते हैं जो स्वाभाविक है। हाँ, यह बिल्कुल सही है कि उपभोक्ता विज्ञान पर जन शिक्षा अंग्रेजी में नहीं बल्कि जन भाषा में ही संभव है।

कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि उपभोक्ता संरक्षण हेतु सिर्फ विषय विशेषज्ञ ही लिखें, ऐसे लेखक जो विज्ञान के व्यापक आधार से भिज्ञ हैं, वे भी खोज अध्ययन के आधार पर उपयुक्त विज्ञान साहित्य रच सकते हैं।

डॉ० शिवगोपाल मिश्र के अनुसार "आज स्थिति यह है कि आम जीवन से जुड़े विषयों के वैज्ञानिक पहलुओं पर न के बराबर साहित्य सृजन हो रहा है जबकि कुछ सामान्य विषयों पर सृजन की बाढ़ सी आई है। इस प्रकार साहित्य में एक असंतुलन सा बना हुआ है। इस असंतुलन को दूर करने व साहित्य में विज्ञान को उचित स्थान देने के लिए सुनियोजित प्रयासों की आवश्यकता है।"

उपरोक्त दूरदर्शी कथन से इस बात को बल मिलता है कि इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखकों के सामने यह एक चुनौती भरा एवं असीम संभावना से युक्त अवसर है जब उपभोक्ता संरक्षण विज्ञान साहित्य को गाँव, कस्बा, शहर और महानगर यानी देश के कोने-कोने में सभी उपभोक्ताओं तक पहुँचाया जाए। यानी विज्ञान वस्तुतः उपभोक्ता संरक्षण की कुंजी बन सकता है तथा राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर सतत् विकास में उत्प्रेरक साबित हो सकता है।

विज्ञान लेखक एवं उपभोक्ता संरक्षण सक्रियक
पूर्व संपादक 'क्षितिज'
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, मुम्बई

इक्कीसवीं सदी में कृषि विज्ञान लेखन की समस्या एवं समाधान

डॉ० उमाशंकर मिश्र

कागज के आविष्कार के साथ ही साथ श्रुतियाँ लेखन का रूप ले लीं, मौखिक संदेश लिपिबद्ध होते गए, समय बदला, युग बदले भौतिक संसाधनों के प्रयोग बढ़े, आज के समाज में बहुयामी सूचनातन्त्रों के प्रयोग जैसे- आकाशवाणी, दूरदर्शन, सिनेमा, टेलीफोन, कम्प्यूटर, इन्टरनेट, ई-मेल के अधिकाधिक उपयोगोपरान्त लेखन जैसी प्राचीन एवं सशक्त विधा भी कमजोर होती गई।

कृषि हमारी अर्थ व्यवस्था का मुख्य आधार है। सकल घरेलू उत्पाद में इस क्षेत्र का योगदान 32 प्रतिशत है तथा हमारे देश की 70 प्रतिशत आबादी कृषि के काम में लगी हुई है। सन् 60 के दशक के पूर्व खाद्यान्न में भारत बहुत ही पिछड़ा हुआ था। सन् 1942-43 में बंगाल का भीषण अकाल जिसमें लगभग 30 लाख लोगों की जानें गईं, उसी अकाल को ध्यान में रख कर सन् 1946 में गाँधी जी ने कहा था, "भूखे आदमी के लिए रोटी ही भगवान है।" इन्हीं सब बातों के कारण सन् 1948 के आरम्भ में देश के प्रथम प्रधानमंत्री स्व० पं० जवाहरलाल नेहरू को कहना पड़ा, "दूसरी सारी चीजें इंतजार कर सकती हैं, कृषि नहीं।"

मगर सन् 1966-67 में स्थिति बदली। श्रीमती इंदिरा गाँधी जैसे शासकों के सहयोग से डॉ० एम०एस० स्वामीनाथन एवं डॉ० बी०पी० पाल जैसे योग्य कृषि वैज्ञानिकों के प्रयास से 'हरित क्रान्ति' ने राष्ट्र को खाद्यान्न में काफी सशक्त बनाया, इससे वर्ष 1950-51 के 51 मिलियन टन खाद्यान्न की तुलना में सन् 1998-99 में 202.54 मिलियन टन का रिकार्ड उत्पादन हुआ। सम्प्रति हमारे पास खाद्यान्न का पर्याप्त सुरक्षित भण्डार है।

तिलहन के क्षेत्र में भी जो मूल रूप से वर्षा पर निर्भर है, 'पीली क्रान्ति' के माध्यम से उनके उत्पादन को पाँच गुना (22 मिलियन टन) की सफलता प्राप्त की गई है, 'श्वेत क्रान्ति' के माध्यम से दूध के उत्पादन में विश्व में हमारा स्थान दूसरा है। 'लाल क्रान्ति' के माध्यम से फलों के उत्पादन में विश्व में हमारा दूसरा स्थान है। इसके अतिरिक्त हम सब्जियों, गन्ना, आलू, चाय, कॉफी, पटसन एवं फसलों के सबसे बड़े उत्पादक हैं। खाद्य समस्या के टिकाऊ हल के लिए वैकल्पिक खाद्य स्रोतों की भी तलाश जारी है, जिसके अन्तर्गत 'नीली क्रान्ति' के माध्यम से मत्स्य उत्पादन में हम विश्व में चीन के बाद दूसरे स्थान पर हैं।

21वीं सदी में बढ़ती हुई आबादी के अनुपात में कृषियोग्य भूमियों की कमी एवं उत्पादन के प्रमुख साधन मिट्टी एवं जल प्रदूषित हो रहे हैं, ऐसी स्थिति में क्या देश की बढ़ती आबादी को दो वक्त की रोटी मुहैया करा सकते हैं ? यदि सोचिए तो बहुत अहम मुद्दा है जिसके समाधान का उत्तरदायित्व वातानुकूलित प्रयोगशालाओं में कार्य कर रहे कृषि वैज्ञानिकों तथा दूसरे वे, 70 प्रतिशत कृषक समाज जो खुले आसमान में खेतों को अपना प्रयोगशाला बनाकर कार्य करते हैं, ये दोनों ही नदी के छोर हैं, जिसमें कृषि लेखन एक पुल का कार्य करते हुए कृषि के विभिन्न पहलुओं की

नवीनतम शोध तकनीकों को प्रयोगशालाओं से किसानों के खेतों तक ले जाकर के उन्हें खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाया जा सकता है।

कृषि लेखन का कार्य क्षेत्र

कृषि लेखन का कार्यक्षेत्र कृषि की प्रकृति और उसके कार्यक्षेत्र के अनुसार मुख्य रूप से निम्नलिखित चार समूहों के अन्तर्गत श्रेणीबद्ध किया गया है–

समूह 1.

(क) मिट्‌टी, पानी आदि के बारे में जानकारी प्रदान करना- जिसके अन्तर्गत मिट्‌टी के प्रकार, मिट्टी में पोषक तत्वों की मात्रा, मिट्‌टी के अनुरूप फसलों का चयन। आज भी 60-70 प्रतिशत क्षेत्र वर्षा-आधारित एवं असिंचित है। देश के कुल भूमि का 57 फीसदी किसी न किसी समस्या जैसे भूक्षरण, ऊसर, बंजर, खादर, जलप्लावन, बीहड़, नालों, रेगिस्तान की समस्याओं से घिरा हुआ है। इन क्षेत्रों में उत्पादन कैसे बढ़ाया जाए आदि।

(ख) नई उन्नतशील किस्मों की जानकारी प्रदान करना।

(ग) मौसम के अनुरूप फसलों का चयन, बोने की विधि, बोने का समय एवं अन्य जानकारी प्रदान करना।

(घ) कृषि उद्यमिता एवं ताजा सुझावों की जानकारी प्रदान करना- इसके अन्तर्गत मुख्य पहलुओं जैसे पशु पालन, मछली पालन, सुअर पालन, मुर्गी पालन, मधुमक्खी पालन, केंचुआ पालन, रेशम पालन, मशरूम उत्पादन, फल-फूल एवं सब्जियों के नर्सरी प्रबन्धन, औषधि उत्पादन, जल संभर प्रबन्धन, वृक्षारोपण एवं वानिकी प्रबन्धन आदि आते हैं।

समूह 2.

ऋण उपलब्धता : इसके अन्तर्गत ऋण की उपलब्धता की जानकारी, कृषि कामों के लिए सुझाए गए साधनों की उपलब्धता के विषय में समय जानकारी देना चाहिए।

समूह 3.

(क) खरपतवारों की रोकथाम कैसे एवं क्यों ? इसलिए कि हमारे देश में खरपतवारों से फसलें 33 प्रतिशत नष्ट हो जाती हैं।

(ख) फसलों के कीटों की पहचान एवं रोकथाम कैसे एवं क्यों ? इसलिए कि हमारे देश में कीटों के द्वारा फसलें 20 प्रतिशत नष्ट हो जाती हैं।

(ग) पादप रोगों की पहचान एवं रोकथाम कैसे एवं क्यों ? इसलिए कि पादप रोगों के कारण हमारे देश की फसलें 26 प्रतिशत नष्ट हो जाती हैं।

समूह 4.

(क) कृषि बाजार एवं कृषि फसलों के मूल्यों के उतार चढ़ाव आदि के विषय में पूरी जानकारी बिना विलम्ब के प्रदान करना।

(ख) कृषि विज्ञापन।

(ग) सफल किसान एवं किसानों की सफलता की कथाओं के विषय में जानकारी प्रदान करना।

(घ) कृषि संघ एवं कृषि सेवा केन्द्रों की गतिविधियों के विषय में जानकारी प्रदान करना- इसके अंतर्गत भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली एवं इससे जुड़े हुए वर्तमान में 49 अनुसंधान संस्थान, 30 राष्ट्रीय अनुसंधान केन्द्र, 10 परियोजना निदेशालय, 28 राज्य कृषि विश्वविद्यालय तथा एक केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय और अनेक अखिल भारतीय परियोजनाएँ कार्य कर रही हैं, तथा

भारतवर्ष के प्रत्येक जिले में किसानों की सेवा हेतु कृषि विज्ञान केन्द्र कार्य कर रहे हैं, जिनमें 24,000 से अधिक कृषि वैज्ञानिक एवं शिक्षक संलग्न हैं। इनके द्वारा समय समय पर विभिन्न क्षेत्रों में होने वाले शोध एवं नवीनतम तकनीकों के विषय में जानकारी प्रदान करना।

नई कृषि तकनीक का विकास अब हमारे देश की प्रमुख समस्या नहीं है। हमारे यहाँ लाखों प्रखर एवं उद्यमशील वैज्ञानिक हैं, जो भारतीय स्थितियों के अनुकूल उपायों को विकसित करने में सक्षम हैं परन्तु सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह है कि इन उपायों को पूर्णतः एवं सफल प्रभाव के लिए किसानों तक पहुँचाना।

प्राचीन कृषि साहित्य के माध्यम से प्रचार-प्रसार

सुसंगठित, सुव्यवस्थित, क्रमबद्ध वैज्ञानिक लेखन की बात यदि होती है, तो वेद ही ऐसे शाश्वत ग्रन्थ हैं, जिसमें लेखन, वस्तुविषय की व्यापकता, वैज्ञानिक सोचों को समाहित किया गया है, और विज्ञान विकास के सर्वोत्कृष्ट आधार वेद हैं। भारत एक बहुसांस्कृतिक बहुभाषा वाला देश है। कृषि एवं ऋषि इस देश की पहचान हैं। कृषि के क्षेत्रों के विकास में हमारे देश के ऋषि एवं मुनियों का बहुत योगदान रहा। कश्यप मुनि की कृषि सूक्ति तथा महर्षि पराशर का कृषि साहित्य आज भी प्रचलित है। अगर प्राचीन कृषि वैज्ञानिक, लेखकों पर दृष्टि डालें, तो घाघ एवं भड्डरी की कहावतों ने उनके चिन्तन पर आधारित बहुत सहज ढंग से लोक भाषा में प्रस्तुत किया और यही कारण है, कि इन महापुरुषों द्वारा रचित कहावतें, लेख एवं कविताएँ आज भी किसानों के बीच प्रचलित हैं। इन्हें अपनी लेखन शैली में समुचित स्थान देकर और अधिक रोचक बनाया जा सकता है।

सरल साहित्य एवं सुझाव

हिन्दी में कृषि विज्ञान का लेखन का प्रारम्भ तो 19वीं सदी में ही हो गया था परन्तु इसके विकास की गति अपेक्षाकृत मन्द रही। इसकी वास्तविक गति 1960 के दशक के प्रारम्भ से हुई जो वर्तमान में अपने पूर्ण स्वरूप को प्राप्त हो चुकी है। वर्तमान में हिन्दी के माध्यम से लगभग 100 के आसपास कृषि पत्र एवं पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है, जिसमें मुख्य पत्रिकाएँ उन्नत कृषि, खेती, खाद पत्रिका, कृषि एवं पशु पालन, फल-फूल एवं कृषि चयनिका में नवीन कृषि तकनीकों एवं शोध कार्यो की पूर्ण जानकारी सरल एवं सबल शब्दों के द्वारा दी जाती है। उपरोक्त पत्रिकाओं में जिन महत्वपूर्ण लेखकों की लेखनी ने सहयोग दिया है वे जहाँ एक ओर शोध के क्षेत्र में महारत हासिल हैं वहीं दूसरी ओर आम भाषा में किसानों को तकनीकें समझाने में भी सफल हैं। डॉ० महेन्द्र सिंह रंधावा, डॉ० एम०एस०स्वामीनाथन, डॉ० बी०पी० पाल, डॉ० शिवगोपाल मिश्र, डॉ० रमेशदत्त शर्मा, डॉ० ए०बी० जोशी, डॉ० बलराम शर्मा, श्री सुन्दर लाल बहुगुणा जैसे कितने ही लेखक लेखन का कार्य कर रहे हैं। आज भी कृषक बहुत कम पढ़ा लिखा है। अच्छा होगा कि कृषि उपलब्धियों को जन मानस तक पहुँचाने हेतु सरल हिन्दी एवं क्षेत्रीय भाषाओं में वैज्ञानिक लेखन करें ताकि प्रयोगशालाओं में बन्द महत्वपूर्ण शोध किसानों तक पहुँचाया जा सके।

हमारे देश के बहुत से प्रगतिशील किसानों ने कृषि के क्षेत्र में महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं। इन उपलब्धियों को सफल प्रेरक प्रसंगों के माध्यम से किसानों तक उन्हीं के लोक भाषा में पहुँचाया जा सकता है।

आधुनिक भारत की संस्कृति एक विकसित शतदल कमल के समान है, जिसका एक एक दल एक एक प्रान्तीय भाषा और उसकी साहित्य संस्कृति है। किसी एक को मिटा देने से उस कमल की शोभा ही नष्ट हो जाएगी। हम चाहते हैं कि भारत की सभी प्रान्तीय एवं क्षेत्रीय भाषाओं में कृषि लेखन

किया जाए, जिससे अधिक से अधिक लोगों के लिए जनग्राह्य बन सके। एक बात स्पष्ट हो चुकी है कि कृषि वैज्ञानिक लेखों से हम तकनीकी अन्तर हटा सकते हैं। साथ ही साथ यह देखा जा रहा है कि अब किसी व्यक्ति के पास पढ़ने की फुर्सत नहीं है इसलिए विषयवस्तु को बहुत ही कम शब्दों में प्रस्तुत किया जाए, साथ विषय वस्तु आधारित चित्रों एवं फोटोग्राफी का प्रयोग करें, क्योंकि इनके माध्यम से लेखों को समझने में आसानी होती है, और लेख की विषयवस्तु पाठकों के मस्तिष्क में काफी दिनों तक अंकित रहती है। प्रायोगिक रूप में जब हम विषय वस्तु को अपनाते हैं, तो काफी सहजता रहती है और लेख टिकाऊ होते हैं।

बहुधा यह पाया जाता है कि कृषि लेखन में लेखक अपनी विद्वता के अनुरूप कठिन शब्दों का प्रयोग कर बैठते हैं जिससे पाठकों एवं उपयोगकर्ताओं को लेख समझने में काफी परेशानी उठानी पड़ती है इसलिए सरल, सामान्य कृषि शब्दों द्वारा संक्षिप्त वाक्यों के माध्यम से लेख को आगे बढ़ाना चाहिए जो कि जनग्राह्य हो सके।

समसामयिक समस्याओं पर यदि लेखन किया जाता है तो पाठकों में रुचि उत्पन्न होती है, और गुणवत्ता में बढ़ोत्तरी भी होती है।

कृषि साहित्य लेखन में संवाद, कहानी, कविता, चित्रकथा, भेंटवार्ता, व्यंग्य, पहेली और मुकरी, आत्मकथा, समीक्षा, रेखाचित्र, संस्मरण, जीवनचरित्र, निबंध, सार, समाचार, रिपोर्ट, फीचर आदि विधाओं का चयन किया जाना चाहिए।

वाक्य संक्षिप्त तथा छोटे हों किन्तु सरल, स्पष्ट और प्रभावपूर्ण हों।

एक वाक्य में एक ही सूचना निहित होनी चाहिए।

गंभीर से गंभीर विषयों को सरल भाषा में प्रस्तुत करना ताकि वे आसानी से समझे एवं समझाए जा सकें।

विज्ञान परिषद् से पिछले एक दशक से जुड़े होने के नाते मुझे थोड़ा बहुत कृषि विज्ञान कथाओं को लिखने एवं पढ़ने का अवसर प्राप्त होता रहा है एवं अपनी पारिवारिक पृष्ठभूमि भी कृषि व्यवसाय से जुड़े होने के कारण हिन्दी माध्यम में कृषि विज्ञान के प्रचार एवं प्रसार का समर्थक हूँ। मेरा अपना मत है कि कृषि के क्षेत्र में जो भी शोधकार्य एवं नवीन तकनीकियों की खोज हो रही है उन्हें लोकभाषा के सशक्त माध्यमों द्वारा जनमानस तक सरलता से पहुँचाया जा सकता है।

प्रवक्ता, कृषि संकाय
म०गाँ०चि०ग्रा०वि०, चित्रकूट
सतना (मध्य प्रदेश)

बाल विज्ञान लेखन : चुनौतियाँ ही चुनौतियाँ

डॉ० पृथ्वी नाथ पाण्डेय

वस्तुतः बाल साहित्य के नाम पर जो भी लिखा जा रहा है, उसमें से अधिकांश बाल साहित्य के भविष्य को आश्वस्त नहीं करते। 'इलेक्ट्रानिक मीडिया' तो अपने प्रारम्भ से ही बाल साहित्य को भ्रामक दिशा दे रही है, किन्तु 'प्रिण्ट मीडिया' भी अपनी गुणवत्ता का ह्रास करने लगी है। बाल साहित्य में बाल मनोविज्ञान का निर्वाह किस रूप में, कहाँ तक किया गया है, कदाचित इसे जानने समझने के लिए किसी के पास अवकाश नहीं। यही कारण है कि बाल साहित्य के रूप में जो भी परोसा जा रहा है, उनमें से अधिकांश अपना मानक खो चुके हैं, उनमें न तो तत्व है, न सत्व है। लगता है, बेमानी तौर पर बटोरे गए हैं।

वर्तमान युग के बाल किशोरों की आवश्यकता मात्र परम्परागत साहित्य से पूरी नहीं होती। आज का बच्चा आँखें खोलते ही विज्ञान के चमत्कारों के सम्पर्क में आ जाता है। ज्ञान विज्ञान की उसकी भूख, कहानी की भूख से कम नहीं होती। वह वैज्ञानिक परिस्थितियों में जीता है। उनसे अवगत होना और उनके साथ सामंजस्य स्थापित कर पाना, उसकी सबसे बड़ी समस्या है। इसके लिए अत्यधिक संख्या में ज्ञान विज्ञान की विविध पुस्तकों की आवश्यकता होती है। क्या इस उद्देश्य की पूर्ति सच्चे अर्थों में हो रही है ?

बच्चे को अनुभव का नया क्षितिज देना और बच्चे को अपने अनुभवों को उसके लिए व्याख्यायित करना, नदी, झील, पर्वत, मरुस्थल, जंगल, सागर तल, अन्तरिक्ष, प्रयोगशालाओं की कहानियों तथा विवरणात्मक पुस्तकें, बच्चों के अनुभव जगत को विस्तार देने में सहायक सिद्ध होती हैं, किन्तु बच्चे के लिए ऐसी पुस्तकों की भी ज़रूरत होती है, जिनमें वह अपने आपको सुपरिचित पाए, अपनी नित्यप्रति की समस्याओं को ही संगत परिवेश, परिस्थिति, परिप्रेक्ष्य में देख सके और उन पर नियन्त्रण पाकर कला ज्ञान अर्जित कर सके। इस प्रकार का यथार्थ साहित्य हमारे यहाँ बहुत कम लिखा गया है। इसके लिए शिल्प विशेष और कौशलगत संस्कार का होना अनिवार्य है तथा समुचित तथ्यों की बालसुलभ जानकारी भी। इसे अध्ययन और अभ्यास के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। हम यदि बच्चे के प्रति स्वस्थ दृष्टि नहीं अपनाएंगे तो हमारा लेखन अन्यथागामी हो जाएगा। अपनी दृष्टि को विस्तार देता हूँ तो बहुत कम बाल साहित्यकार इस कसौटी पर खरे उतरते हैं। सच तो यह है कि हमारे देश के अधिकांश लेखक बच्चों के लिए इसलिए लिखने लगे हैं, क्योंकि उनके लिए सम्भावनाओं के सारे दरवाज़े बन्द हो चुके हैं। तमाम पत्र-पत्रिकाओं के साहित्य सम्पादकों की चाटुकारिता करके कुछ न हासिल हुआ तो बाल लेखन करने लगे। उनके लेखन में एक बाल मनोविज्ञानी की दृष्टि न होकर, शातिर मक्कार की दृष्टि है। वे कितने घृणित हैं और हेय हैं, वर्णनातीत है। निष्ठा, लगन और उद्देश्य विशेष काल संधान कर बच्चों के लिए लिखने वाले साहित्यकार गिने चुने हैं, पर उन्होंने जितना लिखा है, उससे बाल साहित्य समृद्ध और सम्पन्न है, किसी प्रकार की प्रश्नात्मक दृष्टि नहीं उठती। जिन विसंगतियों का मैंने जिक्र किया है, यदि उनके परे होकर बाल साहित्यकार की मात्रा, संख्या और गुणवत्ता की दृष्टि से देखें तो उसमें कहीं कोई आश्चर्य नहीं है।

वहीं तथाकथित अभिजात्य साहित्य के ठेकेदार, कतिपय पण्डित, पण्डे और मौलवी तथा कुछ स्वनामधारी पीठासीन अधिकारी बाल साहित्य को 'साहित्य' की श्रेणी में बचकाना ही मानते हैं। उनके विचार और हिसाब से बाल साहित्य अब भी तुतला रहा है। यानी सृजन के एक-दो सोपान ही बढ़ा है, वह भी उठते गिरते। उनकी मान्यता और बोध उनके अपने साहित्य सृजन तक ही सीमित है। वहीं कुछ बालसाहित्यकार ऐसे हैं जो मानते हैं, और मनवाने में लगे हैं कि उन्होंने जो कुछ भी लिखा है, बाल साहित्य भला उससे आगे कैसे बढ़ सकता है। ऐसे 'पेशेवर कलमधारी' बाल साहित्य की मर्यादा के साथ बल प्रयोग करने से किंचित नहीं हिचकिचाते। नई पीढ़ी के कई युवा बाल रचनाकार भी इसके अपवाद नहीं हैं। अध्ययन परिशीलन से जी चुराने वाले ये बाल लेखक तथाकथित महन्तों के 'पिछलग्गू' बने अपने शरीर को ढो रहे हैं।

इन कठिनाइयों के मूल में कई विसंगतियाँ हैं। इसके लिए सर्वाधिक दोषी व्यापारी वर्ग है। सरकारी अधिकारी को 'रिश्वतखोर' बनाने के लिए प्रकाशक ही पहल करता है। यही पहल आगे चलकर उसके लिए सिरदर्द बन जाता है। वहीं प्रकाशकों का एक वह वर्ग है, जो ईमानदारी के साथ अपना व्यवसाय करना चाहता है, उसे 'लोहे के चने' चबाने पड़ते हैं। 'आपरेशन ब्लैक बोर्ड', 'वर्ल्ड बैंक परियोजना', 'प्रौढ़ शिक्षा खरीददारी योजना', 'पंचायत खरीददारी योजना', 'अनुपूरक योजना', 'जिला खरीददारी योजना', 'राजा राममोहन लायब्रेरी योजना', 'आदिवासी परियोजना', इत्यादि कई अन्य परियोजनाओं के अन्तर्गत बाल पुस्तकों की खरीददारी की जाती है किन्तु वहाँ तथाकथित प्रकाशक वर्ग ने ऐसी व्यवस्था बना दी है कि बिना अवैध रूप में धनराशि दिए बाल पुस्तकों की खरीददारी सम्भव ही नहीं है। अधिकारियों, मन्त्रियों, सन्तरियों को दी जाने वाली अवैध धनराशि का भुगतान अग्रिम रूप में किया जाता है। इस प्रकार प्रकाशक का 50 से 70 प्रतिशत तक का धन उचित अनुचित अदायगी में चला जाता है। फिर वह भी मजबूर हो जाता है और पुस्तक का मूल्य अपने लाभांश को देखते हुए निर्धारण करता है। उदाहरण के लिए 16 और 24 पृष्ठों वाली पुस्तकों का मूल्य 15 से 35 रुपये तक रखता है। मेरी एक पुस्तक है मात्र 48 पृष्ठों की और प्रकाशक ने उसका मूल्य 70 रुपये मात्र रखे हैं। मेरे प्रश्न करने पर उस प्रकाशक ने बताया कि कितनी कोई रिश्वत लेगा, ले जितना लेना हो। इस प्रकार रिश्वत के बाजार में सर्वाधिक बोली लगाने वालों की एक वरीयताक्रम सूची तैयार की जाती है और प्राथमिकता के आधार पर रिश्वत लेकर आने का स्थान और तिथि समय का निर्धारण होता है।

प्रकाशकों की पुस्तकों की खरीददारी हो जाए, इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए प्रकाशक तथाकथित बाल साहित्यकारों से पुस्तकें तैयार कर, खरीददारी करने वाले और खरीददारी में सहयोग करने वाले अधिकारियों कर्मचारियों के नामों से उनके बीवी बच्चों के नामों से उन पुस्तकों को छाप देते हैं और तथाकथित बाल साहित्यकारों के हाथ में अधिक से अधिक 500 रुपये के चेक थमा देते हैं। यही नहीं, ऐसे लेखक सहर्ष लिखने के लिए तैयार हो जाते हैं अपने अनुबन्धपत्र में, "मैं यह पुस्तक अमुक प्रकाशक के हाथों बेच रहा हूँ। इसे प्रकाशक किसी भी रूप में छापने के लिए स्वतन्त्र है। वह इस पुस्तक को किसी भी रूप में छाप सकता है। अब मेरा इस पुस्तक से कोई लेना-देना नहीं है।"

कितनी और कैसी विडम्बना है, हम बाल साहित्यकारों के साथ !

उन प्रकाशकों की बालपुस्तकों की खरीददारी तो हो जाती है, किन्तु जिनके लिए पुस्तकों की खरीददारी की जाती है, उन बच्चों तक पुस्तक नहीं पहुँचती और सम्बद्ध कार्यालयों में पुस्तकों के बण्डल पड़े-पड़े दीमक और चूहे के शिकार हो जाते हैं। पुस्तकों की खरीददारी तो हो जाती है, किन्तु अवैध तरीके से भी कराई गई खरीद का भुगतान होने में वर्षों लग जाते हैं।

पहले पुस्तक क्रय करने की एक प्रक्रिया बनती थी- विचारार्थ पुस्तकें मंगवाई जाती थीं, उनकी सुयोग्य व्यक्तियों से समीक्षा करवाई जाती थी, प्रकाशक निर्धारित मानदण्डों पर खरा उतरता है या नहीं, इसका परीक्षण कर लिया जाता था; फिर गुण दोष के आधार पर वरीयता क्रम में उत्कृष्ट पुस्तकों का क्रय कर लिया जाता था और 4-6 माह के भीतर उनका कुल भुगतान कर दिया जाता था।

प्रकाशकों का एक बदनाम वर्ग है, जिससे सभ्य किस्म का प्रकाशक वर्ग परेशान रहता है। वह बदनाम वर्ग तो अपनी 'चतुर व्यापार बुद्धि' का परिचय देता है किन्तु लेखक का 'प्रबुद्ध मस्तिष्क' उसे 'शोषण' के रूप में ग्रहण करता है। प्रायः प्रत्येक प्रकाशक लेखक को निरीह समझता है। चित्रकार, कागज़ विक्रेता, कम्पोजिटर, मुद्रक, बाइण्डर, रिक्शा ठेलेवाला सभी का भुगतान कर देता है, किन्तु लेखक को पूरी तरह आँखें खोलकर ठेंगा दिखाता रहता है। पुस्तकें यदि रायल्टी पर हैं तो कहाँ-कहाँ बिकीं, इसकी ईमानदार जानकारी सिर्फ प्रबुद्ध प्रकाशक को रहती है। ऐसे में प्रकाशक लेखक के समक्ष अपने आपको एक 'कृपालु' के रूप में पेश करता है।

अब प्रश्न उठता है इसके लिए जिम्मेदार कौन है ? इसका उत्तर भी सुस्पष्ट है। इसके लिए लेखकों के तीन वर्ग पूरी तरह से जिम्मेदार हैं। एक वह वर्ग, जिसने अपने आपको दीन-हीन और ज़रूरतमन्द के रूप में प्रकाशक के सामने प्रस्तुत किया है। दूसरा वह वर्ग, जो प्रकाशक के एक हाथ में रुपयों की गड्डी और दूसरे हाथ में पाण्डुलिपियाँ दे जाता है। तीसरा वह वर्ग है, जो राजकीय-अराजकीय कर्मचारी है, विशेष रूप से शिक्षक वर्ग, जिसे पारिश्रमिक अथवा रायल्टी से कुछ लेना देना नहीं है। वह वर्ग चाहता है कि किसी तरह से उसकी पुस्तकें छपती रहें और वह लटके-झटके दिखाकर वाहवाही लूटता फिरे और चक्कर मारकर, चापलूसी और अपने शिक्षक पद का दुरुपयोग कर पुरस्कार झटकता रहे। यहाँ भी प्रायः पुस्तकों का स्तर 'दोयम दर्जे' का होता है।

इसमें किसी प्रकार का कोई शक नहीं कि लेखक का सर्वाधिक दोहन प्रकाशक करता है। वहीं यह पूरा सच है कि भारत सरकार बाल साहित्याकारों के लिए कुछ नहीं करती। कितने बाल साहित्यकारों को 'ज्ञानपीठ' पुरस्कार दिया गया है, कितने बाल साहित्यकारों को 'बिड़ला फाउण्डेशन' का पुरस्कार दिया गया है या फिर बाल साहित्य के क्षेत्र में काम करने वाले कितने लेखकों को 'फेलोशिप' दी गई है ? यह पक्ष विचारणीय है। हाँ, देश स्तर पर बाल साहित्यकारों के लिए नहीं के बराबर मान सम्मान की व्यवस्था है। चूँकि फिलहाल मैं उत्तर प्रदेश से सम्बद्ध हूँ, इसलिए इस राज्य में उत्तर प्रदेश सरकार तथा इस सरकार द्वारा आर्थिक सहायताप्राप्त संस्थानों की चर्चा करना चाहूँगा। किसी भी स्तर पर साहित्य को प्रोत्साहन देने के सन्दर्भ में भारत का सर्वाधिक 'दरिद्र' और 'अधम' राज्य है उत्तरप्रदेश। जहाँ तक मैंने समझा है, उत्तर प्रदेश शासन द्वारा बाल साहित्यकारों को प्रोत्साहन देने के लिए भी एक मान सम्मान अथवा पुरस्कार देने की व्यवस्था नहीं है। यह बात और है कि यदि कभी कोई सिफारिशी कागज़ घूम गया तो किसी को कुछ मिल गया जो निहित स्वार्थ से परिपूर्ण होगा।

सूर अन्धे थे, किन्तु उनका अन्तर्मन अन्धा नहीं था। तभी तो वे कृष्ण के 'अनन्य' हो गए। परन्तु सूर के नाम पर बाल साहित्य का पुरस्कार बाँटने वाले उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ के अधिकारी तो अन्धे नहीं हैं। किन्तु उनका अन्तर्मन अन्धा है। सूर पुरस्कार चाटुकार चट कर गए और वास्तविक बाल साहित्यकार मन मारकर बैठ गए। इलाहाबाद, कानपुर, बलिया, खण्डवा, उन्नाव, रायबरेली इत्यादि स्थानों पर पुरस्कार देने वाली परचून की दुकानें खुल चुकी हैं। सबका खुला नियम है, तू मेरे यहाँ से सौदा ले जाएगा तो मैं तेरे यहाँ से ले जाऊँगा। पुरस्कार की राजनीति करने वाली ये निहायत गर्हित संस्थाएँ शब्दों में प्रेषित परिपत्र में बोलती हैं। पुरस्कार पाने वाले को अपने खर्च

पर पुरस्कार पाने के लिए अमुक स्थान पर आना होगा। यही नहीं, मेरे पास ' महाराष्ट्र दलित एकेडमी', नागपुर और 'जेमिनी एकेडमी', पानीपत से दो परिपत्र प्रेषित किए गए हैं, जिनमें मुझे पुरस्कृत करने के लिए प्रकारान्तर से रिश्वत की माँग की जाती है। कितना बड़ा अपमान कर रहे हैं ये बेहद घटिया, बाजारू, कमज़र्फ़, निकम्मे, धन्धेबाज़ संस्थाओं के स्वयंभू यह हम साहित्यकारों के अस्तित्व अस्मिता पर सीधा हमला है। आप आश्चर्य कर सकते हैं, कि इसके बावजूद तथाकथित बाल साहित्यकार पुरस्कार की भिक्षा लेने चले जाते हैं। यही नहीं, स्वयं रुपयों का प्रलोभन देकर अनेक संस्थाओं से बाल साहित्यकार पुरस्कार लेकर चले आते हैं, किन्तु उनके अन्तर्मन में हर पल अंधेरा रहता है, वे अन्तर्द्वन्द से ग्रस्त रहते हैं। ऐसे अपाहिज बाल साहित्यकारों के लिए दो पंक्तियाँ सुनाना चाहूँगा, लेकिन यह भी बता दूँ कि जिस बाल साहित्यकार की ये पंक्तियाँ हैं, वह उन अधम बालसाहित्यकारों का सरगना है। हाँ, तो वे पंक्तियाँ हैं,

असली दाँत गिर गए कब के नकली हैं मज़बूत,
इनके बल पे मुस्काती है, क्या अच्छी करतूत।

स्वयं तो जीवित हैं, किन्तु अपने नाम पर पुरस्कार बाँटने की राजनीति करने वाले भी बालसाहित्यकार हैं।

मित्रों ! अब भी नहीं चेतोगे तो कब चेतोगे ? क्यों इन महन्तों के पीछे घूम रहे हो, अपने आत्मविश्वास का परिचय दो। कहीं तो 'अनेकता में एकता' का व्यावहारिक रस घोलो। आत्मविश्वास और आत्मज्ञान का विस्तार करो, अपना उदाहरण स्वयं बनो। फिर ये सब तुम्हारे पिछलग्गू हार जाएँगे।

समय-सापेक्ष माँग है कि हम बच्चों को ईमानदान और ठोस अनुभव दें, बच्चों को रूढ़िवादिता से दूर रख, आधुनिक औद्योगिकी प्रौद्योगिकी वातावरण के अनुरूप ही साहित्य दें। विज्ञान, अन्तरिक्ष, वायुमण्डल, उपग्रह, इलेक्ट्रानिक्स, पर्यावरण इत्यादि की जानकारी बच्चों के लिए महत्वपूर्ण है। जो भी साहित्य दिया जाए अथवा उन बच्चों को उपलब्ध कराया जाए, उसमें सामग्री उम्र और मानसिक स्तर के अनुभव के अनुरूप ही होनी चाहिए। इसके साथ ही पौराणिक गाथाएँ, लोक कथाएँ, दन्त कथाएँ, परी कथाएँ भी अपना महत्व रखती हैं। इनके द्वारा बच्चों की कल्पना शक्ति को विस्तार मिलता है जो बच्चों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करती है।

110/2, नई बस्ती, अलोपीबाग
इलाहाबाद-211005

वैज्ञानिक क्रांतियों का विज्ञान लेखन पर प्रभाव

डॉ० विष्णु दत्त शर्मा

यह सर्वमान्य तथ्य है कि आवश्यकता आविष्कारों की जननी है। आदि काल से पाषाण युग, लौह युग तथा मशीनी युग में जैसे जैसे मनुष्य की आवश्यकताएँ बढ़ती गईं, वैसे वैसे नए आविष्कार होते गए। एक समय था जब मानव अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर प्राकृतिक शक्तियों का जिज्ञासावश चिन्तन, मनन तथा दोहन कर रहा था तो इस क्रांति को 'दर्शन क्रांति' का रूप दिया गया।

आधुनिक विज्ञान युग के पूर्व विज्ञान को 'प्राकृतिक दर्शन' की संज्ञा दी गई थी। दार्शनिक प्राकृतिक दर्शन के अन्तर्गत वनस्पतियों, जीव जन्तुओं के गुण-स्वभाव, पदार्थ रचना तथा विभिन्न प्रकार की ऊर्जाओं के सम्बन्ध में विचार-विनिमय करते थे। वास्तव में विज्ञान का उद्‌भव ऐतिहासिक काल के बहुत पहले ही हुआ था और यहीं से श्रीगणेश हुआ वैज्ञानिक क्रांति का। प्राकृतिक शक्तियों (ऊर्जाओं) की खोज में मनुष्य मानव काल के प्रारंभ से ही रहा है और जिन शक्तियों का अनुभव उसने प्रत्यक्ष रूप से किया, यथा वायु, जल प्रपातों का प्रवाह, सौर ताप आदि, उनका उपयोग अपने जीवन में करता रहा।

दार्शनिकों का ध्येय प्रकृति की विशुद्ध जानकारी प्राप्त करना था। सर्वत्र ईश्वर को विद्यमान मानकर उन्हीं को विभिन्न देवी देवताओं के रूप में विभिन्न शक्तियों और उनके उद्‌गम स्थलों के अधिष्ठाता मानते थे। इस दार्शनिक क्रांति में प्राक् ऐतिहासिक काल से लगभग 5000 वर्ष पूर्व वैदिक संहिताओं की रचना की गई जो पूर्णतया विज्ञान लेखन का आदि रूप था।

सृष्टि सृजन के उपरांत सर्वप्रथम आवश्यकता मनुष्य को अग्नि की पड़ी ताकि अंधेरे को प्रकाशमय कर सके और पेट की ज्वाला को गर्म खाने से मिटा सके। इस सम्बन्ध में प्राचीन भारत के अनुसंधानों से विदित होता है कि सहज ताप ऊर्जा का अभिज्ञान अग्नि के रूप में हमारे ऋषि अथर्वण अंगिरस ने किया। उन्हीं के वंशज आंगिरस कहलाए जो यज्ञों में विशुद्ध अग्नि लकड़ी के दो टुकड़ों को रगड़ कर पैदा करते थे। इसकी प्रेरणा उन्हें प्रकृति में बांस की दो लकड़ियों में घर्षण के कारण उत्पन्न अग्नि से मिली। इस दृष्टांत के लिपिबद्ध होने के कारण ही हम यह सिद्धांत जान सके।

दार्शनिक क्रांति के समय वैदिक युग के एक आविष्कर्ता दीर्घतमस् हुए जिन्होंने ज्योतिष विज्ञान की नींव डाली। उन्हें लौद वर्ष (Leap year) का परिज्ञान था। उसी काल में गर्ग ऋषि हुए जिन्होंने आकाश में नक्षत्रों की संस्थिति का निर्धारण किया तथा सौर जगत के ग्रहों की गतिविधि का निरीक्षण किया। शुक्र ग्रह की खोज वेनभार्गव ने की। उन्हीं के नाम पर शुक्र का नाम वीनस पड़ा। सूर्य तथा चन्द्र ग्रहण का पूर्वानुमान करने की विधि हमारे मनीषियों ने ज्ञात की।

ऐतरेय ब्राह्मण (तृतीय, 4, 6) के अनुसार सूर्य न निकलता है और न अस्त होता है बल्कि पृथ्वी की परिक्रमा के कारण ही रात दिन होते हैं। आर्य भट्ट (499 ई०) ने अपने ग्रन्थ 'आर्यसिद्धान्त'

में कहा है :

भवं जरः स्थिरो भूरे वा वृत्या वृत्य।
प्रतिदैवसिकौ उदयास्तमयौ संपादयति ग्रहनक्षत्राणाम्।।

प्राचीन काल में (400-309 ई०पू०) हमारे देश में गणित का विशेष महत्व रहा है। भास्कर प्रथम ने अंकगणित पर 'लीलावती' नामक एक अपूर्व ग्रन्थ की रचना की। आर्य भट्ट ने बीजगणित की नींव डाली। बीजगणित का अर्थ है मूल अक्षरों से सिद्ध होने वाला गणित।

वेदी निर्माण एक महत्वपूर्ण कला है। यज्ञों की वेदियाँ विभिन्न आकार प्रकार की ज्यामिति के अनुरूप बनाई जाती हैं। इनसे विदित है कि रेखागणित का आविष्कार ऋग्वेद युग में ही हो चुका था। रेखागणित का भारतीय नाम 'शुल्व' है। अतः रेखागणित क्रिया को 'शुल्वी क्रिया' कहा गया है। 'शुल्वी क्रिया' के निरूपण के लिए अनेक शुल्व सूत्र हैं जिनका उपयोग कर्मकाण्ड की विभिन्न पद्धतियों में किया जाता है। शुल्व का अर्थ होता है 'रज्जु रस्सी', अर्थात् रज्जु द्वारा नापी गई।

वेदियों की रचना शुल्व सूत्र का प्रतिपाद्य विषय है। एक शुल्व सूत्र के अनुसार वृत्त के व्यास और परिधि का निश्चित सम्बन्ध 22/7 से व्यक्त किया जाता था।

इन्द्रो यद्वद्धज्री घृषमाणो अन्धसा।
भिनद्वलस्य परिधिरिव त्रित।।

ऋग्वेद 1,52,5

शुल्व सूत्रों में वर्णित वेदियों का आकार-प्रकार कोई नई वस्तु न होकर संहिताकालीन परम्परा की एक विशिष्ट श्रृंखला है। इन सूत्रों में अधिकतर बोधायन (800 वर्ष ई०पू०), आपस्तंब (400 वर्ष ई० पू०) तथा कात्यायन द्वारा तैयार किए गए थे। भास्कराचार्य प्रथम (522 ई०) ने जहाँ एक ओर ज्यामिति के क्षेत्र में वर्ग के निर्माण नियम, वृत्त, आयत तथा ऋण संख्याओं को ज्ञात किया वहीं दूसरी ओर अंकगणित (राशि गणित में) 'लॉगरिथिम' का भी वर्णन किया है। इसके अतिरिक्त पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति को भी सिद्ध किया है। बराहमिहिर (505 ई०) न केवल गणितज्ञ थे अपितु ज्योतिष, खगोल ज्योतिष के प्रकाण्ड पंडित थे। इन्होंने 'पंचसिद्धांतिका' नामक ग्रन्थ की रचना की थी। महावीराचार्य लल्ल ने वृत्त, आयत और वर्ग के निर्माण नियम तथा ऋण संख्याओं का ज्ञान प्राप्त किया। इन्होंने 'शिष्य-धि-वृद्धि' (598 ई०) नामक ग्रन्थ की रचना की। वेदांग ज्योतिष के आधार पर कहा जा सकता है कि जिस प्रकार मयूरों के सिर पर ताज (शिखा) और सर्पों के फनों में मणि का महत्व होता है उसी प्रकार वेदांग रूपी विज्ञान में गणित का महत्व है :-

यथा शिखा मयूराणां नागाणां मण्यो यथा।
तद्वद्वेदांग शास्त्राणां गणितं मूर्धनिस्थितम्।।

महर्षि कणाद् ने 'वैशेषिक दर्शन' की रचना छठी शताब्दी ईसा पूर्व की थी। यह वैदिक दर्शन के मुख्य छः सिद्धांतों में प्राचीनतम है। कणाद् ऋषि के अनुसार पदार्थों में क्रिया होना पाया जाता है। उनमें विशेष प्रकार के गुण होते हैं और उनकी रचना किसी कारणवश परमाणुओं के संयोग से होती है। ये परमाणुओं के सापेक्ष अविनाशी होते हैं। पदार्थ नौ भागों में विभाजित किए जा सकते हैं।

पृथिव्यापस्तेजो वायुराकाशं कालो।
दिगात्मा मन इति द्रव्याणि।।

वैशेषिक दर्शनम् 1,1, सूत्र-5

अर्थात् पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, काल (समय), दिशा, जीवात्मा और मन ये द्रव्य हैं।

इनमें दिशा (ईथर), काल तथा आकाश की स्वतंत्रत सत्ता है और शेष वर्गीकृत होते हैं।

शरीर की भीतरी बाहरी दशा का ज्ञान आचार्य लोग नाड़ी की परीक्षा से प्राप्त कर लेते थे। आज भी आयुर्वेदिक चिकित्सा की मान्यता इसी पर निर्भर है। आयुर्वेद के प्रथम प्रवर्तक ब्रह्मा माने गए हैं। उनसे यह विद्या प्रजापति ने, तदनंतर क्रमशः अश्विनी कुमार, इन्द्र, भारद्वाज, धन्वंतरि, कश्यप, वशिष्ठ, अत्रि और भृगु आदि ऋषियों ने ग्रहण की। भारद्वाज काय चिकित्सा के प्रवर्तक हुए। उनके समय का सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ चरक संहिता है। धन्वंतरि शल्य चिकित्सा के प्रवर्तक हुए। शल्यतंत्र का विशद वर्णन एवं प्रसूत तंत्र आदि के सहित शिशु के स्वास्थ्य, भरण पोषण, सुचारु रूप से लालन पालन की व्यवस्था का विवरण दिया गया है। इस प्रकार आवश्यकतानुसार आयुर्वेद के आठ अंग माने गए हैं– शल्य (Surgery), शलाका (ENT), काय चिकित्सा (Medicine), भूत विद्या (Spookology), बाल चिकित्सा (Paediatrics), अगद तंत्र (Toxicology), रसायन तंत्र (Chemotherapy) तथा वाजीकरण (Hypnotism)।

उपर्युक्त दार्शनिक क्रांति के अन्तर्गत अनेक महत्वपूर्ण कालजयी कृतियों की रचना की गई जिनमें विज्ञान लेखन को प्रमुख स्थान दिया गया। यदि यह विज्ञान लेखन न हुआ होता तो आज विश्व में व्यावहारिक विज्ञान विकसित न होता क्योंकि इसका आधार आर्ष साहित्य में मूलभूत विज्ञान ही है। विज्ञान और दर्शन दोनों के बीच एक अटूट सम्बन्ध है। यद्यपि विज्ञान और दर्शन कुछ अर्थों में एक दूसरे से भिन्न और पृथक प्रतीत होते हैं, परन्तु यथार्थ में उनका परस्पर संबंध अंश और पूर्ण का है। आधुनिक काल के अनेक महान विद्वानों ने इस बात पर बल दिया है कि दर्शन और विज्ञान को एक दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता। वास्तविकता यह है कि दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं। जहाँ एक ओर विज्ञान का दृष्टिकोण आंशिक है वहीं दूसरी ओर दर्शन का दृष्टिकोण सार्वभौमिक है। इस प्रकार हमने पाया कि यह एक आश्चर्यजनक बात है कि प्राचीन भारत में वैज्ञानिक उन्नति, प्रकृति, ब्रह्माण्ड, आकाश या प्राकृतिक परिवर्तनों के विषय में जो विचार व्यक्त किए हैं वे पाश्चात्य विद्वानों के गहन और व्यापक यांत्रिक विकास तथा वैज्ञानिक परीक्षणों से उपलब्ध निष्कर्ष से आश्चर्यजनक साम्य रखते हैं। अतः दार्शनिक क्रांति की अवधि में विज्ञान लेखन प्रभावित हुआ है।

मानव जाति ने अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए धरा, आकाश एवं भूमण्डलीय प्राकृतिक दर्शन का अध्ययन किया। पृथ्वी पर अनेक बुद्धिजीवी, विद्वान महर्षि एवं परिब्राजकों का आविर्भाव तो अवश्य हुआ ही किन्तु वर्चस्व हेतु संघर्ष आरंभ हो गया और फलस्वरूप जन्म दिया रक्त क्रांति को। आत्मरक्षा, प्राप्ति का संरक्षण एवं अहं की तुष्टि युद्ध के कारण माने जा सकते हैं। मल्लयुद्ध से लेकर आधुनिक युग के अणुबम से लड़े जाने वाले युद्ध तक के इतिहास की अपनी एक अलग कहानी है। शारीरिक शक्ति के विकास के साथ ही मनुष्य नए नए अस्त्र शस्त्र की खोज में जुटा रहा। यह एक शुद्ध वैज्ञानिक परंपरा है। यही कारण था कि परशुराम के फरसे को धनुष बाण के सम्मुख कुंठित होना पड़ा।

इस प्रकार 1500 वर्ष ई० पू० के पश्चात् रक्त क्रांति आरंभ हुई और इस अवधि में सैन्य विज्ञान पर अनेक पुस्तकों एवं ग्रन्थों की रचना हुई। महर्षि वाल्मीकि की रामायण, महाभारत का भीष्म पर्व, 300 ई०पू० में रचित कौटिल्य का अर्थशास्त्र, 300-600 ई० में पुराणों में, ऐसी रचनाएँ थीं जिनमें सैन्य विज्ञान सम्बन्धित विवरण प्रचुरता से उपलब्ध है।

प्राचीन ग्रन्थों या उन पर आधारित ग्रन्थो का का यदि गहन अनुशीलन किया जाए तो हमें विज्ञान की ऐसी जानकारियाँ मिलती हैं जो हमारे मनीषियों के वैज्ञानिक ज्ञान की ऊँचाइयों की ओर

संकेत करती हैं। भारतीय महर्षियों ने जो भविष्य की वैज्ञानिक उपलब्धियों की परिकल्पना की थी उसे कथा रूप में गढ़ दिया ताकि जनसामान्य भी उस ज्ञान को प्राप्त कर सके। इस प्रकार रक्त क्रान्ति ने विज्ञान लेखन को प्रभावित किया है।

युद्ध की विभीषिका से त्रस्त समाज शांति की खोज करता है। 'हरित क्रांति' इसी शांति की पहचान है। हरित क्रांति को ही 'कृषि क्रांति' भी कहते हैं। अनादि काल से ही प्राणी जगत और वानस्पतिक जगत में अटूट सम्बन्ध रहा है। इनका अटूट एवं स्वस्थ संबंध ही स्वच्छ पर्यावरण की स्थापना करता है। वनस्पति जीवनीय वस्तु प्रोटीन, वसा एवं शर्करा जैसी प्रधान वस्तुओं तथा लवण एवं जल का संगठित स्वरूप है, जिनके ऊपर सम्पूर्ण प्राणी जगत अपना भरण पोषण करता है। इन तत्वों के भिन्न मात्रा मे संगठित होने से वृक्षों में छः प्रकार (मीठा, अम्ल, नमकीन, कड़ुवा, चटपटा और कषैला) के रस निर्मित होते हैं। वृक्षों के गुणों-अवगुणों तथा मानव शरीर पर इनमें विद्यमान रसों के प्रभाव का अध्ययन किया गया। भारतीय संस्कृति में इन सभी अध्ययन को आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली के अन्तर्गत संजोया गया और इसके अनुरूप निदान एवं उपचार आरंभ हुआ।

चिकित्सा विज्ञान में निष्णात विद्वान होने के लिए आवश्यक है कि निघण्टु (शब्द कोश) का पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया जाए। बिना वनस्पति विज्ञान के वैद्यत्व शोभा नहीं पाता और वह अपने रोगियों तथा प्रेमियों को स्वास्थ्य नहीं प्रदान कर सकता। इस क्षेत्र में भावमिश्र की भावप्रकाश निघण्टु, शालिग्राम की शालिग्राम निघण्टु, धन्वंतरि की धन्वंतरि निघण्टु, शंकरदत्त गौड़ की शंकर निघण्टु उल्लेखनीय हैं।

प्राचीन काल से हमारा आर्थिक एवं सामाजिक जीवन कृषि पर आधारित रहा और भारत कृषि-प्रधान देश रहा है। इस कारण भारतीय साहित्य को देश के प्राचीन कृषि साहित्य की समृद्धशाली परंपरा में कश्यप मुनि की 'कृषि सूक्ति', महर्षि पराशर की 'कृषि पराशरी', शारगंधर ऋषि की 'उपवन विनोद', वराहमिहिर की 'वृहत् संहिता' जैसे गौरव ग्रन्थों की धरोहर प्राप्त है। हिन्दी के उदय एवं मध्यकाल के महत्वपूर्ण ग्रन्थों में 'भड्डरी पुराण', 'पुष्प वाटिका', 'पुष्प मंजरी', 'दौलत बाग विलास' उल्लेखनीय हैं।

पं० वंशीधर जी द्वारा प्रश्नोत्तर शैली में लिखी पुस्तक 'किसानोपदेश' (1870), चौधरी हरि सिंह वर्मा 'कृषि कोश' (1870), राधारमण की 'खेती सार' (1882), बलरामदास की 'किसान विद्या' (1896), दरियाव सिंह की 'कृषि चंद्रिका' (1896), लाल प्रताप सिंह की 'कृषि कौमुदी' (1899), हेमचन्द्र मिश्र की 'वृक्षारोपण प्रणाली' (1990), हेमचन्द्र मिश्र की 'कृषि दर्पण' (1902), पूर्ण सिंह वर्मा की 'आर्ष कृषि विज्ञान' (1916), जागेश्वर प्रसाद की 'कृषि सार' (1917), अश्विनी कुमार शुक्ल की 'कृषि विद्या' (1919) आदि लेखकों ने हरित क्रांति में अपना पूर्ण सहयोग दिया। हरित क्रांति के साथ साथ श्वेत क्रांति का आना भी स्वाभाविक है क्योंकि कृषि और पशुपालन एक दूसरे के पूरक विषय हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् डॉ० उत्तमचन्द्र उपाध्याय, डॉ० कीर्ति सिंह, डॉ० चंद्रिका ठाकुर, डॉ० बच्चन सिंह, डॉ० विन्द्रा प्रसाद खरे, डॉ० मनोदत्त पाठक, डॉ० महातिम सिंह, डॉ० राम कठिन सिंह, डॉ० राम कृपाल पाठक, डॉ० रामकृष्ण पाराशर, डॉ० रामप्रताप सिंह, डॉ० शिवगोपाल मिश्र, डॉ० सूरजभान सिंह, डॉ० हरीश कुमार, डॉ० इन्द्रसेन सिंह, डॉ० उमाशंकर सिंह, डॉ० गिरीश पाण्डेय आदि सैकड़ों लेखकों ने कृषि साहित्य की अभिवृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

कृषि और पशुपालन क्षेत्र प्रगति पर था कि प्रथम विश्वयुद्ध (1914-1918) आरंभ हो गया।

इस प्रकार औद्योगिक क्रांति का श्रीगणेश हो चुका था। अस्त्र-शस्त्रों की ओर वैज्ञानिकों का ध्यान गया तो जनसाधारण को समझाने के लिए अपनी लेखनी उठाई। नए नए हथियार बनाने में प्रतिस्पर्धा हो गई। अनेक आयुधशालाओं का निर्माण कर उनमें नवीनतम टेक्नोलॉजी से अस्त्र शस्त्र बनाने आरंभ हो गए और इनका सहयोग दिया सभी छोटे बड़े उद्योगों ने। द्वितीय विश्वयुद्ध (1939-42) आरंभ हो गया। जिस विज्ञान ने विश्व को प्रगति का मार्ग दिखाया उसी ने 9 अगस्त एवं 16 अगस्त, 1945 को परमाणु बम विस्फोट कर संसार को विनाश के कगार पर खड़ा कर दिया। इस काल में विज्ञान लेखकों ने परमाणु, अणु विस्फोट, रेडियो विकिरण के संबंध में पाठकों को जानकारी दी।

स्वचालित हथियारों, मानवरहित विमानों, अंतरिक्षयानों को नियंत्रित करने के लिए सुदूर नियंत्रण प्रणाली के अनुसंधान पर कार्य हुआ जिसको व्यावहारिक रूप दिया कम्प्यूटर ने। अतः यह एक समय था जब विज्ञान लेखन में परमाणु, परमाणु बम, अंतरिक्ष विज्ञान तथा कम्प्यूटर के विषय में लेखकों ने अपनी सशक्त लेखनी का प्रयोग कर ग्रन्थों का ढेर लगा दिया और आज देश का बच्चा-बच्चा इस ओर ज्ञानवान है।

जितनी विश्व की जनसंख्या बढ़ती गई उतने ही अपराध बढ़ने स्वाभाविक हैं। इसीलिए न्यायालिक विज्ञान पर प्रचुर साहित्य उपलब्ध कराया गया। आयुर्विज्ञान तथा बायोटेक्नोलाजी के क्षेत्र में विज्ञान लेखन किया गया। औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप उद्योग फैक्ट्रियों में वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, रासायनिक प्रदूषण की भयावह स्थिति पैदा हो गई और विज्ञान लेखकों ने भी पर्यावरण प्रदूषण पर अत्यधिक लेख तथा ग्रन्थ लिखकर समाज को इनके दुष्प्रभावों से अवगत कराया। इक्कीसवीं सदी में विज्ञान लेखन के अन्तर्गत सूचना प्रौद्योगिकी की प्रबल संभावनाएँ हैं।

विश्व में औद्योगिक क्रांति के कारण पर्यावरणीय प्रदूषण इतना बढ़ चुका है कि प्रकृति का संतुलन बिगड़ता जा रहा है और इसका नियंत्रण करना सरल कार्य नहीं है। चूँकि औद्योगिक प्रगति को रोक पाना तो सम्भव नहीं अतः हमें उसका विकल्प तलाश करना एवं समाधान निकालना ही होगा।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि वैज्ञानिक क्रांति के अन्तर्गत दार्शनिक क्रांति, रक्त क्रांति, हरित क्रांति, श्वेत क्रांति तथा औद्योगिक क्रांति आदि समायोजित हैं जिन्होंने अनादि काल से विज्ञान लेखन को प्रभावित किया है और भविष्य में भी करती रहेंगी।

5/48, वैशाली
गाजियाबाद-201010 (उत्तर प्रदेश)

भविष्य में विज्ञान लेखन

डॉ० ईश्वर चन्द्र शुक्ल एवं
उमेश कुमार शुक्ल

वर्तमान शताब्दी वैज्ञानिक उन्नति की पराकाष्ठा मानी जाएगी। इस शताब्दी में सूचना प्रौद्योगिकी, कम्प्यूटर ज्ञान, अंतरिक्ष विज्ञान, सागर तलीय खोज, अन्तर्ग्रहीय संचार, भूमि विज्ञान आदि पर विशेष अनुसंधान होने की पूर्ण संभावना है। साथ ही साथ मानव मस्तिष्क की कार्यपद्धति को समझने तथा उसके विकास के क्षेत्र में भी आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त होगी। आयुर्विज्ञान के क्षेत्र में शोधकार्य सम्भवतः इतना परिपूर्ण होगा कि इसके पहले इतनी उपलब्धि कभी नहीं थी। आनुवांशिक अभियांत्रिकी द्वारा पेड़ पौधे ही नहीं, पशुओं एवं मनुष्यों के गुणधर्म को भी प्रभावित किया जाएगा। यह भी संभव होगा कि जन्तुओं एवं वनस्पतियों के प्राकृतिक गुणों में उल्लेखनीय परिवर्तन कर दिया जाए। यह शताब्दी वास्तव में वैज्ञानिक क्रांति की शताब्दी होगी जिसका इतिहास में कोई उल्लेख नहीं मिलेगा। विश्व में एक देश से दूसरे देश की दूरियाँ इतनी कम हो जाएँगी कि पूरा विश्व एक परिवार की तरह लगने लगेगा। ऐसी स्थिति में वैज्ञानिक लेखकों के समक्ष अनेक समस्याएँ होंगी। विशेषतः जो लेखक क्षेत्रीय भाषा में वैज्ञानिक चिन्तन को जन साधारण के लिए प्रस्तुत करना चाहेंगे उनकी समस्याएँ और भी बढ़ जाएँगी। यदि हम लेखन को भारतीय परिवेश में हिन्दी लेखन तक सीमित रखें तो यह समस्या अत्यन्त विकट हो जाएगी। इस समय विश्व में जो शोधकार्य हो रहा है उसी देश की भाषा में हो रहा है। कुछ देश इतने सजग हैं कि वे विदेशी भाषा में हुए शोधकार्य को स्वदेशी भाषा में तुरन्त परिवर्तित कर लेते हैं। यदि कहा जाए कि भारत के अतिरिक्त अन्य देश अपना शोधकार्य अपनी ही भाषा में प्रकाशित एवं प्रसारित करते हैं तो अनुचित नहीं होगा। ऐसे देशों की श्रेणी में फ्रान्स, जापान, जर्मनी, साम्यवादी देश तथा सर्वाधिक यूरोपीय देश आते हैं। हमारे देश में दूसरी भाषाओं में हुए शोधकार्य को हिन्दी में परिवर्तित करने हेतु कोई साधन सुलभ नहीं है। इतना ही नहीं, नवीन शोध कार्यों के बारे में ज्ञान भी अति विलम्ब से होता है। सर्वप्रथम हिन्दी लेखकों को उस समय की प्रतीक्षा करनी पड़ती है जब तक कि आंग्ल भाषा के अतिरिक्त किसी अन्य भाषा में किए गए शोधकार्य की जानकारी आंग्ल भाषा में न उपलब्ध हो जाए। इसके उपरान्त आंग्ल भाषा में प्राप्त ज्ञान का अनुवाद हिन्दी में किया जाता है। इस वैज्ञानिक चिन्तन को सरल भाषा में जनमानस तक पहुँचाने में भी अधिक समय लग जाता है। इस प्रकार मौलिक वैज्ञानिक शोध हिन्दी भाषा में आने तक आधुनिक नहीं रह जाता अतः हिन्दी वैज्ञानिक लेखकों की यह मुख्य समस्या होगी कि अत्याधुनिक शोधकार्य को शीघ्रातिशीघ्र जनमानस तक पहुँचाया जा सके। इसके लिए उन्हें न्यूनतम सुविधा इन्टरनेट की आवश्यकता होगी।

मानव विज्ञान से जुड़े शोधकार्य जनमानस तक पहुँच ही नहीं पाते। इसके लिए पहली कठिनाई तो विदेशों में हुए शोधकार्य की भारत में जानकारी विलम्ब से प्राप्त होना है। यह जानकारी सर्वप्रथम आंग्ल भाषा में आती है और आंग्लभाषी विद्वानों तक ही सीमित रह जाती है। अधिकतर

विषय विशेषज्ञ हिन्दी नहीं जानते। अतः उनका ज्ञान कुछ लोगों तक सीमित रहता है। इस ज्ञान को जन मानस तक ले जाने के लिए उपयुक्त हिन्दी लेखकों की आवश्यकता पड़ती है। सामान्य हिन्दी लेखकों की अधिकांशतः साधनहीनता होती है अतः वो किसी नई जानकारी को जनमानस तक पहुँचाने में या तो असमर्थ रहते हैं या अत्यन्त विलंब से कर पाते हैं। आयुर्विज्ञान के क्षेत्र में बदलते हुए नामकरण भी समस्या पैदा करते हैं क्योंकि मूल अंग्रेजी शब्द का हिन्दी में अनुवाद होने में ही अधिक समय व्यतीत होता है। इसी प्रकार की कठिनाई अभियांत्रिकी क्षेत्र में भी देखी जाती है। वास्तव में अभियांत्रिकी में हिन्दी शब्दावली का त्वरित विकास अत्यन्त आवश्यक होगा।

जैसा कि बताया जा चुका है कि कम्प्यूटर ज्ञान इस शताब्दी की सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपलब्धि होगी। इसके लिए हिन्दी भाषा में कोई व्यवस्था नहीं है। सभी जानकारियाँ विदेशी भाषाओं में हैं जो दुरूह एवं अनुपलब्ध हैं। ऐसी स्थिति में एक राष्ट्रीय नीति बनानी पड़ेगी जिसके अन्तर्गत कम्प्यूटर ज्ञान को अपने मूल रूप में हिन्दी भाषा में उपलब्ध कराया जा सके। इसके उपरान्त उन विशेषज्ञों की आवश्यकता होगी जो इस तकनीकी को जनमानस तक ले जाने में सहयोग कर सकें।

आजकल के विकसित बीज, फलों, शाक-सब्जियों की उन्नतिशील किस्में सभी पर शोध कार्य किया जा रहा है लेकिन इसकी जानकारी जनमानस तक नहीं पहुँचती। इस क्षेत्र में केवल वैज्ञानिक लेखन से समस्या का समाधान नहीं होगा। आवश्यकता इसकी भी पड़ेगी कि उस ज्ञान को कृषि कार्य से जुड़े लोगों तक कैसे पहुँचाया जाए। इस कार्य के लिए एक विधान यह हो सकता है कि वैज्ञानिक अथवा कृषि प्रसारकर्ता ग्रामीण क्षेत्रों में जाकर कृषि सम्बन्धित जानकारी कृषकों को उपलब्ध कराए। दूसरा विधान यह भी हो सकता है कृषकों को किसी एक स्थान पर बुलाकर एक वर्ष में कम से कम चार बार इस बात का प्रशिक्षण दिया जाए कि आधुनिक कृषि शोध से उनके उत्पाद एवं उसकी गुणवत्ता में कैसे सुधार हो सकता है। अतः इस बात की आवश्यकता होगी कि वैज्ञानिक एवं कृषक दोनों की बीच की दूरी कम की जाए तथा उनमें आपसी सामंजस्य स्थापित किया जाए।

कृषि से संबंधित दूसरी समस्या है कीटनाशकों एवं रासायनिक उर्वरकों के अनुपयुक्त प्रयोग की। बिना पूर्ण जानकारी के, आवश्यकता से अधिक रासायनिक उर्वरक भूमि की उपजाऊ शक्ति को नष्ट कर रहे हैं। इसी प्रकार कीटनाशकों का उपयोग भी पर्यावरण को प्रदूषित कर रहा है। वैज्ञानिक चेतना जागृत करने हेतु इस ओर केवल थोड़ा सा ही प्रयास करना होगा। दूरदर्शन, आकाशवाणी अथवा प्रशिक्षित ग्रामसेवकों द्वारा उचित जानकारी से ही अपेक्षित लाभ प्राप्त हो सकेगा।

अतः इक्कीसवीं शताब्दी में क्षेत्रीय भाषाओं द्वारा वैज्ञानिक चिंतन को जनमानस तक पहुँचाने के लिए आवश्यकता होगी कुशल वैज्ञानिकों, संचार माध्यमों, आधुनिक उपकरणों तथा स्वयंसेवकों की। मेरे विचार से यह कार्य प्रदेशीय या राष्ट्रीय स्तर पर ही किया जा सकता है। प्रत्येक क्षेत्र में कुछ स्थल निर्मित किए जाएँ जहाँ पर सभी आवश्यक जानकारी उतनी ही शीघ्रता से मिल सके जितनी कि नगरों में मिलती है। इक्कीसवीं शताब्दी के विज्ञान लेखकों की यही मुख्य आवश्यकता होगी।

रसायन विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)

राष्ट्रीय संगोष्ठी

संस्तुतियाँ

1. स्थानीय समस्याओं से संबंधित वैज्ञानिक तकनीकी लेख स्थानीय लोगों के लिए स्थानीय भाषा में स्थानीय वैज्ञानिक लेखकों द्वारा लिखे जाएँ और स्थानीय उपलब्ध माध्यमों द्वारा उनका प्रचार-प्रसार किया जाए।

2. वैज्ञानिकों और लोकप्रिय विज्ञान लेखकों के बीच आपसी साझेदारी/समन्वय बढ़ाने के लिए व्यावहारिक स्तर पर ठोस प्रयास किए जाएँ।

3. विभिन्न कारणों से पैदा होने वाले पारिस्थितिकी असंतुलन से उत्पन्न खतरों के प्रति जनमानस में जागरूकता पैदा करने के लिए विज्ञान लेखकों की भागीदारी को अधिक सक्रिय बनाया जाए।

4. ऐसे विज्ञान केन्द्रों की स्थापना की जाए जहाँ से विज्ञान लेखकों को सामयिक विषयों पर जानकारी यथाशीघ्र मिल सके।

5. कम्प्यूटर तथा इससे जुड़ी ऐसी सभी समस्याओं का निराकरण करने हेतु ठोस प्रयास किए जाएँ जिनसे लोकप्रिय विज्ञान लेखकों को सुविधाएँ हों।

६. विज्ञान लेखकों के लिए सतत् शिक्षण/प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाए ताकि वे तेजी से बदलती हुई परिस्थितियों का सामना करते हुए अपना कार्य सुचारु रूप से कर सकें।

७. जैव संपदा एवम् जैव प्रौद्योगिकी से संबंधित बौद्धिक संपदा अधिकारों के संरक्षण के लिए यथोचित सूचनाएँ एकत्रित करके संबंधित पक्षों तक पहुँचाने की व्यवस्था की जाए।